Drishti IAS

Mains MARATHON

(मुख्य परीक्षा के लिये महत्त्वपूर्ण प्रश्न-उत्तर) 2024

भारतीय राजव्यवस्था

Delhi
Drishti IAS,
641, Mukherjee Nagar,
Opp. Signature View
Apartment, New Delhi

New Delhi
Drishti IAS,
21, Pusa Road,
Karol Bagh
New Delhi

Uttar Pradesh
Drishti IAS,
Tashkent Marg,
Civil Lines, Prayagraj,
Uttar Pradesh

Rajasthan
Drishti IAS,
Tonk Road,
Vasundhra Colony,
Jaipur, Rajasthan

Madhya Pradesh
Drishti IAS,
Building No. 12, Vishnu Puri,
Main AB Road,
Bhawar Kuan, Indore,
Madhya Pradesh

भारतीय राजव्यवस्था

Q1. भारत में नागरिकों के मूल अधिकारों के संरक्षण में न्यायपालिका की क्या भूमिका है? उदाहरणों सहित चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- इस संदर्भ में संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- मूल अधिकारों के संरक्षण में न्यायपालिका की भूमिका पर चर्चा कीजिये और इस दिशा में हुए कुछ ऐतिहासिक फैसलों का उदाहरण दीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:
- भारत में न्यायपालिका, नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत के संविधान के भाग III (अनुच्छेद 12 से 35) के तहत नागरिकों को मूल अधिकारों की गारंटी प्राप्त है। न्यायपालिका (विशेष रूप से सर्वोच्च न्यायालय) इन मूल अधिकारों की अंतिम रक्षक और व्याख्याकार है।

मुख्य भाग:

मूल अधिकारों के संरक्षण में न्यायपालिका की भूमिका:
- न्यायपालिका विभिन्न माध्यमों जैसे रिट, जनहित याचिका (PIL) और न्यायिक समीक्षा के माध्यम से मूल अधिकारों की रक्षा करती है।
- **संविधान की व्याख्या करना और इसे लागू करना:**
  - न्यायपालिका संविधान की व्याख्या करने और इसे लागू करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो देश के सर्वोच्च कानून के रूप में कार्य करता है और मूल अधिकारों को संरक्षण प्रदान करता है।
  - न्यायपालिका को मूल अधिकारों सहित संवैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करने वाले कानूनों या सरकारी कार्यों को रद्द करने का अधिकार होता है।
- **मूल अधिकारों के उल्लंघन के संदर्भ में उपचार प्रदान करना:**
  - न्यायपालिका मूल अधिकारों के उल्लंघन के लिये उपचार भी प्रदान करती है, जिसमें बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, और उत्प्रेषण जैसी रिट जारी करना शामिल है, जिसका उपयोग लोगों को गैरकानूनी हिरासत से बचाने, सरकारी कार्रवाई पर सीमा लगाने या अधीनस्थ न्यायालयों के फैसलों की समीक्षा करने के लिये किया जा सकता है।
  - न्यायपालिका उन व्यक्तियों को राहत प्रदान कर सकती है जिनके मूलअधिकारों का उल्लंघन किया गया है।
- **अल्पसंख्यकों और सीमांत समूहों की रक्षा करना:**
  - न्यायपालिका ऐसे अल्पसंख्यकों और सीमांत समूहों के अधिकारों की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो विशेष रूप से मूल अधिकारों के उल्लंघन के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं।
  - उदाहरण के लिये न्यायपालिका उन कानूनों या सरकारी कार्रवाइयों को रद्द कर सकती है जिनसे जाति, धर्म या मूल अधिकारों के प्रावधानों द्वारा संरक्षित अन्य विशेषताओं का उल्लंघन होता हो।
- **अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों को बनाए रखना:**
  - मूल अधिकारों के प्रावधानों की व्याख्या करते समय न्यायपालिका अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों और संधियों का सहारा ले सकती है।
  - इससे उन व्यक्तियों के लिये अतिरिक्त सुरक्षा मिल सकती है जिनके मूल अधिकारों के उल्लंघन होने का अधिक खतरा है।
- **सरकार पर एक स्वतंत्र जाँच तंत्र के रूप में कार्य करना:**
  - न्यायपालिका सरकार की शक्ति पर एक स्वतंत्र जाँच तंत्र के रूप में कार्य करती है, यह सुनिश्चित करती है कि कार्यकारी और विधायी शाखाएँ अपने संवैधानिक अधिकारों का अतिक्रमण न करें और मूलअधिकारों का उल्लंघन न करें।

ऐसे उदाहरण जहाँ न्यायपालिका द्वारा मूल अधिकारों की रक्षा की गई है:
- न्यायपालिका ने ऐसे कई ऐतिहासिक निर्णय दिये हैं जिन्होंने मूल अधिकारों की सुरक्षा को मजबूत किया है जैसे केशवानंद भारती मामला (इसने संविधान के मूल ढाँचे के सिद्धांत को स्थापित किया), पुट्टास्वामी मामला (निजता के अधिकार से संबंधित)।
  - **NALSA मामला:**
    - न्यायपालिका ने राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) बनाम भारत संघ मामले (वर्ष 2014) जैसे निर्णयों के माध्यम से हाशिये पर स्थित समुदायों, जैसे कि ट्रांसजेंडर समुदाय के अधिकारों की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिसमें ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को तीसरे लिंग के रूप में मान्यता देने के साथ कानून के तहत उन्हें समान अधिकार और सुरक्षा प्रदान करना शामिल है।

- **श्रेया सिंघल मामला:**
  - न्यायपालिका ने श्रेया सिंघल मामले (वर्ष 2015) जैसे ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की भी रक्षा की है, जिसमें सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 66A को रद्द कर दिया गया था, जिसका उपयोग इंटरनेट पर भाषण की स्वतंत्रता को सीमित करने के लिये किया गया था।

निष्कर्ष:

- मूल अधिकारों की रक्षा में न्यायपालिका की भूमिका भारत के लोकतांत्रिक ताने-बाने को बनाए रखने के लिये महत्त्वपूर्ण है। नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिये न्यायपालिका की स्वतंत्रता, निष्पक्षता और सक्रियता आवश्यक है।
- न्यायपालिका को यह सुनिश्चित करने के लिये मूल अधिकारों की प्रगतिशील तरीके से व्याख्या करना जारी रखना चाहिये कि संविधान नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिये प्रासंगिक और प्रभावी बना रहे।

Q2. भारत में सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के क्रम में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के महत्त्व पर चर्चा कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के बारे में संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के महत्त्व की चर्चा कीजिये।
- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम की कुछ चुनौतियों का भी उल्लेख कीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (NFSA) को वर्ष 2013 में समाज के सबसे कमजोर वर्गों को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया था। इस अधिनियम को भारत में सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम के रूप में देखा जाता है।

मुख्य भाग:

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम का महत्त्व:

- **कवरेज:**
  - NFSA द्वारा 67% आबादी (ग्रामीण क्षेत्रों में 75% और शहरी क्षेत्रों में 50%) को सब्सिडी वाले खाद्यान्न प्रदान किये जाते हैं।
  - यह अधिनियम भोजन के अधिकार को एक कानूनी अधिकार के रूप में मान्यता देता है और इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कोई भी व्यक्ति भूखा न रहे।
- **महिलाओं और बच्चों को पोषण संबंधी सहायता प्रदान करना:**
  - भारत में NFSA, भूख और कुपोषण को कम करने में सहायक रहा है। खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार, भारत में कुपोषित लोगों का प्रतिशत वर्ष 1990-92 के 23.8% से घटकर वर्ष 2015-17 में 14.8% रह गया है।
- **महिला सशक्तिकरण:**
  - इस अधिनियम द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत खाद्यान्न प्राप्त करने के उद्देश्य से महिलाओं को घरों का मुखिया बनाकर उन्हें सशक्त बनाया है।
- **भ्रष्टाचार में कमी लाना:**
  - NFSA सार्वजनिक वितरण प्रणाली में भ्रष्टाचार को कम करने और यह सुनिश्चित करने में सफल रहा है कि खाद्यान्न लक्षित लाभार्थियों तक पहुँचे।
- **खाद्य सुरक्षा भत्ता प्रदान करना:**
  - इसमें खाद्यान्न या भोजन की आपूर्ति न होने की स्थिति में पात्र लोगों को खाद्य सुरक्षा भत्ता देने का प्रावधान है।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम की चुनौतियाँ:

- **लाभार्थियों की पहचान:**
  - NFSA के तहत निष्पक्ष और पारदर्शी प्रक्रिया के माध्यम से लाभार्थियों की पहचान का प्रावधान किया गया है, लेकिन कार्यान्वयन के स्तर पर विभिन्न राज्यों में असमानता है।
  - इसमें पात्र परिवारों को लाभ से बाहर रखने और अपात्र परिवारों को इसमें शामिल करने से संबंधित मामले देखे गए हैं।
- **खरीद और वितरण:**
  - इस अधिनियम में सब्सिडी दरों पर लाभार्थियों को खाद्यान्न वितरण करने में सरकार की आवश्यकता पर बल दिया गया है।
  - हालाँकि सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) की दक्षता और आपूर्ति श्रृंखला में भ्रष्टाचार को लेकर चिंताएँ बनी रहती हैं।
- **खाद्यान्न की गुणवत्ता:**
  - सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत खराब-गुणवत्ता वाले अनाज वितरित किये जाने की खबरें आई हैं, जिससे लाभार्थियों को स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ हो सकती हैं।
- **वित्तपोषण:**
  - केंद्र सरकार द्वारा इसके कार्यान्वयन हेतु धन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा प्रदान किया जाता है लेकिन राज्यों को भी इसमें योगदान देना होता है।

- कुछ राज्यों द्वारा अपने हिस्से के धन को देने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

निष्कर्ष:

NFSA ने समाज के सबसे कमजोर वर्गों को सब्सिडी वाले खाद्यान्न प्रदान करके भारत में सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस अधिनियम द्वारा भूख और कुपोषण को कम करने में सफलता मिली है लेकिन इसके कवरेज का विस्तार करने और इससे वंचित पात्र लोगों को इसमें शामिल करने की आवश्यकता है।

Q3. लोकतंत्र पर सोशल मीडिया के प्रभाव तथा भारत में ऑनलाइन सामग्री के नियमन के क्रम में इससे उत्पन्न होने वाली चुनौतियों पर चर्चा कीजिये। सोशल मीडिया को विनियमित करने के लिये सरकार द्वारा उठाए गए कदमों का विश्लेषण करने के साथ जवाबदेहिता सुनिश्चित करने की आवश्यकता एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बीच संतुलन स्थापित करने के उपायों का सुझाव दीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- सोशल मीडिया के बारे में संक्षेप में बताते हुए लोकतंत्र पर इसके प्रभावों के बारे में बताइए।
- भारत में ऑनलाइन सामग्री को विनियमित करने की चुनौतियों को बताते हुए इस दिशा में सरकार द्वारा उठाए गए कदमों का उल्लेख कीजिये।
- जवाबदेहिता सुनिश्चित करने की आवश्यकता के साथ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को संतुलित करने के उपाय बताइए।
- समग्र निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- सोशल मीडिया का लोकतंत्र पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह से महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। एक ओर सोशल मीडिया ने सूचना की उपलब्धता और पहुँच में वृद्धि की है तथा व्यक्तियों को राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने और अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों को जवाबदेह ठहराने में सक्षम बनाया है। इसके साथ ही इसने उपेक्षित समुदायों के लिये अपनी राय व्यक्त करना और बदलाव के लिये एकजुट होना भी आसान बना दिया है।
- दूसरी ओर सोशल मीडिया ने लोकतंत्र के लिये चुनौतियाँ भी पेश की हैं, जैसे कि गलत सूचना का प्रसार, अभद्र भाषा और प्रचार, जिससे जनमत का ध्रुवीकरण होने के साथ लोकतांत्रिक संस्थान कमज़ोर हो सकते हैं।

मुख्य भाग:

- **निम्नलिखित तरीकों से सोशल मीडिया ने लोकतंत्र को प्रभावित किया है:**
  - **नागरिकों के एकीकरण में वृद्धि होना:** सोशल मीडिया से राजनीतिक प्रक्रिया में नागरिकों के एकीकरण को बढ़ावा मिला है और इसने व्यक्तियों के लिये अपनी राय व्यक्त करना तथा अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को जवाबदेह बनाना आसान बना दिया है। ट्विटर और फेसबुक जैसे प्लेटफार्मों ने नागरिकों को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के साथ सीधे संवाद करने एवं बहस में भाग लेने हेतु सहायता प्रदान की है।
  - **सूचना का लोकतांत्रीकरण होना:** सोशल मीडिया ने सूचना तक पहुँच का लोकतांत्रीकरण किया है, जिससे लोगों को विभिन्न स्रोतों से सूचना तक पहुँच प्राप्त होती है। इससे वंचित समुदायों को आवाज़ उठाना तथा लोक प्रक्रिया में भाग लेना आसान हो गया है।
  - **अपनी विचारधाराओं को प्रसारित करना:** सोशल मीडिया पर व्यक्तियों को केवल उन विचारों और सूचनाओं से अवगत कराना जो उनके मौजूदा विश्वासों के अनुरूप होते हैं,से दृष्टिकोण और ध्रुवीकरण के संदर्भ में संकीर्णता को बढ़ावा मिल सकता है, जिससे व्यक्ति अपनी मान्यताओं में अधिक सीमित हो जाते हैं तथा अलग-अलग विचार रखने वालों के साथ रचनात्मक संवाद में संलग्न होने की इनकी संभावना कम हो जाती है।
  - **गलत सूचनाओं का प्रसार होना:** सोशल मीडिया ने गलत सूचनाओं को तेजी से और व्यापक रूप से प्रसारित करना आसान बना दिया है। लोकतंत्र के लिये इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं, क्योंकि झूठी सूचना से लोकतांत्रिक संस्थानों में लोगों के विश्वास में कमी आ सकती है।
- **भारत में ऑनलाइन सामग्री के नियमन के क्रम में सोशल मीडिया द्वारा उत्पन्न चुनौतियाँ:**
  - सोशल मीडिया पर विषय-वस्तु की निगरानी और विनियमन करना मुश्किल हो जाता है।
  - सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर लोग पहचान छुपाकर अभद्र भाषा एवं अनुचित विषय-वस्तु के प्रसार में संलग्न हो सकते हैं।
  - निर्णय लेने की प्रक्रियाओं और विषय-वस्तु के मॉडरेशन से संबंधित नीतियों में सोशल मीडिया प्लेटफार्मों की पारदर्शिता और जवाबदेहिता का अभाव है।
  - अलग-अलग विचारों और व्यक्तिपरक मानदंडों के कारण हानिकारक विषय-वस्तु का निर्धारण करने में कठिनाई होती है।
  - भारत के बाहर से प्रसारित होने वाली विषय-वस्तु को विनियमित करने में कठिनाई होती है।

- निष्पक्ष, पारदर्शी और जवाबदेह विषय-वस्तु मॉडरेशन सुनिश्चित करने के क्रम में एक स्वतंत्र निरीक्षण तंत्र का अभाव बना हुआ है।
- विषय-वस्तु मॉडरेशन निर्णयों में राजनीतिक पूर्वाग्रह की संभावना के बारे में चिंताएँ रहती हैं।

- **भारत सरकार ने जवाबदेहिता सुनिश्चित करने की आवश्यकता एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बीच संतुलन स्थापित करने हेतु सोशल मीडिया प्लेटफार्मों को विनियमित करने के लिये कई कदम उठाए हैं जैसे:**
  - **सूचना प्रौद्योगिकी (मध्यवर्ती दिशा-निर्देश एवं डिजिटल मीडिया आचार संहिता) नियम, 2021** के तहत नए नियमों को लाया गया है। इन नियमों में शिकायत अधिकारियों को नियुक्त करने और 24 घंटे के अंदर हानिकारक विषय-वस्तु से संबंधित शिकायतों को दूर करने के लिये तंत्र स्थापित करने हेतु सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया है।
  - सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के लिये भारत में भौतिक उपस्थिति होना एवं कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ 24X7 समन्वय हेतु एक नोडल अधिकारी नियुक्त करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।
  - इसके तहत ऑनलाइन क्यूरेटेड सामग्री प्रदाताओं के लिये दिशानिर्देश निर्धारित किये गए हैं जिसमें डिजिटल समाचार पोर्टल और स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म शामिल हैं।
- **जवाबदेहिता सुनिश्चित करने की आवश्यकता एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बीच संतुलन स्थापित करने हेतु कुछ कदम उठाए जा सकते हैं जैसे:**
  - नागरिक समाज, शिक्षा जगत और सरकार के हितधारकों के परामर्श से सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर हानिकारक सामग्री के नियमन के लिये स्पष्ट और वस्तुनिष्ठ मानदंड स्थापित करना चाहिये।
  - पारदर्शी और जवाबदेह निर्णय लेने हेतु एक मंच प्रदान करने के लिये नागरिक समाज, शिक्षाविदों और सरकार के प्रतिनिधियों के संगठन से स्वतंत्र निरीक्षण तंत्र बनाया जाना चाहिये।
  - मीडिया साक्षरता के साथ इस संदर्भ में जागरूकता बढ़ाने वाली पहलों पर बल देना चाहिये। इसमें ऐसे अभियान शामिल हो सकते हैं जो जवाबदेह ऑनलाइन व्यवहार को प्रोत्साहित करते हैं और गलत सूचना तथा अभद्र भाषा के प्रसार को हतोत्साहित करते हैं।
  - हानिकारक विषय-वस्तु को हटाने के लिये स्पष्ट मानदंड की स्थापना सहित पारदर्शी और जवाबदेह सामग्री मॉडरेशन नीतियों को अपनाने के लिये सोशल मीडिया कंपनियों को प्रोत्साहित करना चाहिये।
  - ऑनलाइन विषय-वस्तु के विनियमन से संबंधित मुद्दों की पहचान करने और उन्हें हल करने के लिये सोशल मीडिया कंपनियों, नागरिक समाज, शिक्षाविदों और सरकार के बीच खुले संवाद और समन्वय की संस्कृति को बढ़ावा देना चाहिये।

निष्कर्ष:

सोशल मीडिया के माध्यम से सूचनाओं को गलत तरीके से प्रसारित करने की समस्या से भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ा है। सरकार ने सोशल मीडिया को विनियमित करने के लिये कई कदम उठाए हैं लेकिन सेंसरशिप और भाषण की स्वतंत्रता के संदर्भ में चिंता बनी हुई है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व को संतुलित करने के क्रम में एक स्वस्थ डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र हेतु स्पष्ट मानदंड के साथ सोशल मीडिया का जिम्मेदार उपयोग सुनिश्चित करना महत्त्वपूर्ण है। अंततः ये उपाय भारत में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर हानिकारक सूचनाओं से संबंधित समस्याओं को हल करने तथा पारदर्शिता एवं जवाबदेहिता को बढ़ावा देने में सहायक हो सकते हैं।

Q4. भारत के संघीय ढाँचे पर महामारी के प्रभावों का विश्लेषण करते हुए इस संकट से निपटने में केंद्र और राज्यों के समक्ष आने वाली चुनौतियों पर चर्चा कीजिये। महामारी के दौरान अंतर-सरकारी समन्वय को मज़बूत करने हेतु सरकार द्वारा किये गए उपायों पर चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- महामारी और उसके प्रभाव के बारे में एक संक्षिप्त परिचय दीजिये।
- राष्ट्र के संघीय ढाँचे पर महामारी के प्रभाव और केंद्र तथा राज्य, दोनों सरकारों के समक्ष इस संदर्भ में आई चुनौतियों का विश्लेषण कीजिये।
- महामारी के दौरान अंतर-सरकारी समन्वय को मज़बूत करने के लिये सरकार द्वारा किये गए उपायों का उल्लेख कीजिये।
- एक समग्र और उचित निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:
- कोविड-19 महामारी का भारत के संघीय ढाँचे पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है, जिससे केंद्र सरकार और राज्यों के बीच शक्ति संतुलन प्रभावित हुआ है। इस संकट से निपटने में केंद्र और राज्यों के समक्ष कई चुनौतियाँ उत्पन्न हुईं और देश के विभिन्न क्षेत्रों में इसकी गंभीरता में भिन्नता थी।

मुख्य भाग:

देश के संघीय ढाँचे पर इस महामारी का प्रभाव:
- भारत के संघीय ढाँचे पर महामारी के सबसे महत्त्वपूर्ण प्रभावों में से एक नीति निर्माण और निर्णय लेने में केंद्र सरकार की बढ़ती भूमिका

रही है। आवश्यक चिकित्सा आपूर्ति, टीके और वित्तीय सहायता के वितरण सहित महामारी के लिये राष्ट्रीय प्रतिक्रिया के समन्वय हेतु केंद्र सरकार जिम्मेदार होती है। इससे केंद्र और राज्यों के बीच कुछ तनाव पैदा हुआ, क्योंकि कुछ राज्यों ने महसूस किया है कि केंद्र सरकार ने महामारी से निपटने के उनके प्रयासों में उनका समर्थन करने के लिये पर्याप्त कार्य नहीं किया है।

- महामारी ने देश के विभिन्न क्षेत्रों के बीच मौजूदा असमानताओं को भी उजागर किया है (विशेष रूप से स्वास्थ्य सेवा और आर्थिक अवसरों तक पहुँच के मामले में)। स्वास्थ्य सेवा के बुनियादी ढाँचे में उच्च स्तर के निवेश, अधिक विविध अर्थव्यवस्था और बेहतर शासन जैसे कारकों के कारण कुछ राज्य, दूसरों की तुलना में महामारी से निपटने हेतु बेहतर ढंग से सुसज्जित हैं। इसके साथ केंद्र सरकार द्वारा कुछ राज्यों को दूसरों की तुलना में अधिक सहायता प्रदान की गई।
- भारत के संघीय ढाँचे पर महामारी का एक और प्रभाव, निर्णय लेने और शासन के विकेंद्रीकरण में वृद्धि का रहा है। इस दौरान राज्यों को अपनी सीमाओं के अंदर महामारी के प्रबंधन के लिये बड़ी ज़िम्मेदारी लेनी पड़ी, जिसमें लॉकडाउन लागू करना, स्वास्थ्य सेवा प्रणाली का प्रबंधन करना और टीकों का वितरण करना शामिल है। यह कुछ राज्यों के लिये एक महत्त्वपूर्ण चुनौती रही (विशेष रूप से कमज़ोर स्वास्थ्य सुविधाओं या सीमित वित्तीय संसाधनों वाले राज्यों के लिये)।

भारत सरकार ने कोविड-19 महामारी के दौरान अंतर-सरकारी समन्वय को मज़बूत करने के लिये कई उपाय किये जैसे:

- **राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम (NDMA):** NDMA को केंद्र सरकार द्वारा महामारी के संदर्भ में देश की प्रतिक्रिया को समन्वित करने के लिये लागू किया गया था। इस अधिनियम ने राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (NDMA) को कोविड-19 के प्रसार को रोकने हेतु कदम उठाने का अधिकार प्रदान किया।
- **अधिकार प्राप्त समूहों का गठन करना:** केंद्र सरकार ने राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों के सहयोग से विभिन्न क्षेत्रों जैसे चिकित्सा बुनियादी ढाँचे, रसद और सूचना प्रबंधन में समन्वय के लिये अधिकार प्राप्त समूहों का गठन किया। इन समूहों ने राज्यों को दिशानिर्देश प्रदान करने के साथ यह सुनिश्चित किया कि वे उनका पालन कर रहे हैं।
- **नियमित वीडियो कॉन्फ्रेंस किया जाना:** भारत के प्रधानमंत्री ने नियमित रूप से सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों के मुख्यमंत्रियों के साथ राज्यों में महामारी की स्थिति पर चर्चा करने के लिये वीडियो कॉन्फ्रेंस किया। इसने केंद्र सरकार को राज्यों के समक्ष आने वाली चुनौतियों को समझने और उन्हें आवश्यक सहायता प्रदान करने हेतु प्रेरित किया।
- **वित्तीय सहायता:** केंद्र सरकार ने कोविड-19 संबंधित गतिविधियों के लिये राज्य आपदा प्रतिक्रिया कोष (SDRF) और राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष (NDRF) के तहत राज्यों को वित्तीय सहायता प्रदान की। सरकार ने महामारी से प्रभावित विभिन्न क्षेत्रों को राहत देने के लिये 20 लाख करोड़ के आर्थिक पैकेज की भी घोषणा की।
- **वस्तुओं और लोगों की अंतर्राज्यीय आवाजाही:** केंद्र सरकार ने महामारी के दौरान आवश्यक वस्तुओं और लोगों की अंतर्राज्यीय आवाजाही का समन्वय किया। ऐसा विभिन्न राज्यों में वस्तुओं और लोगों की आवाजाही के लिये मानक संचालन प्रक्रिया (SOPs) और दिशानिर्देश जारी करके किया गया था।
- **टीका वितरित किया जाना:** केंद्र सरकार ने देश भर में टीकों के वितरण का समन्वय किया और वैक्सीनेशन अपॉइंटमेंट्स को रजिस्टर और शेड्यूल करने के लिये CoWIN नामक एक डिजिटल प्लेटफॉर्म भी बनाया। इसके साथ ही राज्यों को उनकी आबादी और हेल्थकेयर वर्कर्स एवं फ्रंटलाइन वर्कर्स की संख्या के आधार पर वैक्सीन का वितरण किया गया।

निष्कर्ष:

महामारी ने भारत में केंद्र और राज्यों, दोनों के समक्ष चुनौतियाँ खड़ी कर दी। सरकार ने इस संदर्भ में अंतर-सरकारी समन्वय को मजबूत करने के उपाय किये हैं लेकिन इस दिशा में अभी भी सुधार की गुंजाइश है। न्यायसंगत समाज के निर्माण हेतु संघीय ढाँचे को मज़बूत करना तथा मौजूदा असमानताओं को दूर करना महत्त्वपूर्ण है।

Q5. विदेश नीति के उद्देश्यों, क्षेत्रीय स्थिरता और आर्थिक हितों के संदर्भ में खाड़ी देशों के साथ भारत के संबंधों के महत्त्व पर चर्चा कीजिये। खाड़ी देशों के साथ अपने संबंधों को मज़बूत करने के लिये भारत द्वारा अपनाई गई रणनीतियों पर प्रकाश डालिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- भारत के लिये खाड़ी देशों के महत्त्व को बताते हुए अपना उत्तर प्रारंभ कीजिये।
- खाड़ी देशों के लिये भारत की विदेश नीति के उद्देश्यों और खाड़ी देशों के साथ संबंध बढ़ाने के लिये भारत द्वारा उठाए गए कदमों का वर्णन कीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- खाड़ी देशों के साथ भारत के संबंध रणनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण हैं जो विदेश नीति के उद्देश्यों, क्षेत्रीय स्थिरता और आर्थिक हितों को बढ़ावा देते हैं। इस क्षेत्र में रहने वाले नौ मिलियन से अधिक भारतीयों

के साथ यह आपसी विकास में योगदान देते हैं। खाड़ी क्षेत्र, ऊर्जा का एक प्रमुख स्रोत है जिसकी भारत के लगभग एक-तिहाई तेल आयात और काफी मात्रा में प्राकृतिक गैस की आपूर्ति में हिस्सेदारी है। इसके अतिरिक्त खाड़ी देश भारत के महत्त्वपूर्ण व्यापारिक भागीदार हैं, जिनकी भारत के वैश्विक व्यापार में लगभग 15% हिस्सेदारी है तथा यहाँ से पर्याप्त रेमिटेंस प्राप्त होता है।

मुख्य भाग:

खाड़ी क्षेत्र में भारत की विदेश नीति के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- आतंकवाद का मुकाबला, समुद्री सुरक्षा, साइबर सुरक्षा, रक्षा सहयोग और क्षेत्रीय संपर्क जैसे विभिन्न मुद्दों पर खाड़ी देशों के साथ अपनी रणनीतिक साझेदारी को बढ़ावा देना।
- अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस, अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन और गांधी-ज़ायेद डिजिटल संग्रहालय जैसी पहलों के माध्यम से अपनी सॉफ्ट पावर और सांस्कृतिक कूटनीति को बढ़ावा देना।
- खाड़ी देशों के साथ अपनी व्यापार टोकरी में विविधता लाना, अधिक निवेश आकर्षित करना, बाज़ार पहुँच को सुविधाजनक बनाना और नवीकरणीय ऊर्जा, खाद्य सुरक्षा, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी तथा स्वास्थ्य देखभाल जैसे सहयोग के नए क्षेत्रों की खोज करके अपने आर्थिक जुड़ाव का विस्तार करना।
- कॉन्सुलर सेवाएँ प्रदान करके, संकट के दौरान प्रत्यावर्तन की सुविधा प्रदान करके और उनकी शिकायतों और चिंताओं को दूर करके खाड़ी क्षेत्र में भारतीय डायस्पोरा के कल्याण और सुरक्षा को सुनिश्चित करना।
- विचार-विमर्श और कूटनीति का समर्थन करके, आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप से बचने और सभी देशों की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान करके खाड़ी क्षेत्र में क्षेत्रीय स्थिरता और शांति में योगदान देना।

खाड़ी क्षेत्र के साथ अपने जुड़ाव को मजबूत करने के लिये भारत द्वारा अपनाई गई कुछ रणनीतियाँ:

- **भारत और खाड़ी देशों के नेताओं और अधिकारियों के बीच उच्च स्तरीय वार्ताओं के साथ यात्राओं को बढ़ावा देना।** उदाहरण के लिये प्रधानमंत्री ने वर्ष 2015 से सभी 6 GCC देशों का दौरा किया है। इसी तरह खाड़ी देशों के कई नेताओं ने भारत का दौरा किया है और वाइब्रेंट गुजरात समिट तथा रायसीना डायलॉग जैसे कार्यक्रमों में भाग लिया है।
- **आपसी हित के विभिन्न मुद्दों पर नियमित परामर्श और सहयोग के लिये संस्थागत तंत्र की स्थापना करना।** उदाहरण के लिये भारत ने सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात के साथ रणनीतिक साझेदारी, सभी GCC देशों के साथ संयुक्त आयोग, संयुक्त अरब अमीरात के साथ निवेश पर एक उच्च स्तरीय टास्क फोर्स, कतर के साथ एक संयुक्त व्यापार परिषद तथा संयुक्त अरब अमीरात के साथ व्यापक आर्थिक साझेदारी समझौता (CEPA) जैसी पहले की हैं।
- **भारत ने संयुक्त अभ्यास, प्रशिक्षण कार्यक्रम, नौसैनिक दौरे, खुफिया जानकारी साझा करने,** आतंकवाद-रोधी समन्वय और रक्षा उपकरणों की बिक्री करके खाड़ी देशों के साथ अपने रक्षा और सुरक्षा सहयोग को बढ़ावा दिया है। उदाहरण के लिये भारत ने ओमान के साथ नसीम अल बहर, संयुक्त अरब अमीरात के साथ जायद तलवार, ओमान के साथ अल नागाह आदि नौसैनिक अभ्यास किये हैं।
  - भारत ने सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, ओमान, कतर, बहरीन और कुवैत के साथ रक्षा सहयोग समझौतों पर भी हस्ताक्षर किये हैं।
- **सांस्कृतिक आदान-प्रदान, शैक्षिक सहयोग,** पर्यटन के प्रसार, मीडिया संचार, संसदीय आदान-प्रदान आदि को सुविधाजनक बनाकर खाड़ी देशों के साथ अपने लोगों के संबंधों को बढ़ावा देना। उदाहरण के लिये भारत ने GCC देशों में जाने वाले श्रमिकों के ऑनलाइन पंजीकरण के लिये ई-माइग्रेट प्रणाली शुरू की है इसके साथ ही भारत आने वाले GCC नागरिकों के लिये ई-वीजा सुविधा, भारतीय प्रवासियों के साथ जुड़ने के लिये प्रवासी भारतीय दिवस सम्मेलन आदि की शुरुआत की है।

निष्कर्ष:

खाड़ी देशों के साथ भारत के संबंध इसकी विदेश नीति का एक महत्त्वपूर्ण घटक हैं जो देश की ऊर्जा सुरक्षा, आर्थिक हितों और क्षेत्रीय स्थिरता के पूरक हैं। कूटनीतिक, आर्थिक और सुरक्षा सहयोग के माध्यम से इन संबंधों को मज़बूत करना, आपसी लाभ को बढ़ावा देना और खाड़ी क्षेत्र की समग्र स्थिरता और समृद्धि में योगदान देना भारत की प्रमुख प्राथमिकता रही है।

Q6. भारत में प्रवर्तन निदेशालय (ED) की भूमिका और कार्यों पर चर्चा करने के साथ आर्थिक अपराधों से निपटने में इसकी प्रभावशीलता का मूल्यांकन कीजिये। अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में ED के समक्ष उत्पन्न प्रमुख चुनौतियों को बताते हुए इसकी दक्षता को बढ़ाने के उपाय सुझाइए? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- प्रवर्तन निदेशालय (ED) का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपना उत्तर प्रारंभ कीजिये।
- इसके कार्यों, इसके समक्ष आने वाली चुनौतियों के साथ इन चुनौतियों को कम करने के तरीकों का वर्णन कीजिये।
- ED की सफलता का वर्णन करते हुए सकारात्मक टिप्पणी के साथ निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- प्रवर्तन निदेशालय (ED) एक कानून प्रवर्तन एजेंसी है। यह राजस्व विभाग, वित्त मंत्रालय के तहत कार्य करता है तथा यह वित्तीय अपराधों एवं मनी लॉन्ड्रिंग से निपटने के लिये आर्थिक कानूनों और नियमों को लागू करने हेतु जिम्मेदार है। ED की प्राथमिक भूमिका विदेशी मुद्रा के उल्लंघन, मनी लॉन्ड्रिंग और आर्थिक धोखाधड़ी से संबंधित अपराधों की जाँच करना है।

मुख्य भाग:

प्रवर्तन निदेशालय के कार्य:

- विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम, 1999 (FEMA) का प्रवर्तन
- धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 (PMLA) का प्रवर्तन
- मनी लॉन्ड्रिंग, काला धन, हवाला और विदेशी मुद्रा उल्लंघन जैसे आर्थिक अपराधों की जाँच करना
- आर्थिक अपराधियों पर कार्रवाई करना
- संपत्ति की वसूली करना (जो भ्रष्ट कार्यों से प्राप्त होती है)
- आर्थिक अपराध संबंधी मामलों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग करना

आर्थिक अपराधों से निपटने में इसकी प्रभावशीलता:

- ED भारत में आर्थिक अपराधों से निपटने में प्रभावी रहा है। इसने 2जी स्पेक्ट्रम, अगस्ता वेस्टलैंड, नीरव मोदी घोटाला आदि जैसे कई हाई-प्रोफाइल मामलों की जाँच कर कार्रवाई की है। हाल ही में ED ने मनी लॉन्ड्रिंग मामले में महाराष्ट्र के पूर्व गृह मंत्री को गिरफ्तार किया है। इस मामले में गृह मंत्री पर मुंबई में बार मालिकों से पैसे वसूलने के आरोप लगे थे।

हालाँकि अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में ED के समक्ष कई चुनौतियाँ रहती हैं जैसे:

- **संसाधनों की कमी:** ED सीमित बजट वाली अपेक्षाकृत छोटी एजेंसी है। जिससे आर्थिक अपराधों की जाँच और कार्रवाई करने की इसकी क्षमता सीमित होती है।
- **अन्य कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ सहयोग का अभाव:** ED को अक्सर अन्य कानून प्रवर्तन एजेंसियों जैसे पुलिस और केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) से सहयोग प्राप्त करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इससे आर्थिक अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करने में मुश्किल हो सकती है।
- **आर्थिक अपराधों से संबंधित मामलों की जटिलता:** आर्थिक अपराध के मामले अक्सर जटिल होते हैं जिनकी जाँच में समय लगता है।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप:** ED पर अतीत में राजनीतिक हस्तक्षेप के आरोप लगते रहे हैं। इससे इस एजेंसी के लिये स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से कार्य करना मुश्किल हो सकता है।
- **कानूनी कमियाँ:** ED को अपराधियों पर मुकदमा चलाने में कानूनी बाधाओं का सामना करना पड़ता है, खासकर उन लोगों पर जो भारत से बाहर हैं या जिनके पास कई नागरिकताएँ हैं। PMLA के कुछ प्रावधान अपराधियों को जाँच से बचाने में सहायक होते हैं।
- **विदेशी न्यायालयों से सहयोग की कमी:** ED को अक्सर अपनी जाँच में विदेशी न्यायालयों से सहयोग प्राप्त करने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। ऐसा इसलिये है क्योंकि कई देशों में सख्त गोपनीयता कानून हैं जो ED के लिये बैंक खातों और अन्य वित्तीय लेनदेन के बारे में जानकारी प्राप्त करना कठिन बनाते हैं।

ED के प्रदर्शन को बेहतर बनाने हेतु निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं:

1. **वित्तपोषण को बढ़ावा देना**
2. **अन्य कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ बेहतर समन्वय को प्रोत्साहन देना**
3. **जाँच प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करना**
4. **प्रशिक्षण में सुधार करना**
5. **कानूनी जटिलताओं को कम करना**
6. **ED अधिकारियों की राजनीतिक हस्तक्षेप से सुरक्षा करना**
7. **विदेशी न्यायालयों के साथ सहयोग को बढ़ावा देना**

निष्कर्ष:

ED एक महत्त्वपूर्ण कानून प्रवर्तन एजेंसी है जो आर्थिक अपराधों का मुकाबला करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कई चुनौतियों के बावजूद ED ने भारत में आर्थिक अपराधों से निपटने में महत्त्वपूर्ण प्रगति की है। इस एजेंसी ने कई हाई-प्रोफाइल मामलों की जाँच कर कार्रवाई की है जिससे आर्थिक अपराधियों से काफी राशि बरामद हुई है। ED को और भी मज़बूत करने से यह भारतीय अर्थव्यवस्था को अपराधियों से बचाने में और भी अधिक प्रभावी हो सकता है।

Q7. हाल ही में केरल की कुदुम्बश्री योजना के 25 वर्ष पूरे हुए हैं। इस आलोक में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा देने तथा गरीबी उन्मूलन में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका पर चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- कुदुम्बश्री योजना और स्वयं सहायता समूहों का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपना उत्तर शुरु कीजिये।
- मुख्य भाग में बताइये कि यह किस प्रकार गरीबी उन्मूलन और महिला सशक्तिकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।
- उचित एवं तार्किक निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- कुदुम्बश्री (परिवार की समृद्धि) वर्ष 1988 में केरल सरकार द्वारा शुरू की गई एक स्वयं सहायता समूह योजना है। इसका उद्देश्य परिवारों का उत्थान करने के साथ स्वयं सहायता समूह दृष्टिकोण के माध्यम से महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति तथा समग्र कल्याण में सुधार करना है। अपने 25 वर्ष पूरे करने पर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण और गरीबी उन्मूलन को बढ़ावा देने में स्वयं सहायता समूहों (SHGs) की निर्णायक भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।
- SHG लोगों (मुख्य रूप से महिलाओं का) का एक ऐसा स्वैच्छिक संघ हैं जिसमें सामाजिक और आर्थिक मुद्दों को हल करने तथा अपनी आजीविका में सुधार करने के लिये लोग एकजुट होते हैं। ये समूह महिलाओं को वित्तीय संसाधनों एवं कौशल विकास में सहायता प्रदान करके उन्हें सशक्त बनाने में प्रभावी भूमिका निभाते हैं।

मुख्य भाग:

SHGs भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के साथ गरीबी उन्मूलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जैसे:

- **आर्थिक सशक्तिकरण:** SHG, वित्तीय संसाधनों तथा आय-सृजन के अवसरों को उपलब्ध कराने के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाते हैं। सामूहिक बचत और ऋण के माध्यम से समूह के सदस्य व्यवसाय शुरू करने, कौशल विकास करने और आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में एक-दूसरे का समर्थन करते हैं।
- **सामाजिक सशक्तिकरण:** SHG एक दूसरे से जुड़ने,समन्वय करने और समर्थन करने के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाते हैं। यह लैंगिक भेदभाव, घरेलू हिंसा और स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं जैसे सामाजिक मुद्दों को हल करने में भूमिका निभाते हैं। सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से स्वयं सहायता समूह महिलाओं को अपने अधिकारों की वकालत करने और लैंगिक असमानता को चुनौती देने में सक्षम बनाते हैं।
- **कौशल विकास और क्षमता निर्माण:** स्वयं सहायता समूह वित्त, व्यवसाय, व्यावसायिक क्षेत्रों से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम और कार्यशालाएँ आयोजित करते हैं। ये कार्यक्रम आत्मविश्वास बढ़ाने के साथ महिलाओं को सामूहिक और सामुदायिक स्तर पर निर्णय लेने में सक्षम बनाते हैं।
- **क्रेडिट और वित्तीय समावेशन तक पहुँच:** SHG द्वारा महिलाओं को क्रेडिट के साथ सरकारी योजनाओं तक पहुँच प्रदान की जाती है। यह महिलाओं को ऋण प्रदान करने के साथ वित्तीय जानकारी प्रदान करते हैं। इससे महिलाएँ आय सृजित करने वाले उद्यमों में निवेश करने, घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने और अप्रत्याशित परिस्थितियों को संभालने में सक्षम होती हैं।
  - प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के उधार मानदंड और प्रतिफल के आश्वासन के कारण बैंक SHGs को उधार देने के लिये प्रोत्साहित होते हैं।
  - NABARD द्वारा संचालित SHG-बैंक लिंकेज कार्यक्रम ने ऋण तक पहुँच को आसान बना दिया है जिससे गैर-संस्थागत स्रोतों पर इनकी निर्भरता में कमी आई है।
- **बेहतर आजीविका को बढ़ावा मिलने के साथ गरीबी उन्मूलन होना:** बढ़ी हुई आय और वित्तीय संसाधनों तक पहुँच के माध्यम से, स्वयं सहायता समूह के सदस्यों की आजीविका बेहतर होती है। जिससे यह अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा में निवेश करने तथा अपने एवं अपने परिवार के लिये अधिक टिकाऊ भविष्य सुरक्षित करने में सक्षम हो पाते हैं। महिलाओं को गरीबी से बाहर निकालकर, स्वयं सहायता समूह ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन में योगदान देते हैं।
- **निर्णय निर्माण और नेतृत्व क्षमता:** स्वयं सहायता समूह निर्णय लेने और वित्त प्रबंधन में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित कर उन्हें सशक्त बनाते हैं। नेतृत्व कौशल विकसित होने के साथ महिलाएँ समुदाय-स्तरीय निर्णयों में संलग्न होती हैं जिससे स्थानीय शासन में इनके सशक्तीकरण और प्रतिनिधित्व को बढ़ावा मिलता है।
- **जागरूकता और शिक्षा:** स्वयं सहायता समूह स्वास्थ्य, स्वच्छता, शिक्षा और सरकारी योजनाओं से संबंधित जागरूकता अभियानों और कार्यशालाओं के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाते हैं।

निष्कर्ष:

स्वयं-सहायता समूह भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला सशक्तीकरण और गरीबी उन्मूलन के प्रभावी आधार के रूप में उभरे हैं। आर्थिक सशक्तीकरण, कौशल विकास, सामाजिक एकजुटता और ऋण तक पहुँच को बढ़ावा देकर स्वयं सहायता समूह महिलाओं को अपने जीवन पर नियंत्रण रखने और अपने समुदायों के विकास में योगदान करने में सक्षम बनाते हैं।

Q8. जल्लीकट्टू जैसी सामाजिक-धार्मिक प्रथाएँ पशु अधिकारों के संदर्भ में विरोधाभाषी हैं। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस संदर्भ में हाल ही में दिये गए निर्णय के आलोक में इसका समालोचनात्मक विश्लेषण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- जल्लीकट्टू पर सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के बारे में बताते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- मुख्य भाग में इस निर्णय के बारे में बताते हुए इसके पक्ष और विपक्ष में तर्क दीजिये।
- सकारात्मक बिंदुओं का उल्लेख करते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

हाल के एक फैसले में सर्वोच्च न्यायालय ने जल्लीकट्टू जैसी पारंपरिक प्रथाओं को अनुमति देने के क्रम में तमिलनाडु द्वारा पशु क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960 में किये गए संशोधनों को बरकरार रखा है। इस मुद्दे पर वन्यजीव कार्यकर्ताओं और इस परंपरा के समर्थकों के बीच लंबे समय से विवाद चल रहा है। इस फैसले से पशुओं से संबंधित अन्य खेलों जैसे कंबाला और बैलगाड़ी दौड़ को भी स्वीकार्यता प्राप्त हुई है।

मुख्य भाग:

सर्वोच्च न्यायालय का फैसला:

- **संशोधनों की संवैधानिकता:**
  - सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि राज्य द्वारा किये गए संशोधनों द्वारा संविधान और जल्लीकट्टू पर प्रतिबंध लगाने वाले न्यायालय के पूर्व के फैसले का उल्लंघन नहीं हुआ है।
  - न्यायालय ने माना कि संशोधन अधिनियम और नियमों से भाग लेने वाले पशुओं के साथ होने वाली क्रूरता को काफी हद तक कम किया गया है।
- **संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप होना:**
  - इस फैसले में पुष्टि की गई है कि 2017 का संशोधन अधिनियम संविधान की समवर्ती सूची की प्रविष्टि 17 (जानवरों के प्रति क्रूरता की रोकथाम) और अनुच्छेद 51A(g) (जीवों के प्रति दया भाव रखना) के अनुरूप है।
  - हालाँकि इसमें स्पष्ट किया गया है कि सांस्कृतिक परंपरा के नाम पर कानून का कोई भी उल्लंघन, दंडनीय होगा।
- **विधानसभा बनाम न्यायालय:**
  - न्यायालय ने फैसला दिया कि जल्लीकट्टू की सांस्कृतिक विरासत की स्थिति का निर्धारण विधि न्यायालय के बजाय राज्य विधानसभा की जिम्मेदारी होनी चाहिये।
  - इस दृष्टिकोण से पता चलता है कि न्यायालय लोकतांत्रिक विचार-विमर्श के माध्यम से सांस्कृतिक प्रथाओं और पशु कल्याण को संतुलित करने की आवश्यकता को पहचानता है।

जल्लीकट्टू के पक्ष में तर्क:

- **सांस्कृतिक और धार्मिक महत्त्व:**
  - जल्लीकट्टू तमिलनाडु की संस्कृति में गहराई से निहित है और इसे सभी पृष्ठभूमि के लोगों द्वारा मनाया जाता है।
  - इसके समर्थकों का तर्क है कि यह सांस्कृतिक विरासत और सामुदायिक भावनाओं को संरक्षित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- **विनियमन और सुधार:**
  - पूर्ण प्रतिबंध लगाने के बजाय इसके समर्थक जल्लीकट्टू को विनियमित करने और सुधारने का सुझाव देते हैं ताकि मनुष्यों और पशुओं दोनों के ही कल्याण को सुनिश्चित किया जा सके।
  - इसके समर्थक दावा करते हैं कि इससे स्वदेशी पशुधन नस्लों के संरक्षण को महत्त्व मिलने के साथ करुणा और मानवता को बढ़ावा मिलता है।

जल्लीकट्टू के विपक्ष में तर्क:

- **पशुओं के निहित अधिकार:**
  - इसके विरोधियों का तर्क है कि पशुओं सहित सभी जीवों को अंतर्निहित रूप से स्वतंत्रता है जिसे संविधान द्वारा मान्यता भी दी गई है।
  - इनका तर्क है कि मनोरंजन के उद्देश्य से जानवरों पर क्रूरता करना नैतिक रूप से गलत है और यह जानवरों के अधिकारों के अनुरूप नहीं है।
- **सुरक्षा चिंताएँ:**
  - जल्लीकट्टू में लोगों तथा साँडों दोनों की मौत और इनको चोट लगने की घटनाएँ देखी गई हैं।
  - इसके आलोचकों का दावा है कि साँडों के प्रति आक्रामक व्यवहार अत्यधिक क्रूरता का कारण बनता है जिससे प्रतिभागियों और पशुओं को जोखिम उत्पन्न होता है।
- **अतार्किक प्रथाओं की समाप्ति से तुलना:**
  - आलोचक जल्लीकट्टू और सती तथा दहेज प्रथा जैसी अतार्किक प्रथाओं को एक साथ रखकर देखते हैं तथा क्रूरता वाली सांस्कृतिक प्रथाओं को खत्म करने के क्रम में कानून की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हैं।

निष्कर्ष:

जल्लीकट्टू पर सर्वोच्च न्यायालय का हालिया फैसला सामाजिक-धार्मिक प्रथाओं तथा पशु अधिकारों के बीच संघर्ष के प्रति सूक्ष्म दृष्टिकोण को दर्शाता है। **इन संशोधनों को बरकरार रखने के साथ न्यायालय ने पशुओं के प्रति क्रूरता को रोकने के महत्त्व पर जोर दिया है तथा सांस्कृतिक परंपरा के नाम पर कानून के किसी भी उल्लंघन** को हतोत्साहित किया है।

जल्लीकट्टू से संबंधित बहस, सांस्कृतिक प्रथाओं के संरक्षण और संवेदनशील प्राणियों के कल्याण के बीच संतुलन बनाने की आवश्यकता को रेखांकित करने के साथ ऐसे संघर्षों को हल करने में लोकतांत्रिक विचार-विमर्श एवं नैतिक पहलुओं की भूमिका पर प्रकाश डालती है।

Q9. गर्भधारण पूर्व एवं प्रसव पूर्व निदान तकनीक (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम, 1994 से संबंधित मुद्दे क्या हैं? इन मुद्दों को बताते हुए इनके समाधान हेतु उपाय सुझाइए। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- PCPNDT अधिनियम के बारे में बताते हुए अपना उत्तर प्रारंभ कीजिये।
- मुख्य भाग में इस अधिनियम से संबंधित मुद्दों का उल्लेख करते हुए इन्हें हल करने के उपाय सुझाइए।
- सकारात्मक बिंदुओं का उल्लेख करते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:
- गर्भधारण पूर्व एवं प्रसव पूर्व निदान तकनीक (PCPNDT) अधिनियम, 1994 को देश में कन्या भ्रूण हत्या के मुद्दे का समाधान करने तथा गिरते लिंगानुपात में सुधार के लिये लाया गया था।
- इस अधिनियम द्वारा प्रसव पूर्व लिंग निर्धारण तकनीकों के उपयोग पर रोक लगाने के साथ केवल वैध चिकित्सा उद्देश्यों तक ही प्रसव पूर्व निदान तकनीकों के उपयोग को सीमित किया गया है। हालाँकि पिछले वर्षों से इस अधिनियम के कार्यान्वयन से संबंधित कुछ मुद्दों की पहचान की गई है, जिन्हें इसके प्रभावी कार्य संचालन हेतु हल करने की आवश्यकता है।

मुख्य भाग:

PCPNDT अधिनियम, 1994 से संबंधित मुद्दे:
- **पुलिस की संलिप्तता:**
  - इस अधिनियम में जहाँ तक संभव हो छापेमारी और जब्ती में पुलिस की भागीदारी को सीमित किया गया है लेकिन यह इसकी व्यावहारिक सीमाएँ हैं।
- **जाँच और गिरफ्तारी की शक्तियाँ:**
  - इस अधिनियम में उपयुक्त प्राधिकरण को जाँच करने और छापा मारने की शक्तियाँ प्रदान की गई हैं लेकिन इन्हें गिरफ्तारी की शक्ति प्रदान नहीं की गई है।
  - इससे इस अधिनियम को प्रभावी ढंग से लागू करने में चुनौती आती है।
- **सजा की निम्न दर:**
  - PCPNDT अधिनियम के तहत सजा की कम दर होना, इसकी प्रमुख चिंताओं में से एक है। यह अपराधियों के प्रति मुकदमा चलाने तथा लिंग-चयन संबंधी गर्भपात को रोकने के क्रम में न्याय प्रणाली की विफलता को इंगित करता है।

इन मुद्दों के समाधान हेतु उपाय:
- **पुलिस प्रशिक्षण और समन्वय को मज़बूत करना:**
  - व्यावहारिकता आधारित पुलिस की भागीदारी को बढ़ाने के क्रम में पुलिस कर्मियों को PCPNDT अधिनियम के प्रावधानों के साथ इस संदर्भ में छापे मारने और कार्रवाई करने से संबंधित प्रक्रियाओं पर विशेष प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है।
  - इसके अतिरिक्त इस अधिनियम के सुचारू कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के हेतु संबंधित अधिकारियों एवं पुलिस के बीच बेहतर समन्वय होना चाहिये।
- **संबंधित प्राधिकारियों को सशक्त बनाना:**
  - अपराधों की संज्ञेय प्रकृति के अनुरूप इस अधिनियम के तहत संबंधित प्राधिकारियों को गिरफ्तारी की शक्ति प्रदान करने से अपराधियों के खिलाफ त्वरित कार्रवाई करने की क्षमता में वृद्धि होगी।
  - इससे प्रवर्तन तंत्र को मजबूती मिलने के साथ इस संदर्भ में निवारक प्रभाव प्राप्त होंगे।
- **जाँच और सजा प्रक्रिया को मज़बूत बनाना:**
  - इस संदर्भ में जाँच और सजा प्रक्रिया में सुधार के प्रयास किये जाने चाहिये। PCPNDT अधिनियम के उल्लंघन से संबंधित मामलों के संदर्भ में प्रभावी कार्रवाई सुनिश्चित करने के लिये प्रशिक्षित जाँचकर्ताओं, फोरेंसिक सुविधाओं और कानूनी सहायता सहित पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराए जाने चाहिये।
- **इस संदर्भ में जागरूकता तथा संवेदनशीलता बढ़ाना:**
  - PCPNDT अधिनियम और इसके प्रावधानों के बारे में आम लोगों, स्वास्थ्य पेशेवरों तथा हितधारकों के बीच जागरूकता को बढ़ावा देना महत्त्वपूर्ण है।
  - इस संदर्भ में संवेदीकरण कार्यक्रम आयोजित करने से लैंगिक भेदभाव के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण को बदलने में मदद मिल सकती है तथा लैंगिक समानता के महत्त्व पर प्रकाश डाला जा सकता है।

निष्कर्ष:

PCPNDT अधिनियम, 1994 लिंग-चयन संबंधी गर्भपात के मुद्दे को हल करने एवं लैंगिक समानता को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हालाँकि इसके प्रभावी कार्यान्वयन हेतु इससे संबंधित मुद्दों के समाधान की आवश्यकता है।

पुलिस की भागीदारी को तार्किक बनाने, जाँच और गिरफ्तारी की शक्तियों को स्पष्ट करने, दोषसिद्धि दर में सुधार करने तथा इस संदर्भ में जागरूकता बढ़ाने से इस अधिनियम के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित किया जा सकता है।

Q10. OPEC+ देशों द्वारा अपने तेल उत्पादन को कम करने के निर्णय से संबंधित मुख्य कारक और उद्देश्य क्या हैं? भारत पर इस निर्णय के प्रभाव का मूल्यांकन करने के साथ बताइये भारत इस स्थिति का किस प्रकार सामना करेगा। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- परिचय: (OPEC+) ओपेक+ तथा तेल उत्पादन को कम करने के उसके निर्णय का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपना उत्तर शुरू कीजिये।
- मुख्य भाग: तेल उत्पादन को कम करने के OPEC+ के निर्णय के मुख्य कारकों और उद्देश्यों पर चर्चा कीजिये। भारत पर ओपेक+ समूह के निर्णय के प्रभाव का मूल्यांकन करते हुए उन विभिन्न उपायों पर चर्चा कीजिये जो भारत तेल की बढ़ती कीमतों के प्रभाव को कम करने के लिये कर सकता है।
- निष्कर्ष: ओपेक+ समूह द्वारा तेल उत्पादन में की जाने वाली कटौती के प्रभाव से निपटने हेतु भारत के लिये एक व्यापक दृष्टिकोण के महत्त्व पर जोर देते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- OPEC+ 23 तेल उत्पादक देशों का एक समूह है जिसका उद्देश्य पेट्रोलियम उत्पादकों के लिये उचित और स्थिर मूल्य सुनिश्चित करने के साथ उपभोग करने वाले देशों को पेट्रोलियम की कुशल एवं नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करना है। यह समूह वैश्विक तेल बाज़ार को संतुलित करने और तेल की कीमतों को निर्धारित करने के लिये वर्ष 2016 से अपनी तेल उत्पादन नीति का समन्वय कर रहा है। OPEC+ ने नवंबर 2022 में घोषित कच्चे तेल के उत्पादन में कटौती को आगे बढ़ाने का फैसला किया है।

मुख्य भाग:

तेल उत्पादन को कम करने से संबंधित ओपेक+ के फैसले के पीछे प्रमुख कारण और उद्देश्य:

- वैश्विक अर्थव्यवस्था में तेल बाज़ार की अनिश्चितता के कारण कम होती तेल की मांग और कीमतों का समाधान करना।
- अमेरिका द्वारा की जाने वाली उत्पादन वृद्धि को प्रतिसंतुलित करना।
- स्थिर और संतुलित तेल बाज़ार को बनाए रखने तथा इसकी आपूर्ति की अधिकता से बचने के लिये (जो कीमतों में गिरावट का कारण बन सकती है जिससे तेल उत्पादक देशों के राजस्व बजट को नुकसान हो सकता है)।
- इसके मुख्य निर्यात मूल्य को बनाए रखने के लिये (हाल के दिनों में जिस डॉलर में आमतौर पर कच्चे तेल का कारोबार होता है उसके मूल्य में गिरावट देखी गई है)।
- तेल की खपत करने वाले देशों पर दबाव बनाने के लिये (जो मुद्रास्फीति के दबाव और ऊर्जा की कमी का समाधान करने हेतु ओपेक+ से उत्पादन बढ़ाने का आग्रह कर रहे हैं)।

ओपेक+ द्वारा तेल उत्पादन को कम करने के निर्णय का भारत पर प्रभाव:

- विश्व के तीसरे सबसे बड़े तेल आयातक और उपभोग करने वाले देश के रूप में भारत को वैश्विक तेल की कीमतों में वृद्धि के कारण उच्च तेल आयात मूल्य चुकाने के साथ मुद्रास्फीति के दबाव का सामना करना पड़ेगा।
  - कुछ अनुमानों के अनुसार कच्चे तेल की कीमतों में प्रति बैरल 10 अमेरिकी डॉलर की वृद्धि से भारत का चालू खाता घाटा सकल घरेलू उत्पाद के 0.4% तक बढ़ सकता है और इसकी मुद्रास्फीति दर 0.5% तक बढ़ सकती है।
- भारत को अपने आर्थिक सुधार और विकास के लिये पर्याप्त और सस्ती ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित करने में भी चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा (विशेष रूप से परिवहन, कृषि, उद्योग और बिजली उत्पादन जैसे क्षेत्रों में)।
  - भारत अपनी कच्चे तेल की जरूरतों का लगभग 85% मुख्य रूप से ओपेक+ देशों से आयात करता है।

भारत को इस स्थिति से किस प्रकार निपटना चाहिये:

भारत को अपने ऊर्जा स्रोतों और आयात के तरीकों में विविधता लाकर, अपनी घरेलू उत्पादन क्षमता को बढ़ावा देकर, ऊर्जा दक्षता और संरक्षण उपायों को बढ़ावा देकर, रणनीतिक भंडार का निर्माण करके, परमाणु ऊर्जा जैसे ऊर्जा के नवीकरणीय और वैकल्पिक स्रोतों को अपनाने के साथ अपनी चिंताओं और हितों को व्यक्त करने हेतु ओपेक+ देशों के साथ राजनयिक रूप से समन्वय करने के माध्यम से इससे उत्पन्न समस्याओं को हल करने की कोशिश करनी चाहिये।

निष्कर्ष:

ओपेक+ का तेल उत्पादन को कम करने का निर्णय विभिन्न कारकों और उद्देश्यों से प्रेरित है। ओपेक+ का उद्देश्य तेल बाज़ार को स्थिर करना और तेल उत्पादक देशों के हितों की रक्षा करना है। हालाँकि इस निर्णय का भारत के लिये नकारात्मक प्रभाव होगा क्योंकि यह अपनी ऊर्जा जरूरतों और आर्थिक विकास के लिये तेल आयात पर बहुत अधिक निर्भर रहता है। इस स्थिति से निपटने और अपनी ऊर्जा सुरक्षा और स्थिरता को सुरक्षित करने के लिये भारत को विभिन्न उपायों को अपनाना चाहिये।

Q11. भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न ऐतिहासिक फैसलों में राजद्रोह कानून की व्याख्या किस प्रकार की है? भारत में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर इन फैसलों के प्रभावों का विश्लेषण कीजिये। क्या आपको लगता है कि भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में राजद्रोह कानून वर्तमान में भी प्रासंगिक है? अपने उत्तर के कारण भी बताइये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- परिचय: राजद्रोह कानून का संक्षेप में परिचय दीजिये।
- **मुख्य भाग:** इसके संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के प्रमुख निर्णयों पर चर्चा करते हुए इन निर्णयों के महत्त्व पर प्रकाश डालिये। इसके साथ ही इस कानून के संदर्भ में अपनी राय देते हुए इसकी विद्यमानता के कारणों पर चर्चा कीजिये।
- निष्कर्ष: राष्ट्रीय सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- राजद्रोह का आशय कानून द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा, अवमानना या असंतोष को बढ़ावा देने वाले भाषण या कार्यों को करने से है। इसे भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 124A के तहत परिभाषित किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (a) के तहत प्रदत्त भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार के उल्लंघन करने के कारण इस कानून पर प्रश्नचिन्ह लगता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न ऐतिहासिक निर्णयों में इस कानून की व्याख्या की है और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा राज्य की सुरक्षा के बीच संतुलन स्थापित करने हेतु दिशानिर्देश प्रदान किये हैं।

मुख्य भाग:

राजद्रोह से संबंधित सर्वोच्च न्यायालय के कुछ ऐतिहासिक निर्णय निम्नलिखित हैं:

- **केदारनाथ सिंह बनाम भारत संघ (1962):** इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने राजद्रोह कानून की वैधता को बरकरार रखा लेकिन स्पष्ट किया कि इसके तहत किसी पर कार्रवाई तभी हो सकती है जब उसके कार्यों से हिंसा को बढ़ावा मिलने के साथ सार्वजनिक अव्यवस्था हो। यदि इसमें घृणा एवं सरकार की अवमानना के साथ हिंसा शामिल नहीं है तो केवल सरकार की नीतियों की मात्र आलोचना या अस्वीकृति को राजद्रोह गतिविधियों के तहत शामिल नहीं किया जाएगा।
- श्रेया सिंघल बनाम भारत संघ (2015): इसमें आईटी अधिनियम की धारा 66A को असंवैधानिक तथा अनुच्छेद 19(1)(a) का उल्लंघन करने वाला घोषित किया गया था क्योंकि इसमें आपत्तिजनक ऑनलाइन भाषण को आपराधिक बनाया गया। न्यायालय ने यह भी दोहराया कि राजद्रोह कानून तभी लागू किया जा सकता है जब हिंसा या सार्वजनिक अव्यवस्था का स्पष्ट खतरा हो।
- कॉमन कॉज बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (2016): इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने राजद्रोह कानून के दुरुपयोग को रोकने के लिये दिशानिर्देश जारी किये थे। न्यायालय ने निर्देश दिया था कि किसी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की पूर्व स्वीकृति के बिना राजद्रोह के आधार पर FIR दर्ज नहीं की जानी चाहिये और कानून अधिकारी से कानूनी राय प्राप्त किये बिना इस संबंध में कोई चार्जशीट दायर नहीं की जानी चाहिये। न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि सरकार की नीतियों से असहमति एवं इनकी आलोचना करना, लोकतंत्र के लिये आवश्यक है और इसे राजद्रोह कानून लागू करके रोका नहीं जाना चाहिये।

भारत में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर इन निर्णयों के प्रभाव:

- इससे राजद्रोह कानून की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा गया है लेकिन हिंसा या सार्वजनिक अव्यवस्था को बढ़ावा देने के मामलों के संदर्भ में इसे सीमित किया गया है।
- जब तक लोगों के कार्यों से देश की सुरक्षा और अखंडता को खतरा नहीं होता है तब तक सरकार की नीतियों या कार्यों के खिलाफ बिना किसी डर के लोग अपनी राय और असहमति व्यक्त करने के लिये स्वतंत्र हैं।
- इससे सरकार और कानून प्रवर्तन एजेंसियों को राजद्रोह कानून का इस्तेमाल करते समय संयम बरतने और जिम्मेदारी निभाने के लिये भी प्रेरित किया गया है।

निम्नलिखित कारणों से भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में राजद्रोह कानून प्रासंगिक नहीं है:

- राजद्रोह कानून से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कमजोर होती है।
- लोगों की अभिव्यक्ति को राजद्रोह के नाम पर दबाकर सरकार की नीतियों के प्रति असंतोष और विरोध को निष्क्रिय किया जा सकता है।
- राजद्रोह कानून का अक्सर अधिकारियों द्वारा दुरुपयोग किया जाता है।
- इससे लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में नागरिकों की भागीदारी पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- राजद्रोह कानून औपनिवेशिक विरासत है जिसका इस्तेमाल अंग्रेजों ने स्वतंत्रता सेनानियों को दबाने के लिये किया था। लोकतंत्र, बहुलवाद और मानवाधिकारों पर केंद्रित स्वतंत्र भारत में इसका कोई स्थान नहीं है।

वर्तमान में देश विरोधी और अलगाववादी तत्व मौजूद होने के कारण सुधार के साथ यह कानून वर्तमान में भी प्रासंगिक है जैसे:

- राजद्रोह को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाए एवं इसके दुरुपयोग के खिलाफ सुरक्षा उपाय प्रदान किये जाने चाहिये।

- हाल ही में विधि आयोग ने "हिंसा भड़काने या सार्वजनिक अव्यवस्था उत्पन्न करने की प्रवृत्ति" जैसे शब्दों को जोड़कर इसमें केदारनाथ मामले के दिशानिर्देशों को शामिल करने का सुझाव दिया है।

- राजद्रोह के तहत सजा को आजीवन कारावास से कम करना चाहिये।
- अधिकार के रूप में जमानत के प्रावधान के साथ इस संदर्भ में त्वरित सुनवाई सुनिश्चित करनी चाहिये।
- विधि आयोग के सुझाव को कानून में शामिल किया जाना चाहिये जिसमें कहा गया है कि पत्रकारों, शिक्षाविदों, कलाकारों और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा किये जाने वाले सकारात्मक कार्यों को सुरक्षा प्रदान की जाए।
- "जब तक कि एक पुलिस अधिकारी (जो इंस्पेक्टर के पद से नीचे नहीं हो) द्वारा प्रारंभिक जाँच नहीं कर ली जाती है तब तक राजद्रोह के तहत कोई FIR दर्ज नहीं की जानी चाहिये।
- हिंसा या घृणा को भड़काने वाले कृत्यों से बचने के लिये नागरिक जागरूकता एवं अधिकारों को बढ़ावा देने के साथ भाषण की स्वतंत्रता का जिम्मेदारी से उपयोग करने पर बल देना चाहिये।

निष्कर्ष:

अंतत: भारत में राजद्रोह कानून की प्रासंगिकता का मूल्यांकन, इसके दुरुपयोग की संभावना तथा भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर इसके प्रभाव के आलोक में किया जाना चाहिये। भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय सुरक्षा के बीच संतुलन स्थापित करना आवश्यक है।

Q12. G20 की अध्यक्षता के आलोक में भारत की थीम, 'समावेशिता (Inclusivity)' है। भारत के शहरी केंद्रों को दिव्यांगों के और अधिक अनुकूल बनाने से संबंधित चुनौतियों और अवसरों पर चर्चा कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- परिचय: भारत की G20 अध्यक्षता की थीम और समावेशिता के संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता की व्याख्या करते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- मुख्य भाग: भारत के शहरी केंद्रों को दिव्यांगों के और अधिक अनुकूल बनाने से संबंधित चुनौतियों और अवसरों पर सहायक तथ्यों तथा उदाहरणों के साथ चर्चा कीजिये।
- निष्कर्ष: आगे की राह बताते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- भारत की G20 अध्यक्षता की थीम 'समावेशिता' है, जिससे समावेशिता और रचनात्मकता के प्रति देश की आकांक्षा प्रदर्शित होती है। भारत की G20 अध्यक्षता भी वसुधैव कुटुम्बकम या एक पृथ्वी, एक परिवार, एक भविष्य के मूल्य की पुष्टि करने के साथ वैश्विक कल्याण हेतु सामूहिक प्रयासों पर केंद्रित है।
- भारत में शहरी केंद्रों को दिव्यांगों के और अधिक अनुकूल बनाना एक चुनौती के साथ-साथ समावेशिता के दृष्टिकोण को प्राप्त करने का अवसर है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार लगभग 8 मिलियन दिव्यांग लोग पहले से ही शहरों में रहते हैं। यहाँ पर केवल 3% भवन ही शारीरिक रूप से दिव्यांग लोगों के लिये सुलभ हैं।

मुख्य भाग:

शहरी केंद्रों को दिव्यांगों के और अधिक अनुकूल बनाने से संबंधित चुनौतियाँ:

- दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों और आवश्यकताओं के बारे में विभिन्न हितधारकों के बीच जागरूकता और संवेदनशीलता का अभाव होना।
- शहरी क्षेत्रों में दिव्यांग व्यक्तियों की संख्या, प्रकार और स्थितियों के बारे में पर्याप्त डेटा और जानकारी का अभाव होना।
- शहरी नियोजन, विकास और सेवा वितरण में शामिल विभिन्न मंत्रालयों, विभागों और एजेंसियों के बीच समन्वय का अभाव होना।
- अभिगम्यता मानकों और दिशानिर्देशों को डिज़ाइन करने, लागू करने तथा निगरानी करने के लिये पर्याप्त वित्तीय संसाधनों तथा तकनीकी विशेषज्ञता का अभाव होना।
- निर्णय लेने की प्रक्रियाओं और शासन प्रणाली में दिव्यांग व्यक्तियों और उनके संगठनों की भागीदारी और प्रतिनिधित्व का अभाव होना।

शहरी केंद्रों को दिव्यांगों के और अधिक अनुकूल बनाने से संबंधित अवसर::

- दिव्यांगों हेतु सक्षम वातावरण विकसित करने तथा इनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिये प्रौद्योगिकी और ICT का लाभ उठाना। उदाहरण के लिये इन्हें सेवाएँ प्रदान करने हेतु डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग करना, सहायक उपकरण प्रदान करना, ऑडियो-विज़ुअल सिग्नल प्रणाली स्थापित करना आदि।
- दिव्यांग व्यक्तियों के आवागमन तथा कार्यस्थल, शिक्षा, खेल तक इनकी पहुँच स्थापित करने हेतु सुलभ बुनियादी ढाँचे में निवेश करना। उदाहरण के लिये ऐसे रैंप, लिफ्ट, शौचालय एवं रास्ते आदि का निर्माण करना जो विभिन्न प्रकार की अक्षमताओं के अनुकूल हों।
- दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों और सम्मान के बारे में जागरूकता के प्रसार के साथ इनके प्रति सम्मान को बढ़ावा देने हेतु विभिन्न हितधारकों के व्यवहार परिवर्तन और क्षमता निर्माण को बढ़ावा देना। उदाहरण के लिये अधिकारियों, सेवा प्रदाताओं, नियोक्ताओं, शिक्षकों आदि को संवेदनशील बनाने के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम, अभियान, कार्यशाला आदि का आयोजन करना।

- ऐसी समावेशी नीतियों और कानूनी ढाँचे को लागू करना जिससे विकलांग व्यक्तियों की रक्षा होने के साथ उनका सशक्तिकरण हो तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया में भी उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो सके। उदाहरण के लिये दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम, 2016 को लागू करना, जिसके तहत सार्वजनिक भवनों और परिवहन में दिव्यांग व्यक्तियों हेतु सुलभता मानकों को अनिवार्य किया गया है।
- विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन और विकास के एजेंट के रूप में दिव्यांग व्यक्तियों की क्षमता और योगदान का उपयोग करना।

निष्कर्ष:

भारत को पूरी तरह से समावेशी और सुलभ बनाने हेतु सरकार, नागरिक समाज, निजी क्षेत्र और अंतर्राष्ट्रीय भागीदारों द्वारा विभिन्न स्तरों पर सहयोगात्मक पहल करने की आवश्यकता है। इससे शहरी क्षेत्रों के सतत भविष्य की दिशा में तार्किक नीतियों और प्रणालियों को लागू करने में सहायता मिलेगी।

Q13. शहरी स्थानीय निकाय (ULBs) एक ऐसे बिंदु पर खड़े हैं जिससे इनके व्यापक सुधार की मांग परिलक्षित होती है। ULBs के सुचारू कार्य संचालन में विद्यमान प्रमुख चुनौतियों को बताते हुए इन्हें दूर करने के उपाय बताइये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- परिचय: शहरी स्थानीय निकायों की अवधारणा का संक्षेप में परिचय दीजिये।
- मुख्य भाग: ULBs के समक्ष प्रमुख चुनौतियों पर चर्चा करते हुए उन्हें दूर करने के उपाय बताइये।
- निष्कर्ष: उचित एवं समग्र निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- शहरी स्थानीय निकाय (ULBs) शहरी क्षेत्रों के शासन और प्रबंधन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के साथ शहरों के समग्र विकास को सुनिश्चित करते हैं। हालाँकि ULBs को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो उनके सुचारू कार्य संचालन में बाधा डालती हैं। कुशल शहरी शासन सुनिश्चित करने के क्रम में व्यापक सुधार उपायों के माध्यम से इन चुनौतियों की पहचान करना और इनका समाधान करना अनिवार्य है।

मुख्य भाग:

ULBs के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ:

- **शक्ति और धन का अपर्याप्त हस्तांतरण:** कई राज्य सरकारें 74वें संविधान संशोधन अधिनियम को पूरी तरह से लागू करने में विफल रही हैं, जिसके परिणामस्वरूप शहरी स्थानीय निकायों (ULBs) को सीमित अधिकार और अपर्याप्त वित्तीय संसाधन प्राप्त हुए हैं।
- प्रदान की जाने वाली सेवाओं से अपर्याप्त राजस्व वसूली: ULBs को करों और शुल्कों से पर्याप्त राजस्व प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, जिससे आवश्यक सेवाओं से जुड़े खर्चों को पूरा करने में यह असमर्थ होते हैं।
- सीमित क्षमता और जवाबदेहिता: ULBs कुशल कर्मियों एवं प्रभावी जवाबदेही तंत्र के अभाव के साथ सीमित नागरिक भागीदारी और सीमित पारदर्शिता से ग्रस्त हैं।
- राजनीतिक हस्तक्षेप तथा शक्तियों का विखंडन: अधिकारियों के बार-बार स्थानांतरण, संसाधन आवंटन में राजनीतिक प्रभाव और शासन के विभिन्न स्तरों पर सत्ता का विखंडन होने से अक्सर ULBs के सुचारू कार्य संचालन में बाधा उत्पन्न होती है।
- सेवा प्रदाता के रूप में कई निकायों का होना: शहरी क्षेत्रों में अक्सर सेवा प्रदाता के रूप में कई निकायों के बीच समन्वय के अभाव से जवाबदेहिता के संदर्भ में चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं।
- तीव्र शहरीकरण के साथ सेवाओं की मांग में वृद्धि: तीव्र शहरीकरण से ULBs के समक्ष नई चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं जैसे कि सतत् विकास के लिये योजना बनाने, समावेशन को बढ़ावा देने और बदलती शहरी आवश्यकताओं के अनुकूल कार्य करने में।

इन चुनौतियों से निपटने के उपाय:

- **वित्तीय क्षमताओं को मज़बूत करना:**
  - प्रौद्योगिकी और डेटा विश्लेषण के द्वारा कर संग्रह में सुधार करना।
  - अवसंरचना विकास हेतु पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप को बढ़ावा देना।
  - म्युनिसिपल बॉण्ड जैसे नवोन्मेषी वित्तपोषण को बढ़ावा देना।
  - वैकल्पिक राजस्व स्रोतों (विज्ञापन, उपयोगकर्ता शुल्क) का उपयोग करना।
- **संस्थागत क्षमता में वृद्धि करना:**
  - व्यापक क्षमता निर्माण कार्यक्रम आयोजित करना।
  - व्यावसायिक विकास हेतु प्रशिक्षण संस्थान स्थापित करना।
  - ज्ञान साझाकरण और समन्वय प्रणाली को सुगम बनाना।
- **स्वायत्तता और पारदर्शिता सुनिश्चित करना:**
  - ULBs को राजनीतिक हस्तक्षेप से बचाना।
  - जवाबदेहिता और पारदर्शिता को मज़बूत करना।
  - नागरिक भागीदारी को बढ़ावा देना।
  - पारदर्शी शासन के लिये प्रौद्योगिकी का उपयोग करना।

- **शासन प्रणाली को सुव्यवस्थित करना:**
  - ULBs के विकेंद्रीकरण और सशक्तिकरण को बढ़ावा देना।
  - अंतर-एजेंसी समन्वय तंत्र विकसित करना।
  - प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सरल बनाना।
  - एकीकृत शहरी नियोजन दृष्टिकोण अपनाना।

निष्कर्ष:

कुशल शहरी शासन और सतत् विकास हेतु शहरी स्थानीय निकायों (ULBs) को मज़बूत बनाना महत्त्वपूर्ण है। इसके लिये सीमित धन, कमजोर संस्थानों, राजनीतिक हस्तक्षेप तथा अपर्याप्त आधारभूत संरचनाओं जैसी चुनौतियों का समाधान करने की आवश्यकता है। प्रस्तावित उपायों को लागू करने से ULBs के सशक्त होने और इनके प्रदर्शन में सुधार होने के साथ 21वीं सदी में उत्पन्न शहरी चुनौतियों से प्रभावी तरीके से निपटा जा सकेगा। इससे जीवंत, समावेशी और सतत् शहरों का निर्माण होगा।

Q14. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) विभिन्न कारकों के कारण विश्वसनीयता और भरोसे के संकट का सामना कर रहा है। इस संकट के कारणों और परिणामों का विश्लेषण कीजिये तथा CBI के संदर्भ में सार्वजनिक विश्वास एवं प्रतिष्ठा को बहाल करने के उपायों का सुझाव दीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के परिचय के साथ अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- विश्वसनीयता एवं भरोसे के संकट के कारण लिखिये।
- संकट के परिणामों का विश्लेषण कीजिये।
- जनता के विश्वास और प्रतिष्ठा को बहाल करने के उपाय सुझाइए।
- तदनुसार निष्कर्ष लिखिये ।

भूमिका:

- केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) भारत की प्रमुख जाँच एजेंसी है जिसे भ्रष्टाचार निवारण हेतु संथानम समिति की सिफारिश पर स्थापित किया गया था। यह भ्रष्टाचार, आर्थिक अपराधों, विशेष अपराधों आदि के मामलों का निवारण करती है। वर्ष 2013 में सर्वोच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने कहा कि सीबीआई ' 'पिंजरे में बंद ऐसा तोता बन गई है जो अपने मालिक की बोली बोलता है।

मुख्य भाग:

संकट के कारण:

- **राजनीतिक हस्तक्षेप:**
  - सीबीआई को अक्सर अपने राजनीतिक विरोधियों को निशाना बनाने या अपने सहयोगियों का पक्ष लेने के लिये केंद्र सरकार के एक उपकरण के रूप में देखा जाता है।
  - सीबीआई की जाँच सत्ताधारी दल या गठबंधन के राजनीतिक विचारों और दबावों से प्रभावित होती है। यह इसकी निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता को प्रभावित करता है तथा सार्वजनिक छवि को खराब करता है।
- **आंतरिक संघर्ष:**
  - नियुक्तियों, स्थानांतरण, पदोन्नति, जाँच आदि जैसे विभिन्न मुद्दों पर अपने शीर्ष अधिकारियों के बीच आंतरिक संघर्ष और दरार जैसे कई उदाहरण सीबीआई के समक्ष आए है।
  - ये संघर्ष संगठन के भीतर समन्वय, सहयोग और विश्वास की कमी को दर्शाते हैं तथा इसके कामकाज और मनोबल को बाधित करते हैं।
- **पारदर्शिता की कमी:**
  - सीबीआई गोपनीय और अपारदर्शी तरीके से कार्य करती है यह जनता या मीडिया के सामने अपने मामलों, प्रक्रियाओं, परिणामों आदि के बारे में अधिक जानकारी का खुलासा नहीं करती है।
  - पारदर्शिता की कमी सीबीआई के चारों ओर रहस्य और संदेह की धारणा विकसित करती है तथा इसकी जवाबदेही एवं सत्यनिष्ठा पर संदेह पैदा करती है।

संकट के परिणाम:

- **सार्वजनिक विश्वास का नुकसान:**
  - हाल ही के वर्षों में कई विवादों और घोटालों में घिरे होने के कारण सीबीआई की विश्वसनीयता और विश्वास में गंभीर रूप से कमी आई है।
  - एक स्वतंत्र और पेशेवर एजेंसी के रूप में सीबीआई, जो न्याय प्रदान कर सकती है और भ्रष्टाचार से लड़ सकती हैं , के प्रति जनता का विश्वास और सम्मान खो गया है।
- **न्यायिक हस्तक्षेप:**
  - सीबीआई के संकट ने सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालयों, केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC), आदि द्वारा लगातार न्यायिक हस्तक्षेप और जाँच को आमंत्रित किया है।
  - न्यायपालिका द्वारा अक्सर विभिन्न मामलों में सीबीआई के कार्यों और निर्णयों की आलोचना, निंदा की गई है।
  - यह जनहित और कानून के अनुसार अपने कर्त्तव्यों को निभाने में सीबीआई की विफलता को दर्शाता है।
- **शासन पर प्रभाव:**
  - सीबीआई के संकट ने देश के शासन और प्रशासन को भी प्रभावित किया है।
  - सीबीआई की जाँचों ने लोक सेवकों, राजनेताओं, व्यापारियों आदि, जो विभिन्न मामलों में शामिल हैं या उन पर आरोप लगाएँ गए हैं, के बीच भय और अनिश्चितता का माहौल पैदा कर दिया है।

- यह उनकी दक्षता और प्रभावशीलता को बाधित करता है तथा उनके मनोबल और प्रेरणा को कम करता है।

सीबीआई के सार्वजनिक विश्वास और प्रतिष्ठा को बहाल करने के उपाय:

- **वैधानिक स्थिति:**
  - एक अलग कानून बनाकर सीबीआई को वैधानिक दर्जा प्रदान किया जाना चाहिये, जो इसकी शक्तियों, कार्यों, अधिकार क्षेत्र और सीमाओं को परिभाषित करता हो।
  - यह इसके अस्तित्व और संचालन के लिये एक कानूनी आधार प्रदान कर इसे राजनीतिक हस्तक्षेप से अलग करेगा।
- **चयन समिति:**
  - सीबीआई निदेशक और अन्य वरिष्ठ अधिकारियों की नियुक्ति एक उच्चाधिकार प्राप्त चयन समिति, जिसमें कार्यपालिका, न्यायपालिका और विधायिका के प्रतिनिधि शामिल हों, द्वारा की जानी चाहिये।
  - यह शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के अनुरूप एक व्यापक-आधारित और पारदर्शी चयन प्रक्रिया सुनिश्चित करेगा।
- **निश्चित कार्यकाल:**
  - सीबीआई निदेशक और अन्य वरिष्ठ अधिकारियों को मनमाने स्थानांतरण या निष्कासन से सुरक्षा प्रदान कर कम से कम पाँच वर्ष का निश्चित कार्यकाल सुनिश्चित किया जाना चाहिये।
  - यह उनकी स्थिरता और सेवा की सुरक्षा को बढ़ाएगा और उन्हें बिना किसी भय या पक्षपात के अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में सक्षम बनाएगा।
- **वित्तीय स्वायत्तता:**
  - संसद द्वारा अनुमोदित अपना बजट प्रस्तुत करने की अनुमति देकर सीबीआई को वित्तीय स्वायत्तता प्रदान की जानी चाहिये।
  - इससे वित्त और संसाधनों हेतु केंद्र सरकार पर इसकी निर्भरता कम हो जाएगी और यह अपनी गतिविधियों की योजना बनाने और कुशलता से निष्पादित करने में सक्षम होगा।
- **निगरानी निकाय:**
  - सीबीआई को एक स्वतंत्र निगरानी निकाय के प्रति जवाबदेह होना चाहिये, जो नियमित आधार पर उसके प्रदर्शन और आचरण की निगरानी करता हो।
  - यह निकाय एक संसदीय समिति या एक वैधानिक प्राधिकरण हो सकता है जिसमें विभिन्न पृष्ठभूमि और विशेषज्ञता के सदस्य होते हो।
  - इससे यह सुनिश्चित होगा कि सीबीआई कानून और जनहित के अनुसार कार्य करे और किसी भी चूक या उल्लंघन के लिये जवाबदेह हो।

निष्कर्ष:

सीबीआई भ्रष्टाचार से लड़ने, जवाबदेही सुनिश्चित करने और न्याय देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालाँकि, सीबीआई विभिन्न कारकों के कारण विश्वसनीयता और आत्मविश्वास के संकट का सामना कर रही है, जिसने इसकी स्वतंत्रता, व्यावसायिकता और अखंडता को कमज़ोर कर दिया है। इसलिये इस संकट के कारणों और परिणामों को संबोधित करते हुए ऊपर सुझाए गए उपायों को लागू कर सीबीआई में सुधार करने की आवश्यकता है। यह सीबीआई के सार्वजनिक विश्वास और प्रतिष्ठा को बहाल करेगा और इसे अपने जनादेश तथा मिशन को प्रभावी ढंग एवं कुशलता से पूरा करने को सक्षम बनाएगा।

Q15. भारत में केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC) की मुख्य विशेषताएँ और कार्य क्या हैं? सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा और जवाबदेही सुनिश्चित करने में यह कितना प्रभावी रहा है? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC) का संक्षिप्त में परिचय देकर अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- इसकी प्रमुख विशेषताओं एवं कार्यों की व्याख्या कीजिये।
- कुछ ऐसे उदाहरण लिखिये जिनमें सीवीसी ने सत्यनिष्ठा और जवाबदेही सुनिश्चित करने में भूमिका निभाई हो।
- उपयुक्त निष्कर्ष लिखिये।

भूमिका:

- केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC) भारत में शीर्ष भ्रष्टाचार विरोधी निकाय है, जो केंद्र सरकार और उसके संगठनों के सतर्कता प्रशासन पर अधीक्षण करता है। इसकी स्थापना एक कार्यकारी प्रस्ताव द्वारा वर्ष 1964 में संथानम समिति की सिफारिश पर की गई थी तथा सीवीसी अधिनियम, 2003 द्वारा इसे वैधानिक दर्जा प्रदान किया गया था।

मुख्य भाग:

सीवीसी की मुख्य विशेषताएँ और कार्य:

- **संरचना:**
  - सीवीसी में एक केंद्रीय सतर्कता आयुक्त (अध्यक्ष) और अधिकतम दो सतर्कता आयुक्त (सदस्य) शामिल होते हैं, जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा एक समिति की सिफारिश पर की जाती है जिसमें प्रधानमंत्री (अध्यक्ष), गृह मंत्री (सदस्य) और लोकसभा में विपक्ष के नेता (सदस्य) शामिल होते हैं।
  - वे चार वर्ष या 65 वर्ष की आयु तक, जो भी पहले हो, पद धारण करते हैं।

- **क्षेत्राधिकार:**
  - सशस्त्र बलों के सदस्यों और सभी केंद्र सरकार के संगठनों, निगमों, समाजों, स्थानीय प्राधिकरणों आदि को छोड़कर केंद्र सरकार के सभी कर्मचारियों सीवीसी के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत आते है।
  - सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, राष्ट्रीयकृत बैंकों और बीमा कंपनियों के कर्मचारियों भी इसके क्षेत्राधिकार में शामिल है।
- **कार्य:**
  - सतर्कता नीति, मानदंडों और प्रक्रियाओं से संबंधित मामलों पर केंद्र सरकार को सलाह देना।
  - लोक सेवकों के खिलाफ भ्रष्टाचार या कदाचार की शिकायतें प्राप्त करना और उनकी जाँच या निरीक्षणकरना।
  - भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत मामलों के संबंध में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) के कामकाज पर अधीक्षण का प्रयोग करना।
  - लोक सेवकों के विरुद्ध अनुशासनात्मक मामलों की प्रगति की समीक्षा करना और उनके शीघ्र निपटान के लिये निर्देश जारी करना।
  - भ्रष्टाचार या कदाचार के दोषी पाए गए लोक सेवकों के खिलाफ उचित कार्रवाई की सिफारिश करना।
  - भ्रष्टाचार का पता लगाने और रोकने के लिये निवारक सतर्कता उपाय जैसे निरीक्षण, लेखा परीक्षा, समीक्षा आदि करना।
  - लोक सेवकों और नागरिकों को भ्रष्टाचार के दुष्परिणामों और सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा और ईमानदारी के महत्त्व के बारे में शिक्षित कर जागरूकता पैदा करना।

सीवीसी लोक सेवकों से जुड़े भ्रष्टाचार और कदाचार के विभिन्न मामलों को उज़ागर करके और दंडित करके सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी और जवाबदेही सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। जिसके कुछ निम्नलिखित उदाहरण हैं:

- **2जी स्पेक्ट्रम घोटाला:**
  - सीवीसी द्वारा इसमामले को जाँच के लिये सीबीआई को भेज दिया और इसके मामले की निगरानी की, साथ ही सीवीसी द्वारा अपने निष्कर्षों और सिफारिशों पर सर्वोच्च न्यायालय को एक रिपोर्ट भी सौंपी गई।
- **कोयला आवंटन घोटाला:**
  - सीवीसी द्वारा इसमामले को जाँच के लिये सीबीआई को भेज दिया और इसके मामले की निगरानी की, साथ ही सीवीसी द्वारा अपने निष्कर्षों और सिफारिशों पर सर्वोच्च न्यायालय को एक रिपोर्ट भी सौंपी गई।
- **राष्ट्रमंडल खेल घोटाला:**
  - सीवीसी द्वारा खेलों के विभिन्न पहलुओं जैसे बुनियादी ढाँचे के विकास, खरीद, अनुबंध आदि में निरीक्षण, ऑडिट, पूछताछ और जाँच की गई, जिसके कारण सुरेश कलामाड़ी को दोषी ठहराया गया।

निष्कर्ष:

केंद्रीय सतर्कता आयोग के पास सीमित शक्तियाँ होती है क्योंकि यह एक सलाहकार निकाय के रूप में कार्य करता है जिसके पास मामला दर्ज करने की कोई शक्ति नहीं होती है। भले ही यह एक स्वतंत्र एजेंसी है, इसके पास शिकायतों पर कार्रवाई करने के लिये संसाधनों और शक्ति का अभाव है।

अत: तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था में भ्रष्टाचार को रोकने के लिये आयोग की ऐसी कमियों को दूर करने की ज़रूरत है।

Q16. हिंद-प्रशांत क्षेत्र से संबंधित भारत की चुनौतियाँ और अवसर क्या हैं? भारत के रणनीतिक हितों को उन्नत करने में क्वाड (QUAD) की भूमिका पर चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र से संबंधित भारत की चुनौतियों और अवसरों पर चर्चा कीजिये।
- इस क्षेत्र में क्वाड की भूमिका पर चर्चा कीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- हिंद-प्रशांत क्षेत्र एक विशाल समुद्री क्षेत्र है जो अफ्रीका के पूर्वी तट से पश्चिमी प्रशांत महासागर तक विस्तारित है, जिसमें हिंद महासागर और उसके आस-पास के समुद्री क्षेत्र शामिल हैं। यह भू-रणनीतिक महत्त्व का क्षेत्र है क्योंकि यह क्षेत्र विश्व की आधी से अधिक आबादी, व्यापार और सकल घरेलू उत्पाद का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें चीन, जापान, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया और अमेरिका जैसी कई उभरती और स्थापित शक्तियों के हित निहित हैं।
- लंबी तटरेखा के साथ भारत की हिंद-प्रशांत क्षेत्र की शांति और स्थिरता में महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

मुख्य भाग:

- **चुनौतियाँ:**
  - दक्षिण चीन सागर, पूर्वी चीन सागर और हिंद महासागर में चीन के आक्रामक और विस्तारवादी व्यवहार के कारण इस क्षेत्र में नेविगेशन की स्वतंत्रता, समुद्री सुरक्षा और अन्य देशों की संप्रभुता के समक्ष खतरा उत्पन्न होता है।

- हिंद-प्रशांत क्षेत्र के देशों के बीच आम समझ और समन्वय का अभाव है जिससे क्षेत्रीय सहयोग और एकीकरण में बाधा होती है।
- आतंकवाद, समुद्री डकैती, साइबर हमले, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाएँ और महामारी जैसे गैर-पारंपरिक सुरक्षा खतरों के उदय से इस क्षेत्र के लिये चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं।
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र के देशों के बीच असमान विकास से कुछ वर्गों में सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को बढ़ावा मिला है।

- **अवसर:**
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र के देशों के बीच व्यापार, निवेश, कनेक्टिविटी और लोगों से लोगों के संबंधों को बढ़ाने की क्षमता है (विशेष रूप से बुनियादी ढाँचे, ऊर्जा, डिजिटल अर्थव्यवस्था, नीली अर्थव्यवस्था और पर्यटन जैसे क्षेत्रों में)।
  - नियम-आधारित व्यवस्था, समुद्री सुरक्षा और क्षेत्रीय स्थिरता को बढ़ावा देने के लिये हिंद-प्रशांत क्षेत्र में जापान, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, वियतनाम और अमेरिका जैसे समान विचारधारा वाले देशों के साथ रणनीतिक साझेदारी और बहुपक्षीय तंत्र को मजबूत करने का अवसर है।
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपनी छवि और प्रभाव को बढ़ाने के लिये भारत के पास लोकतंत्र, विविधता, संस्कृति और विकास सहायता के रूप में अपनी सॉफ्ट पावर का लाभ उठाने का अवसर है।
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र की कुछ आम चुनौतियों को हल करने के लिये अंतरिक्ष, परमाणु ऊर्जा, नवीकरणीय ऊर्जा और जैव प्रौद्योगिकी के संदर्भ में भारत की वैज्ञानिक और तकनीकी क्षमताओं का उपयोग करने की संभावना है।

- **Quad की भूमिका:**
  - क्वाड चार लोकतांत्रिक देशों (भारत, जापान, ऑस्ट्रेलिया और अमेरिका) का एक अनौपचारिक समूह है जो हिंद-प्रशांत क्षेत्र में समान हितों और मूल्यों को साझा करते हैं।
  - चीन की बढ़ती आक्रामकता और क्षेत्रीय व्यवस्था की चुनौतियों के आलोक में एक दशक के लंबे अंतराल के बाद वर्ष 2017 में क्वाड को मज़बूत किया गया था।
  - क्वाड का उद्देश्य संप्रभुता, अंतर्राष्ट्रीय कानून और विवादों के शांतिपूर्ण समाधान के सम्मान के आधार पर एक स्वतंत्र, खुले और समावेशी हिंद-प्रशांत क्षेत्र को बनाए रखना है।
  - क्वाड समूह समुद्री सुरक्षा, आतंकवाद-रोधी, साइबर सुरक्षा, मानवीय सहायता और आपदा राहत, कनेक्टिविटी एवं बुनियादी ढाँचे के विकास, जलवायु परिवर्तन शमन और अनुकूलन, वैक्सीन कूटनीति, महत्त्वपूर्ण प्रौद्योगिकियों, शिक्षा जैसे विभिन्न डोमेन पर सहयोग बढ़ाने पर केंद्रित है।
  - क्वाड हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के रणनीतिक हितों को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है जैसे:
    - क्षेत्रीय मुद्दों पर अन्य प्रमुख शक्तियों के साथ बातचीत और समन्वय के लिये एक मंच प्रदान करना
    - इस क्षेत्र में चीन के प्रभुत्व और आक्रामकता का प्रतिरोध करना
    - इस क्षेत्र के अन्य देशों के साथ भारत के आर्थिक अवसरों को बढ़ाने के साथ कनेक्टिविटी का विस्तार करना
    - विभिन्न क्षेत्रों में भारत की क्षमता निर्माण और लचीलेपन का समर्थन करना
    - वैश्विक मुद्दों पर भारत के दृष्टिकोण को बढ़ावा देना

निष्कर्ष:

क्वाड भारत की हिंद-प्रशांत रणनीति का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है जो भारत को इस क्षेत्र में अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद कर सकता है। हालाँकि इसे एक विशिष्ट या विरोधी गुट के रूप में नहीं देखा जाना चाहिये बल्कि एक खुले, लचीले, सहकारी, परामर्शी, रचनात्मक, विश्वसनीय, सुसंगत और आत्मविश्वासपूर्ण तंत्र के रूप में देखा जाना चाहिये जो विविधता और संप्रभुता के सम्मान पर आधारित हो।

Q17. भारतीय संसदीय प्रणाली में राज्यसभा की भूमिका और प्रासंगिकता का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये। इसकी प्रभावशीलता और जवाबदेहिता बढ़ाने हेतु आवश्यक सुधारों के बारे में बताइये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- राज्यसभा का संक्षिप्त में परिचय देकर अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- राज्यसभा की भूमिका एवं प्रासंगिकता स्पष्ट कीजिये।
- राज्यसभा से संबंधित कुछ सुधार सुझाएँ।
- उपयुक्त निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

राज्यसभा या राज्यपरिषद भारतीय संसद का उच्च सदन है, जो संघीय व्यवस्था में राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों के हितों का प्रतिनिधित्व करती है। यह एक स्थायी सदन है जो विघटित नहीं होती है, बल्कि इसके एक तिहाई सदस्य हर दूसरे वर्ष के बाद सेवानिवृत्त हो जाते हैं।

मुख्य भाग:

- **भूमिका और प्रासंगिकता:**
  - **कानून का निर्माण करना:**
    - राज्यसभा लोकसभा या निचले सदन के साथ विधायी प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाती है।

- यह धन विधेयक को छोड़कर, जो कि लोकसभा का विशेष विधेयक है, किसी भी विधेयक को शुरू, संशोधित या अस्वीकार कर सकती है। इसके लिये 14 दिनों के भीतर अपनी अनुशंसाओं के साथ या उसके बिना विधेयक को लोकसभा को वापस भेजना अनिवार्य है।
- हालाँकि, किसी विधेयक पर दोनों सदनों के बीच गतिरोध की स्थिति में, संयुक्त बैठक बुलाई जा सकती है, जहाँ लोकसभा को अधिक संख्या और अपने बड़े आकार के कारण लाभ होता है।
- इसके अलावा, राज्यसभा संवैधानिक संशोधन विधेयकों, जिसके लिये दोनों सदनों में विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है, को शुरू या संशोधित नहीं कर सकती है।

नियंत्रण:

- राज्यसभा प्रश्न पूछकर, प्रस्ताव शुरू करके, संकल्प पारित करके, चर्चा की मांग आदि द्वारा कार्यपालिका पर निगरानी रखती है।
- सरकार के गठन या विघटन में राज्यसभा की कोई भूमिका नहीं होती है, सरकार का गठन या विघटन केवल लोकसभा में बहुमत के समर्थन पर निर्भर करता है।

प्रतिनिधित्व:

- राज्यसभा, राष्ट्रीय विधायिका में राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को प्रतिनिधित्व देकर भारत के संघीय सिद्धांत और विविधता को प्रदर्शित करती है।
- यह अपनी संरचना में विभिन्न दलों, समूहों और हितों को समायोजित करके भारत के बहुलवाद और विविधता को भी दर्शाती है।
- हालाँकि, राज्यसभा में राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों का प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के अनुपात में नहीं है, क्योंकि 250 निर्वाचित सदस्यों की सीमा है और प्रत्येक राज्य तथा केंद्र शासित प्रदेश के लिये न्यूनतम एक सदस्य है।
- इसके अलावा, ऐतिहासिक कारणों या राजनीतिक गणनाओं के कारण कुछ राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों का राज्यसभा में प्रतिनिधित्व अधिक या कम है।

विचार विमर्श :

- राज्यसभा राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के विभिन्न मुद्दों पर बहस और चर्चा के सदन के रूप में कार्य करती है।
- यह विविध विचारों और राय को व्यक्त करने के साथ-साथ नीतियों और कानूनों की जाँच और सुधार के लिये एक मंच प्रदान करती है।
- इसे अपने सदस्यों, विशेषकर नामांकित सदस्यों की विशेषज्ञता और अनुभव से भी लाभ मिलता है, जो अपने ज्ञान और अंतर्दृष्टि से इसके विचार-विमर्श को समृद्ध करते हैं।
- हालाँकि, बार-बार होने वाले व्यवधान, पक्षपातपूर्ण राजनीति, शिष्टाचार की कमी, कोरम की अनुपस्थिति, नियमों का दुरुपयोग आदि जैसे कारकों के कारण समय के साथ राज्यसभा में विचार-विमर्श की गुणवत्ता और मात्रा में गिरावट आई है।

सुधार:

कानून निर्माण को सुदृढ़ बनाना:

- राज्यसभा को कानून बनाने में अधिक शक्तियाँ और स्वायत्तता दी जानी चाहिये, खासकर राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों से संबंधित मामलों पर। संयुक्त बैठक बुलाने या संवैधानिक संशोधन विधेयक पारित करने से पहले भी इससे परामर्श किया जाना चाहिये।
- इसे धन विधेयक पर भी अधिक अधिकार होना चाहिये, जिसमें अक्सर गैर-वित्तीय मामले शामिल होते हैं जो इसके अधिकार क्षेत्र को प्रभावित करते हैं।

पर्यवेक्षण में वृद्धि:

- राज्यसभा को विभिन्न संसदीय उपकरणों और तंत्रों का उपयोग करके कार्यपालिका की देखरेख में अधिक सक्रिय और प्रभावी होना चाहिये।
- न्यायाधीशों, चुनाव आयुक्तों, सीएजी, सीवीसी आदि जैसे प्रमुख संवैधानिक पदाधिकारियों की नियुक्ति और निष्कासन में भी इसकी अधिक भूमिका और प्रभाव होना चाहिये।
- शिकायत संबंधी जाँच को सक्षम करने के लिये सूचना और दस्तावेज़ों तक इसकी अधिक पहुंच होनी चाहिये।

प्रतिनिधित्व में वृद्धि:

- राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों का उनकी जनसंख्या के अनुपात में निष्पक्ष और न्यायसंगत प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिये राज्यसभा में सुधार किया जाना चाहिये।
- इसमें महिलाओं, अल्पसंख्यकों, पिछड़े वर्गों आदि का पर्याप्त प्रतिनिधित्व भी सुनिश्चित करना चाहिये।
- इसे राजनीतिक संबद्धता या हितों के टकराव वाले व्यक्तियों के नामांकन से भी बचना चाहिये।

विचार-विमर्श को बढ़ावा देना:

- राज्यसभा को संसदीय आचरण के नियमों और मानदंडों का पालन करते हुए अपने सदस्यों के बीच बहस और संवाद की संस्कृति को बढ़ावा देना चाहिये।
- अनुपस्थिति या अनुशासनहीनताकी स्थिति में सदस्यों पर दंड आरोपित करने के माध्यम से इसे अपने सदस्यों की अधिक भागीदारी और उपस्थिति को प्रोत्साहित करना चाहिये।

- इसे अपनी विचार-विमर्श क्षमता और आउटरीच को बढ़ाने के लिये प्रौद्योगिकी एवं नवाचार का भी लाभ उठाना चाहिये।

निष्कर्ष:

राज्यसभा भारतीय संसदीय प्रणाली का एक अभिन्न और अपरिहार्य हिस्सा है जो देश के शासन तथा विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँनिभाती है। यह भारत की संघवाद और विविधता का भी प्रतीक है जो इसके संवैधानिक मूल्यों और दृष्टि को दर्शाता है। हालाँकि, इसे कुछ चुनौतियों और सीमाओं का भी सामना करना पड़ता है जो इसकी प्रभावशीलता एवं जवाबदेही में बाधा डालती हैं। इसलिये, लोगों और राष्ट्र की अपेक्षाओं तथा आकांक्षाओं को पूरा करने के लिये इसमें सुधार करने और इसे पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है।

Q18. डिजिटल युग में ऑनलाइन मुक्त भाषण (Online free speech) के निहितार्थों पर चर्चा कीजिये। लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देने में इसकी भूमिका को बताते हुए इसके विनियमन एवं शासन के समक्ष इससे उत्पन्न चुनौतियों का परीक्षण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- परिचय: ऑनलाइन मुक्त भाषण और इसके महत्त्व का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- मुख्य भाग: ऑनलाइन मुक्त भाषण के निहितार्थ और भूमिका को बताते हुए इसके द्वारा शासन के समक्ष उत्पन्न होने वाली चुनौतियों पर चर्चा कीजिये।
- निष्कर्ष: आगे की राह बताते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- संविधान का अनुच्छेद 19(1)(a) सभी नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार प्रदान करता है। ऑनलाइन मुक्त भाषण से तात्पर्य इंटरनेट पर अपनी राय एवं विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने की क्षमता से है। डिजिटल युग में ऑनलाइन प्लेटफॉर्म व्यक्तियों द्वारा अपनी राय व्यक्त करने और सार्वजनिक चर्चा में भाग लेने के एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरा है। इसने लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

मुख्य भाग:

डिजिटल युग में ऑनलाइन मुक्त भाषण के निहितार्थ और भूमिका:

- इससे सूचनाओं के लोकतांत्रीकरण को प्रोत्साहन मिलता है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म, ब्लॉग और ऑनलाइन फोरम के माध्यम से व्यक्ति अपने विचारों, अनुभवों और दृष्टिकोणों को वैश्विक स्तर पर साझा कर सकते हैं।
- इससे लोग सरकारों और अन्य हितधारकों को उनके कार्यों और नीतियों हेतु जवाबदेह ठहराने में सक्षम हो पाते हैं।
- ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से भ्रष्टाचार, मानवाधिकारों के हनन और अन्य सरकारी भ्रष्टाचार उजागर होने के साथ पारदर्शिता और जवाबदेहिता को बढ़ावा मिलता है।
- इससे सत्ता के दुरुपयोग पर रोक लगती है और पारदर्शिता, न्याय तथा विधि के शासन जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा मिलता है।
- इससे लोग सामाजिक और राजनीतिक उद्देश्यों के लिये खुद को संगठित करने हेतु सक्षम होते हैं जिससे सामाजिक आंदोलनों के साथ इनकी सक्रियता को बढ़ावा मिलता है।
- इससे अधिक समावेशी और सहभागी लोकतंत्र के विकास में योगदान मिलता है।

इसके विनियमन और शासन के समक्ष इससे उत्पन्न चुनौतियाँ:

- **गलत सूचना और दुष्प्रचार:** डिजिटल युग में गलत सूचनाओं के प्रसार में तीव्रता आई है जिससे निर्णय लेने की प्रक्रियाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।
- **हेट स्पीच और हिंसा जैसी गतिविधियों को बढ़ावा मिलना:** ऑनलाइन प्लेटफॉर्म हेट स्पीच और हिंसा जैसी गतिविधियों को बढ़ावा देने में भूमिका निभाते हैं।
- **जवाबदेहिता का अभाव:** ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर सामग्री के मूल स्रोत का पता न लग पाने से जवाबदेहिता का अभाव बना रहता है।
- **क्षेत्राधिकार संबंधी जटिलताएँ:** इंटरनेट का विस्तार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने के कारण इसके विनियमन में जटिलताएँ आती हैं। विभिन्न देशों में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के संबंध में अलग-अलग विधिक ढाँचे और सांस्कृतिक मानदंड मौजूद हैं।
- **गोपनीयता संबंधी चिंताएँ:** ऑनलाइन मुक्त भाषण में अक्सर व्यक्तिगत जानकारी का आदान-प्रदान होने से गोपनीयता संबंधी चिंताएँ पैदा होती हैं।
- **नैतिक और कानूनी जटिलताएँ:** ऑनलाइन मुक्त भाषण से जटिल नैतिक और कानूनी प्रश्न उठते हैं।

निष्कर्ष:

ऑनलाइन मुक्त भाषण डिजिटल युग का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है लेकिन इसके विनियमन के साथ इससे शासन के समक्ष कई चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करने और इंटरनेट पर नकारात्मक सामग्री के प्रसार की समस्या के समाधान हेतु हेट स्पीच, इंटरनेट की क्षेत्राधिकार संबंधी जटिलताओं एवं गोपनीयता संबंधी चिंताओं जैसे मुद्दों पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। ऑनलाइन मुक्त भाषण की सीमाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने वाला एक नया डिजिटल इंडिया अधिनियम लाया जाना, समय की मांग है।

Q19. क्या आप इस बात से सहमत हैं कि भारत को NATO+ में शामिल नहीं होना चाहिये? अपने उत्तर के पक्ष में कारण भी दीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- परिचय: NATO+ समूह के बारे में संक्षिप्त रूप से बताने के साथ इसमें शामिल होने के फायदों का उल्लेख करते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- मुख्य भाग: उन कारणों पर चर्चा कीजिये जिनसे भारत को NATO+ समूह में शामिल नहीं होना चाहिये।
- निष्कर्ष: आगे की राह बताते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

NATO+ के तहत उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (NATO) और पाँच देशों अर्थात् ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, जापान, इज़राइल एवं दक्षिण कोरिया शामिल हैं। इस समूह का प्राथमिक उद्देश्य वैश्विक रक्षा सहयोग को बढ़ाना है। NATO+ में सदस्यता से सदस्यों को कई फायदे मिलते हैं जैसे खुफिया जानकारी साझा करना, अत्याधुनिक सैन्य प्रौद्योगिकी तक पहुँच प्राप्त होना तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ मजबूत रक्षा साझेदारी को बढ़ावा मिलना।

मुख्य भाग:

इसके कई फायदे होने के बावजूद, भारत को निम्नलिखित कारणों से NATO+ में शामिल नहीं होना चाहिये:

- **कूटनीतिक स्वायत्तता में कमी आना:** भारत ने हमेशा से ही अपने विदेश संबंधों में गुटनिरपेक्षता और कूटनीतिक स्वायत्तता की नीति का पालन किया है। NATO+ में शामिल होने से भारत के हितों एवं मूल्यों की स्वतंत्रता से समझौता होगा, क्योंकि इससे इस गठबंधन के सामूहिक निर्णयों और कार्यों से सहमत होना होगा।
- **क्षेत्रीय गतिशीलता:** भारत अपनी जटिल सुरक्षा चुनौतियों के साथ भू-राजनीतिक रूप से संवेदनशील क्षेत्र में स्थित है। NATO+ में शामिल होने से पड़ोसी देशों (विशेषकर चीन) के साथ इसके संबंध जटिल हो सकते हैं जिससे तनाव बढ़ने के साथ क्षेत्रीय स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।
- **विविध सुरक्षा साझेदारियों पर प्रभाव:** भारत का विभिन्न देशों के साथ द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सुरक्षा साझेदारियों का एक लंबा इतिहास है। NATO+ में शामिल होने से यह धारणा बन सकती है कि भारत पश्चिमी शक्तियों के साथ अधिक निकटता से जुड़ रहा है, जिससे संभावित रूप से रूस जैसे अन्य महत्त्वपूर्ण साझेदारों के साथ इसके रिश्ते तनावपूर्ण हो सकते हैं।
- **इससे भारत अन्य संघर्षों में उलझ सकता है:** इससे भारत को वाशिंगटन संधि के अनुच्छेद 5 का भी पालन करना होगा, जिसमें कहा गया है कि इसके किसी सदस्य के खिलाफ सशस्त्र हमला सभी सदस्यों के खिलाफ हमला माना जाएगा। यह भारत को ऐसे संघर्षों में उलझा सकता है जो प्रत्यक्ष रूप से इसकी सुरक्षा या हितों से संबंधित नहीं हैं।
- **पारस्परिक लाभ का अभाव:** अमेरिका और जापान को छोड़कर भारत NATO+ के अधिकांश सदस्यों के साथ बहुत अधिक समानता नहीं रखता है। भारत की सुरक्षा चिंताएँ और प्राथमिकताएँ यूरोप, इज़राइल या दक्षिण कोरिया से भिन्न हैं।
- **यह भारत के लिये बहुत अधिक सार्थक नहीं हो सकता है:** पहले से ही इनमें से कई देशों के साथ भारत की द्विपक्षीय या बहुपक्षीय रक्षा साझेदारी है जैसे कि क्वाड, मालाबार अभ्यास और रक्षा व्यापार समझौते। NATO+ में शामिल होने से भारत के मौजूदा रक्षा सहयोग में कोई खास उन्नति नहीं होगी।

निष्कर्ष:

भारत को अपनी कूटनीतिक स्वायत्तता को प्राथमिकता देनी चाहिये और अपनी गुटनिरपेक्ष विदेश नीति के रुख को बनाए रखना चाहिये। कुछ विशिष्ट मुद्दों पर NATO+ सदस्यों का सहयोग मूल्यवान है लेकिन इसकी पूर्ण सदस्यता से भारत को लाभ की तुलना में अधिक कीमत चुकानी पड़ सकती है। इसके बजाय भारत को अपने राष्ट्रीय हितों और उद्देश्यों के आधार पर स्थितियों के अनुसार NATO+ के सदस्यों के साथ समन्वय बनाए रखना चाहिये।

Q20. भारत में पंचायती राज संस्थाओं के समक्ष विद्यमान चुनौतियों का मूल्यांकन कीजिये। भारत में पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने हेतु आवश्यक उपाय बताइये? (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- भारत में पंचायती राज संस्थाओं के बारे में संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- पंचायती राज संस्थाओं के समक्ष आने वाली चुनौतियाँ बताइये।
- पंचायती राज व्यवस्था को मज़बूत करने के लिये आवश्यक उपाय सुझाइये।
- तदनुसार निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

- 73वें संविधान संशोधन अधिनियम,1992 द्वारा भारत में पंचायती राज संस्थानों (PRIs) की अवधारणा प्रस्तुत की गई, जिसका उद्देश्य सत्ता का विकेंद्रीकरण करना और जमीनी स्तर पर शासन को मज़बूत करना था।

- पंचायती राज व्यवस्था को मज़बूत करने के लिये PRIs के प्रदर्शन का मूल्यांकन करने के साथ इनके समक्ष आने वाली चुनौतियों की पहचान करना आवश्यक है।

मुख्य भाग:

पंचायती राज संस्थाओं के समक्ष चुनौतियाँ:

- **वित्तीय निर्भरता:**
  - राज्य सरकारों से धन के अपर्याप्त अंतरण के कारण PRIs को अक्सर वित्तीय बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जिससे स्थानीय विकास परियोजनाओं को प्रभावी ढंग से निष्पादित करने की इनकी क्षमता सीमित हो जाती है।
- **प्रशासनिक एवं राजनीतिक हस्तक्षेप:**
  - सरकार के अधिक हस्तक्षेप, नौकरशाही बाधाएँ और राजनीतिक प्रभाव से अक्सर PRIs की स्वायत्तता और निर्णय लेने की क्षमता कमजोर होती है।
- **सामाजिक और लैंगिक पूर्वाग्रह:**
  - सामाजिक पदानुक्रम और भेदभाव (खासकर महिलाओं की भागीदारी और प्रतिनिधित्व के मामले में) से PRIs के प्रभावी कार्य में बाधा उत्पन्न होती है।
- **क्षमता निर्माण:**
  - निर्वाचित प्रतिनिधियों और पदाधिकारियों के लिये अपर्याप्त प्रशिक्षण के साथ कौशल विकास कार्यक्रम की कमी से वह प्रभावी ढंग से अपना कार्य नहीं कर पाते हैं।

पंचायती राज व्यवस्था को मज़बूत करने के उपाय:

- **पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराना:**
  - वित्तीय प्रबंधन में पारदर्शिता और जवाबदेही के साथ-साथ PRIs को धन का पर्याप्त और समय पर अंतरण सुनिश्चित करना उनके प्रभावी कार्य हेतु महत्त्वपूर्ण है।
- **क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण:**
  - कौशल, नेतृत्व क्षमताओं और स्थानीय विकास के मुद्दों से संबंधित ज्ञान को बढ़ाने के लिये निर्वाचित प्रतिनिधियों और पदाधिकारियों को सशक्त बनाना आवश्यक है।
- **स्वायत्तता और विकेंद्रीकरण:**
  - नौकरशाही के हस्तक्षेप और राजनीतिक प्रभाव को कम करके PRIs की स्वायत्तता को मज़बूत करने से यह स्वतंत्र रूप से अपनी शक्तियों का उपयोग करने में सक्षम होंगे।
- **सामाजिक समावेशन और लैंगिक समानता:**
  - महिलाओं की भागीदारी को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करके, समान प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करके और सामाजिक पूर्वाग्रहों और भेदभाव की समस्या को हल करके समावेशी और उत्तरदायी शासन को बढ़ावा दिया जा सकता है।
- **निरीक्षण तंत्र को सुदृढ़ बनाना:**
  - PRIs के प्रदर्शन पर नज़र रखने, पारदर्शिता को बढ़ावा देने और निर्वाचित प्रतिनिधियों को उनके कार्यों के लिये जवाबदेह ठहराने हेतु मज़बूत निगरानी और मूल्यांकन तंत्र स्थापित करना आवश्यक है।
- **सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) का समन्वय:**
  - PRIs में पारदर्शिता, सूचना तक पहुँच और सेवा वितरण में सुधार के लिये प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना चाहिये जिससे नागरिक स्थानीय शासन में सक्रिय रूप से शामिल होने में सक्षम होंगे।

निष्कर्ष:

73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के बाद से पंचायती राज संस्थाओं ने जमीनी स्तर पर लोकतंत्र और स्थानीय विकास को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण प्रगति की है। हालाँकि वित्तीय निर्भरता, क्षमता निर्माण की कमी, प्रशासनिक हस्तक्षेप और सामाजिक पूर्वाग्रह जैसी चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं। पर्याप्त संसाधन, क्षमता निर्माण, स्वायत्तता, सामाजिक समावेश सुनिश्चित करने के साथ प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर, भारत में पंचायती राज प्रणाली को मज़बूत करने के साथ स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाया जा सकता है और जमीनी स्तर पर भागीदारीपूर्ण लोकतंत्र को बढ़ावा दिया जा सकता है।

Q21. हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के समक्ष विद्यमान चुनौतियों और अवसरों का विश्लेषण कीजिये। भारत इस क्षेत्र में अपने रणनीतिक और आर्थिक हितों का लाभ किस प्रकार उठा सकता है? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- हिंद-प्रशांत क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के समक्ष उपलब्ध चुनौतियों और अवसरों पर चर्चा कीजिये।
- हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के सामरिक और आर्थिक हितों की व्याख्या कीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

"हिंद-प्रशांत" शब्द दो महासागरों के परस्पर समन्वय से संबंधित है और इस क्षेत्र में एक प्रमुख हितधारक के रूप में भारत की भूमिका निर्णायक है। चीन के उदय, शक्ति असंतुलन एवं समुद्री विवादों के कारण हिंद-प्रशांत क्षेत्र ने विभिन्न देशों का ध्यान आकर्षित किया है। भारत, जापान, ऑस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य अमेरिका सहित विभिन्न देशों ने

स्थिरता बनाए रखने और साझा समृद्धि को बढ़ावा देने के लिये इस क्षेत्र की सुरक्षा और आर्थिक स्थिरता को आकार देने में गहरी रुचि दिखाई है।

मुख्य भाग:

हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के समक्ष चुनौतियाँ:

- **भू-राजनीतिक प्रतिस्पर्द्धा:**
  - इस क्षेत्र में प्रभाव और नियंत्रण के लिये चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसी प्रमुख शक्तियों के बीच तीव्र प्रतिस्पर्धा देखी जाती है, जिससे संतुलित दृष्टिकोण बनाए रखने में भारत के समक्ष चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं।
- **समुद्री सुरक्षा:**
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र से महत्त्वपूर्ण समुद्री मार्ग गुजरते हैं जिससे भारत को समुद्री डकैती, आतंकवाद और क्षेत्रीय विवादों से संबंधित चुनौतियों का सामना करना पड़ता है और इससे समुद्री सुरक्षा एवं नेविगेशन की स्वतंत्रता प्रभावित होती है।
- **आर्थिक एकीकरण:**
  - जटिल व्यापार समझौतों, नियामक बाधाओं और देशों के बीच अलग-अलग आर्थिक प्रणालियों के कारण भारत को इस क्षेत्र के साथ अपनी अर्थव्यवस्था को प्रभावी ढंग से एकीकृत करने में बाधाओं का सामना करना पड़ता है।
- **बुनियादी ढाँचे का विकास:**
  - कनेक्टिविटी और बुनियादी ढाँचे की कमी से भारत को आर्थिक अवसरों का फायदा उठाने में चुनौती उत्पन्न होती है।

हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के समक्ष उपलब्ध अवसर:

- **रणनीतिक साझेदारी:**
  - भारत के पास नियम-आधारित व्यवस्था को बढ़ावा देने, नेविगेशन की स्वतंत्रता को बनाए रखने और चीन के प्रभाव को संतुलित करने के लिये इस क्षेत्र में जापान, ऑस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे समान विचारधारा वाले देशों के साथ रणनीतिक साझेदारी बनाने के अवसर हैं।
- **आर्थिक समन्वय:**
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र में व्यापक आर्थिक संभावनाएँ हैं। भारत क्षेत्रीय व्यापार समझौतों में सक्रिय रूप से भाग लेकर, निवेश और व्यापार को बढ़ावा देकर एवं बुनियादी ढाँचे की विकास परियोजनाओं में संलग्न होकर इसका लाभ उठा सकता है।
- **सुरक्षा सहयोग:**
  - क्षेत्रीय साझेदारों के साथ सहयोगात्मक सुरक्षा पहल और सैन्य अभ्यास से भारत के सुरक्षा सहयोग को बढ़ावा मिलने के साथ साझा सुरक्षा चुनौतियों से निपटने की क्षमताओं में मज़बूती आती है।
- **सॉफ्ट पावर डिप्लोमेसी:**
  - हिंद-प्रशांत क्षेत्र के देशों के साथ भारत के सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संबंध सॉफ्ट पावर कूटनीति के अवसर प्रदान करते हैं, जो लोगों के बीच आदान-प्रदान, सांस्कृतिक सहयोग और सार्वजनिक कूटनीति प्रयासों को सुविधाजनक बनाते हैं।

रणनीतिक और आर्थिक हितों का लाभ उठाना:

- **क्षेत्रीय साझेदारी को मज़बूत बनाना:**
  - क्वाड जैसी रणनीतिक साझेदारियों को मज़बूत करने के साथ बहुपक्षीय मंचों में शामिल होने से भारत अपने हितों पर जोर देने के साथ क्षेत्रीय स्थिरता में योगदान कर सकता है।
- **बुनियादी ढाँचे का विकास:**
  - क्षेत्रीय बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं में निवेश करके भारत कनेक्टिविटी, व्यापार सुविधा और आर्थिक एकीकरण को बढ़ावा दे सकता है, जिससे भारत के साथ इस क्षेत्र के अन्य देशों को लाभ होगा।
- **व्यापार और निवेश सुविधा:**
  - भारत, ट्रांस-पैसिफिक पार्टनरशिप जैसे क्षेत्रीय व्यापार समझौतों में सक्रिय रूप से भाग लेकर और हिंद-प्रशांत क्षेत्र के देशों के साथ व्यापार और निवेश संबंधों को बढ़ावा देकर अपने आर्थिक हितों का लाभ उठा सकता है।
- **रक्षा और समुद्री सहयोग:**
  - समुद्री सुरक्षा सहयोग को मज़बूत करने, संयुक्त नौसैनिक अभ्यास आयोजित करने और साझेदार देशों के बीच खुफिया जानकारी साझा करने से इस क्षेत्र में समुद्री स्थिरता और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये भारत की क्षमताओं को बढ़ावा मिलेगा।

निष्कर्ष:

भारत के समक्ष हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चुनौतियाँ और अवसर दोनों ही हैं। क्षेत्रीय साझेदारों के साथ रणनीतिक रूप से जुड़कर, आर्थिक अवसरों का लाभ उठाकर, सुरक्षा सहयोग बढ़ाकर और क्षेत्रीय पहलों में सक्रिय रूप से भाग लेकर, भारत हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपने रणनीतिक और आर्थिक हितों की प्रभावी ढंग से रक्षा कर सकता है। संतुलित दृष्टिकोण (जो क्षेत्रीय स्थिरता को बढ़ावा देता हो) से न केवल अंतर्राष्ट्रीय कानून को बनाए रखने और समावेशी विकास को बढ़ावा देने में सहायता मिलेगी बल्कि हिंद-प्रशांत क्षेत्र की उभरती गतिशीलता में एक महत्त्वपूर्ण हितधारक के रूप में भारत की स्थिति को भी मज़बूती मिलेगी।

Q22. G20 में अफ्रीका के शामिल होने के बाद अफ्रीका और विश्व के संभावित विकास तथा चिंताओं पर चर्चा कीजिये? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- G20 और इसमें अफ्रीका के शामिल होने के संबंध में संक्षेप में लिखकर अपना उत्तर दीजिये।
- अफ्रीका को G20 में शामिल करने से G20 और अफ्रीका पर क्या प्रभाव पड़ेगा?
- उपयुक्त निष्कर्ष लिखिये।

परिचय

G20, 19 देशों और यूरोपीय संघ के बीच वैश्विक आर्थिक और वित्तीय सहयोग का एक मंच है। इसकी वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 80%, वैश्विक व्यापार में 75% और वैश्विक जनसंख्या में 60% की हिस्सेदारी है। हाल ही में दिल्ली में 2023 के G20 शिखर सम्मेलन में अफ्रीकी महाद्वीप के 55 सदस्य देशों के एक अंतर-सरकारी संगठन, अफ्रीकी यूनियन को स्थायी सदस्य के रूप में सूची में शामिल होने के लिये आमंत्रित किया गया।

इस कदम का अफ्रीका और विश्व के संभावित विकास तथा चिंताओं पर प्रभाव पड़ेगा।

मुख्य भाग

अफ्रीका के लिये G20 में शामिल होने से कई लाभ हो सकते हैं, जैसे:

- यह अफ्रीका को उन वैश्विक चुनौतियों से निपटने के लिये परिप्रेक्ष्य दे सकता है जो उसके हितों को प्रभावित करते हैं जैसे- व्यापार, ऋण राहत, जलवायु परिवर्तन, स्वास्थ्य, सुरक्षा, प्रवासन आदि।
- यह बाज़ारों, निवेशों, प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढाँचे आदि तक पहुँच की सुविधा प्रदान करके वैश्विक अर्थव्यवस्था में अफ्रीका के एकीकरण को बढ़ावा दे सकता है।
- यह वैश्विक मामलों पर एक साझा एजेंडा और स्थिति को बढ़ावा देकर अफ्रीकी देशों के बीच क्षेत्रीय सहयोग एवं एकजुटता को बढ़ावा दे सकता है।
- यह अफ्रीका को विकासात्मक चुनौतियों से निपटने एवं सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में अन्य G20 सदस्यों की सर्वोत्तम प्रथाओं और अनुभवों से सीखने में सक्षम बना सकता है।

हालाँकि G20 में शामिल होने से अफ्रीका के लिये कुछ चुनौतियाँ और चिंताएँ भी पैदा होती हैं, जैसे:

- इससे वैश्विक सार्वजनिक वस्तुओं में योगदान करने और अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों तथा मानकों का अनुपालन करने के लिये अफ्रीका की ज़िम्मेदारी एवं जवाबदेहिता को बढ़ावा मिल सकता है।
- इससे अफ्रीका बाहरी दबावों और प्रभावों के संपर्क में आ सकता है जो उसकी प्राथमिकताओं तथा मूल्यों के अनुरूप नहीं हो सकते हैं।
- इससे वैश्विक मुद्दों पर भिन्न हितों और दृष्टिकोणों के कारण अफ्रीकी देशों के बीच आंतरिक विभाजन तथा संघर्ष पैदा हो सकता है।

G20 में अफ्रीका के शामिल होने के विश्व पर भी कई प्रभाव हो सकते हैं, जैसे:

- यह विश्व के गरीब और सबसे अधिक जलवायु-संवेदनशील क्षेत्र के विचारों तथा आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करके G20 की विविधता एवं वैधता को समृद्ध कर सकता है।
- यह गरीबी, असमानता, आतंकवाद, महामारी आदि से निपटने जैसी आम चुनौतियों और अवसरों पर G20 तथा अफ्रीका के बीच आपसी समझ एवं सहयोग को बढ़ावा दे सकता है।
- यह विकसित और विकासशील दोनों देशों से संसाधन जुटाकर सतत् विकास एजेंडा, 2030 एवं जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौते के कार्यान्वयन का समर्थन कर सकता है।

निष्कर्ष

इसलिये यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अफ्रीका का G20 में शामिल होना एक ऐतिहासिक और महत्त्वपूर्ण विकास है जिसमें अफ्रीका तथा विश्व के लिये अवसर एवं चुनौतियाँ दोनों हैं। इस नई साझेदारी के लाभों को अधिकतम करने व चुनौतियाँ को कम करने हेतु सभी हितधारकों के संतुलित और रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

Q23. सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों से केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के कार्यक्षेत्र में किस सीमा तक स्वतंत्रता और जवाबदेहिता को बढ़ावा मिला है। आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) के बारे में बताते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- चर्चा कीजिये कि सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णय किस सीमा तक CBI की स्वतंत्रता और जवाबदेहिता को बढ़ावा देते हैं।
- यथोचित निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) भ्रष्टाचार, आर्थिक अपराध, आतंकवाद और अन्य गंभीर अपराधों के मामलों से निपटने वाली प्रमुख जाँच एजेंसी है। हालाँकि CBI को अक्सर राजनीतिक और नौकरशाही दबावों से प्रभावित होकर अपनी स्वायत्तता और विश्वसनीयता से समझौता करने के क्रम में आलोचना का सामना करना पड़ा है। इसलिये CBI की स्वतंत्रता तथा जवाबदेहिता सुनिश्चित करने में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

मुख्य भाग:

सर्वोच्च न्यायालय ने CBI को बाहरी हस्तक्षेप से बचाने तथा उसकी व्यावसायिकता एवं पारदर्शिता को बढ़ाने के लिये कई ऐतिहासिक फैसले दिये हैं। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं:

- **विनीत नारायण बनाम भारत संघ (1997):** इस फैसले में CBI की स्वायत्तता को सुरक्षित करने के लिये कई कदम उठाए गए, जैसे एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति द्वारा CBI निदेशक की नियुक्ति और CBI के निदेशक के लिये दो साल के निश्चित कार्यकाल का प्रावधान।
- **सुब्रमण्यम स्वामी बनाम CBI निदेशक (2014):** इस फैसले द्वारा **दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम, 1946 की धारा 6-A को रद्द कर दिया गया**, जिसमें वरिष्ठ सिविल सेवकों के खिलाफ भ्रष्टाचार के मामलों की जाँच करने के लिये केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी की आवश्यकता का प्रावधान था। सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि यह प्रावधान असंवैधानिक होने के साथ संविधान के अनुच्छेद 14 (कानून के समक्ष समानता) का उल्लंघन है।
- **कॉमन कॉज़ बनाम भारत संघ (2018):** इस फैसले द्वारा **दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम, 1946 की धारा 4A की वैधता को बरकरार रखा गया**, जिसमें CBI निदेशक को नियुक्त करने या हटाने के लिये प्रधानमंत्री, विपक्ष के नेता और भारत के मुख्य न्यायाधीश या उसके द्वारा नामित व्यक्ति की एक चयन समिति का प्रावधान था। सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि CBI निदेशक के कर्तव्यों में कोई भी स्थानांतरण या बदलाव इस समिति की पूर्व सहमति से ही किया जाना चाहिये।
- इन निर्णयों ने राजनीतिक हस्तक्षेप को कम करके, CBI निदेशक के कार्यकाल की स्थिरता और सुरक्षा सुनिश्चित करके तथा नियुक्ति या निष्कासन हेतु एक पारदर्शी एवं भागीदारीपूर्ण प्रक्रिया स्थापित करके CBI में कुछ हद तक स्वतंत्रता और जवाबदेहिता को बढ़ावा दिया। हालाँकि इसके समक्ष अभी भी कुछ चुनौतियाँ और सीमाएँ हैं जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है जैसे:
- वित्तीय स्वायत्तता के साथ अपने कर्मियों पर प्रशासनिक नियंत्रण का अभाव, CBI अपने बजट एवं कैडर प्रबंधन के लिये गृह मंत्रालय के तहत कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग पर निर्भर रहती है
- सक्षम प्राधिकारियों से अभियोजन हेतु मंजूरी प्राप्त करने में देरी और जटिलता से कई मामलों के **समय पर और प्रभावी निपटान में बाधा उत्पन्न होती है।**
- बढ़ते कार्यभार और मामलों की जटिलता से निपटने के लिये **बुनियादी ढाँचा, जनशक्ति और संसाधनों का अपर्याप्त होना।**

निष्कर्ष:

सर्वोच्च न्यायालय ने CBI की स्वतंत्रता एवं जवाबदेहिता को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है लेकिन इसे और अधिक कुशल तथा विश्वसनीय संस्थान बनाने हेतु अभी भी इसमें सुधार की गुंजाइश है।

Q24. नि:शुल्क कानूनी सहायता प्राप्त करने के हकदार कौन हैं? नि:शुल्क कानूनी सहायता के प्रतिपादन में राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) की भूमिका का आकलन कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- भारत में नि:शुल्क कानूनी सहायता की अवधारणा को संक्षेप में पेश करते हुए शुरुआत कीजिये और उल्लेख कीजिये कि यह अनुच्छेद 39A के तहत संविधान द्वारा प्रदान किया गया निदेशक सिद्धांत है।
- चर्चा कीजिये कि भारत में निशुल्क कानूनी सहायता प्राप्त करने का अधिकार किसे है, साथ ही नि:शुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने के संदर्भ में NALSA की भूमिका एवं महत्त्व को समझाइये ?
- आप भविष्योन्मुखी वक्तव्य या कॉल टू एक्शन के साथ निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

निशुल्क कानूनी सहायता का अर्थ समाज के कमज़ोर वर्गों को बिना किसी शुल्क या मामूली लागत पर कानूनी सेवाएँ प्रदान करना है। अनुच्छेद 39A राज्य को सभी नागरिकों के लिये न्याय तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिये निशुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने का दायित्व प्रदान करता है। निशुल्क कानूनी सहायता यह सुनिश्चित करती है कि प्रत्येक नागरिक को न्याय और निष्पक्ष सुनवाई तक समान पहुँच मिले, चाहे उनकी आर्थिक या सामाजिक स्थिति कुछ भी हो।

मुख्य भाग:

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम की धारा 12 के तहत सूचीबद्ध समाज के जिन वर्गों को निशुल्क विधिक सेवाएँ प्राप्त करने का अधिकार है, वे हैं:

- अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के सदस्य।
- संविधान के अनुच्छेद 23 में उल्लिखित मानव तस्करी या बेगार (बलात् श्रम) का शिकार।
- एक महिला या एक बच्चा।
- मानसिक रूप से बीमार अथवा विकलांग व्यक्ति।
- किसी सामूहिक आपदा, जातीय हिंसा, जातीय अत्याचार, बाढ़, सूखा, भूकंप या औद्योगिक आपदा का शिकार व्यक्ति।
- एक औद्योगिक कामगार।
- एक निश्चित राशि से कम वार्षिक आय वाला व्यक्ति निशुल्क कानूनी सेवाओं के लिये पात्र है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसके मामले की सुनवाई किस प्रकार की अदालत में हो रही है।

भारत में नि:शुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने में राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (NALSA) की भूमिका: पात्र व्यक्तियों को निशुल्क कानूनी सेवाएँ प्रदान करने और विवादों के सौहार्दपूर्ण समाधान के लिये लोक अदालतों का आयोजन करने के लिए कानूनी सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के तहत राष्ट्रीय कानूनी सेवा प्राधिकरण (NALSA) का गठन किया गया है।

- **NALSA की कुछ भूमिकाएँ और कार्य इस प्रकार हैं:**
  - अधिनियम के तहत कानूनी सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिये नीतियाँ और सिद्धांत निर्धारित करना।
  - कानूनी सेवाओं के लिये प्रभावी और कम खर्च वाली योजनाएँ तैयार करना।
  - अधिनियम के तहत कानूनी सेवाओं के कार्यान्वयन की निगरानी और मूल्यांकन करना।
  - कानूनी जागरूकता कार्यक्रम संचालित करना और लोगों के बीच कानूनी साक्षरता को बढ़ावा देना।
  - बातचीत, मध्यस्थता और सुलह के माध्यम से विवादों के निपटारे को प्रोत्साहित करना।
  - कानूनी सेवाएँ प्रदान करने में लगी अन्य सरकारी और गैर-सरकारी एजेंसियों के साथ मिलकर समन्वय तथा सहयोग प्रदान करना।
- **NALSA ने भारत में नि:शुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है:**
  - देश भर में अपने पैनल वकीलों और पैरा-लीगल स्वयंसेवकों के माध्यम से लाखों लाभार्थियों को कानूनी सहायता प्रदान करना।
  - विभिन्न स्तरों पर हज़ारों लोक अदालतों का आयोजन कर लाखों मामलों का सौहार्दपूर्ण निपटारा करना।
  - विभिन्न योजनाएँ और पहल शुरू करना जैसे:
    - NALSA (मुफ्त और सक्षम कानूनी सेवाएँ) विनियम, 2010।
    - NALSA (कानूनी सहायता क्लीनिक) विनियम, 2011।
    - NALSA (आदिवासी अधिकारों का संरक्षण और प्रवर्तन) योजना, 2015।
    - NALSA (बच्चों और उनके संरक्षण के लिये बाल मैत्रीपूर्ण कानूनी सेवाएँ) योजना, 2015।
    - NALSA (तस्करी और वाणिज्यिक यौन शोषण के शिकार) योजना, 2015।
  - सभी के लिये न्याय तक पहुँच जैसे विभिन्न विषयों पर राष्ट्रव्यापी अभियान और कार्यक्रम आयोजित करना तथा सेवाओं से जुड़ना।
  - सभी के लिये न्याय तक पहुँच, समानता के साथ अपने राष्ट्र की सेवा से जुड़ना जैसे विभिन्न विषयों पर राष्ट्रव्यापी अभियान और कार्यक्रम आयोजित करना।
  - कानूनी सेवाओं की पहुँच और गुणवत्ता बढ़ाने के लिये विभिन्न हितधारकों जैसे न्यायपालिका, बार एसोसिएशन, लॉ स्कूल, नागरिक समाज संगठन, मीडिया आदि के साथ सहयोग करना।

निष्कर्ष:

सभी नागरिकों, विशेषकर समाज के कमज़ोर वर्गों के लिये न्याय और निष्पक्ष सुनवाई तक समान पहुँच एवं निशुल्क कानूनी सहायता, नागरिकों का संवैधानिक अधिकार तथा राज्य का सामाजिक दायित्व है। NALSA भारत में कानूनी सहायता प्रदान करने, लोक अदालतों का आयोजन करने, कानूनी जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करने, विभिन्न योजनाओं एवं पहलों को शुरू करने आदि में निशुल्क कानूनी सहायता प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। हालाँकि भारत में मुफ्त कानूनी सहायता प्रदान करने में NALSA के सामने कुछ चुनौतियाँ व सीमाएँ भी हैं, जिन्हें कानूनी सेवाओं के संसाधनों, गुणवत्ता, समन्वय, एकरूपता और निगरानी को बढ़ाकर संबोधित एवं दूर करने की आवश्यकता है।

Q25. संवैधानिक रूप से न्यायिक स्वतंत्रता की गारंटी लोकतंत्र की एक पूर्व शर्त है।'' टिप्पणी कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- अपना उत्तर संक्षिप्त और स्पष्ट परिचय के साथ शुरू कीजिये। परिभाषित कीजिये या समझाइये कि लोकतंत्र में न्यायिक स्वतंत्रता का क्या अर्थ है।
- उन विभिन्न कारणों पर चर्चा कीजिये जिनके लिये लोकतंत्र में एक स्वतंत्र न्यायपालिका महत्त्वपूर्ण है। आप अपने तर्कों के समर्थन में कुछ उदाहरण भी प्रदान कर सकते हैं।
- आप लोकतंत्र को संरक्षित और मज़बूत करने में संवैधानिक रूप से गारंटीकृत न्यायिक स्वतंत्रता की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर ज़ोर देते हुए उत्तर को समाप्त कीजिये।

परिचय:

न्यायिक स्वतंत्रता का सिद्धांत यह है कि न्यायपालिका को अपने कामकाज में किसी भी बाहरी प्रभाव या हस्तक्षेप से मुक्त होना चाहिये। यह कानून का शासन सुनिश्चित करने, मौलिक अधिकारों की रक्षा करने और लोकतांत्रिक व्यवस्था में नियंत्रण तथा संतुलन बनाए रखने के लिये आवश्यक है।

मुख्य भाग:

न्यायिक स्वतंत्रता केवल एक आदर्श नहीं है, बल्कि निम्नलिखित

कारणों से एक लोकतांत्रिक समाज के कामकाज के लिये एक मूलभूत आवश्यकता है:

- **जाँच और संतुलन:** स्वतंत्र न्यायपालिका यह सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है कि सरकार की कार्यकारी और विधायी शाखाएँ संविधान का उल्लंघन न करें या लोगों के अधिकारों का अतिक्रमण न करें।
  - उदाहरण के लिये केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संसद संविधान की मूल संरचना में संशोधन नहीं कर सकती है।
- **अधिकारों का संरक्षण:** स्वतंत्र न्यायपालिका सभी नागरिकों को संविधान द्वारा प्रदान किये गए गारंटीकृत मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता की कट्टर रक्षक रही है। न्यायालय ने विभिन्न ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से इन अधिकारों का दायरा बढ़ाया है, जैसे इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ, जिसने पिछड़े वर्गों के लिये आरक्षण नीति को बरकरार रखा तथा नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ, जिसने समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से हटा दिया एवं यौन अभिविन्यास के अधिकार को निजता के अधिकार के एक हिस्से के रूप में मान्यता दी।
- **निष्पक्ष एवं न्यायिक न्याय:** स्वतंत्र न्यायपालिका बिना किसी डर या पक्षपात के न्याय देने का प्रयास करती है, चाहे इसमें शामिल पक्षों की स्थिति या पहचान कुछ भी हो। न्यायालय ने स्वप्रेरणा से मामलों को उठाकर, जनहित याचिका (हुसैनारा खातून बनाम बिहार राज्य) पर विचार करके और जटिल मामलों में सहायता के लिये न्याय मित्र (एमिकस क्यूरी) को नियुक्त करके निष्पक्ष तथा न्यायिक न्याय के प्रति अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित की है।
- **युद्ध वियोजन:** एक लोकतांत्रिक समाज में विवाद और संघर्ष अपरिहार्य हैं। एक स्वतंत्र न्यायपालिका संघर्षों को सुलझाने के लिये शांतिपूर्ण और वैध साधन प्रदान करती है, जिससे सामाजिक अशांति तथा अराजकता की संभावना कम हो जाती है।
  - न्यायालय ने अपने समक्ष लंबित किसी भी मामले में पूर्ण न्याय करने के लिये आवश्यक आदेश पारित करने हेतु अनुच्छेद 142 के तहत संविधान द्वारा प्रदत्त अपनी असाधारण शक्तियों का भी प्रयोग किया है।
    - सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संघर्ष समाधान के कुछ उदाहरण हैं: एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ, जिसने राज्यों में राष्ट्रपति शासन लगाने के लिये दिशा-निर्देश दिये और अयोध्या निर्णय, जिसने एक धार्मिक स्थल पर लंबे समय से चले आ रहे विवाद का निपटारा किया।
- **अल्पसंख्यक अधिकारों का संरक्षण:** लोकतंत्र केवल बहुमत के शासन के बारे में नहीं है, इसमें अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करना भी शामिल है। एक स्वतंत्र न्यायपालिका बहुसंख्यकों को अल्पसंख्यक समूहों पर अत्याचार करने या उनके खिलाफ भेदभाव करने से रोककर अल्पसंख्यक अधिकारों की रक्षा कर सकती है।
  - न्यायालय ने अल्पसंख्यकों को भेदभाव, हिंसा या उत्पीड़न से बचाने के लिये भी हस्तक्षेप किया है, जैसे मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम मामले में तलाकशुदा मुस्लिम महिला के भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी उसके पति को दे दी और जॉन वल्लामट्टम बनाम भारत संघ मामले में ईसाइयों पर लागू भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के एक भेदभावपूर्ण प्रावधान को समाप्त कर दिया।
- **संविधान के प्रावधानों को बनाए रखना:** संविधान, लोकतांत्रिक समाजों की आधारशिला है। एक स्वतंत्र न्यायपालिका यह सुनिश्चित करती है कि संविधान देश का सर्वोच्च कानून बना रहे। न्यायालय सरकार के असंवैधानिक कार्यों या संविधान में अविवेकपूर्ण संशोधन को नियंत्रित करता है।
  - न्यायालय ने संवैधानिक मूल्यों की रक्षा के लिये विभिन्न विचारधाराओं एवं सिद्धांतों को विकसित किया है, जैसे कि संविधान की भावना को बनाए रखने हेतु बुनियादी ढाँचा सिद्धांत, सामंजस्यपूर्ण निर्माण का सिद्धांत, तत्त्व और सार का सिद्धांत, आच्छादन का सिद्धांत आदि।

निष्कर्ष:

संवैधानिक रूप से गारंटीकृत न्यायिक स्वतंत्रता वास्तव में लोकतंत्र के लिये एक शर्त है। इसके बिना लोकतंत्र के सिद्धांतों, जैसे कानून का शासन, व्यक्तिगत अधिकारों की सुरक्षा, जवाबदेही और नियंत्रण एवं संतुलन को प्रभावी ढंग से बरकरार नहीं रखा जा सकता है। एक स्वतंत्र न्यायपालिका लोकतांत्रिक शासन की आधारशिला है, जो यह सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक कानूनी ढाँचा और निगरानी प्रदान करती है कि लोकतांत्रिक प्रणाली सभी नागरिकों के अधिकारों तथा स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए उद्देश्य के अनुसार कार्य करे।

Q26. "भारतीय संविधान का निर्माण इस आधार पर नहीं हुआ था कि लोग कैसे हैं बल्कि इस आधार पर हुआ था कि उन्हें कैसा होना चाहिये"। टिप्पणी कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- उपर्युक्त कथन का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- संविधान में निहित उन आदर्शों और सिद्धांतों पर चर्चा कीजिये जो इसके निर्माताओं के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- आप इस बात पर बल देकर निष्कर्ष दे सकते हैं कि चुनौतियों के बावजूद संविधान ने भारत के आदर्श भविष्य के मार्गदर्शन में भूमिका निभाई है, जिससे यह एक गतिशील और दूरदर्शी दस्तावेज़ बन जाता है।

परिचय:

संविधान निर्माता भारतीय समाज की वास्तविकताओं और चुनौतियों से अवगत थे, जिसमें गरीबी, अशिक्षा, असमानता आदि की विद्यमानता थी। वे ऐसा संविधान नहीं बनाना चाहते थे जो केवल मौजूदा स्थितियों को प्रतिबिंबित करे बल्कि ऐसा संविधान बनाना चाहते थे जो बदलाव पर केंद्रित हो। वे एक ऐसा संविधान बनाना चाहते थे जो लोगों को अपनी क्षमता का एहसास कराने के साथ राष्ट्र-निर्माण प्रक्रिया में भाग लेने में उन्हें सक्षम बनाए।

मुख्य भाग:

इसलिये संविधान में उन लक्ष्यों और मूल्यों को शामिल किया गया जिनके लिये भारत के लोगों को प्रयासरत रहना चाहिये जैसे:

- **अधिकार और समानता:** संविधान द्वारा सभी नागरिकों को उनकी मौजूदा परिस्थितियों के बावजूद मूल अधिकार दिये गए हैं, जिसका उद्देश्य व्यक्तियों को भेदभाव, उत्पीड़न और अन्याय से बचाना है। इन अधिकारों का उद्देश्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जहाँ व्यक्तियों को अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने की स्वतंत्रता हो और वे अपनी मौजूदा परिस्थितियों में बंधे रहने को मजबूर न हों।
- **आर्थिक न्याय:** संविधान में शामिल राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत भी आर्थिक न्याय की आकांक्षा को दर्शाते हैं। संविधान द्वारा समाज में व्याप्त आर्थिक असमानताओं को दूर करने के क्रम में राज्य को आर्थिक एवं सामाजिक न्याय को बढ़ावा देकर इन असमानताओं को कम करने की दिशा में कार्य करने हेतु निर्देशित किया गया है।
- **सामाजिक परिवर्तन:** भारतीय संविधान के निर्माताओं ने एक ऐसे समाज की कल्पना की थी जहाँ जातिगत और लैंगिक भेदभाव के साथ असमानता न हो। इसलिये संविधान में ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों के लिये सकारात्मक कार्रवाई के रूप में आरक्षण जैसे प्रावधान शामिल किये गए हैं।
- **पंथनिरपेक्षता:** भारतीय संविधान में पंथनिरपेक्षता पर बल दिया गया है। इसमें एक ऐसे समाज की कल्पना की गई है जहाँ सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार किया जाता हो और जिसमें राज्य किसी विशेष धर्म का पक्ष नहीं लेता हो। यह मूल्य स्वतंत्रता के समय प्रचलित धार्मिक पदानुक्रमों के विपरीत है।
- **लोकतांत्रिक मूल्य:** सहभागी और समावेशी लोकतंत्र को बढ़ावा देने के उद्देश्य से संविधान में लोकतांत्रिक मूल्यों जैसे विधि के समक्ष समता और सार्वभौमिक मताधिकार जैसे मूल्यों को शामिल किया गया है। इसमें एक ऐसे समाज की कल्पना की गई है जहाँ सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि की परवाह किये बिना सभी नागरिकों का सम्मान किया जाता है।

निष्कर्ष:

इसलिये, भारतीय संविधान एक स्थिर या कठोर दस्तावेज़ होने के बजाय गतिशील और लचीला दस्तावेज़ है, जो लोगों की बदलती ज़रूरतों और आकांक्षाओं के अनुकूल है। संविधान कोई अंतिम या आदर्श दस्तावेज़ नहीं है बल्कि एक प्रगतिशील और दूरदर्शी दस्तावेज़ है, जो लोगों को अपने लक्ष्यों एवं मूल्यों की प्राप्ति के लिये कार्य करने हेतु प्रेरित कर सकता है।

Q27. संविधान की व्याख्या करने में और इसके उद्भव को निर्देशित करने में, विशेषकर ऐतिहासिक न्यायिक निर्णयों के संदर्भ में, प्रस्तावना की क्या भूमिका है? (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण :

- प्रस्तावना क्या है, यह समझाकर प्रारंभ कीजिये। उल्लेख कीजिये कि यह संविधान का परिचयात्मक वक्तव्य है, जो संविधान के उद्देश्य और लक्ष्यों को रेखांकित करता है।
- फिर आगे संवैधानिक व्याख्या को निर्देशित करने में प्रस्तावना किस प्रकार भूमिका निभाती है। उदाहरण सहित अपने तर्कों का समर्थन कीजिये।
- आप संवैधानिक व्याख्या के मार्गदर्शन में प्रस्तावना की स्थायी प्रासंगिकता पर ज़ोर देकर निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

भूमिका :

संविधान की प्रस्तावना एक परिचय है जो संविधान के सिद्धांतों और उद्देश्यों को प्रस्तुत करती है। यह इसके अधिकार के स्रोतों को भी इंगित करता है, जो भारत के लोग हैं। यह संविधान की व्याख्या और विकास के मार्गदर्शन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

मुख्य भाग :

प्रस्तावना ने संवैधानिक विधिशास्त्र को जिन तरीकों से प्रभावित किया है उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

- **प्रेरणा स्रोत:** प्रस्तावना संविधान की व्याख्या को उसके मूल सिद्धांतों के अनुरूप तरीके से प्रेरित करती है। यह न्यायाधीशों को न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे को बढ़ावा देने वाले निर्णय लेने में मार्गदर्शन करता है, तब भी जब संविधान स्वयं कुछ मुद्दों को स्पष्ट रूप से संबोधित नहीं करता है।
  - उदाहरण के लिये, केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने माना कि प्रस्तावना संविधान का एक भाग है और यह मूल संरचना को प्रतिबिंबित करती है, जिसे संशोधित नहीं किया जा सकता है।
- **सीमा शक्ति में संशोधन:** प्रस्तावना के महत्त्व को केशवानंद भारती के ऐतिहासिक मामले में उजागर किया गया था, जहाँ सुप्रीम कोर्ट ने माना था कि हालांकि संसद के पास संविधान में संशोधन करने की शक्ति है, लेकिन वह इसकी मूल संरचना को बदल या नष्ट नहीं कर

सकती है, जिसमें प्रस्तावना में निहित आदर्श शामिल हैं। यह निर्णय संविधान में इस तरह से संशोधन करने के किसी भी प्रयास पर अंकुश के रूप में कार्य करता है जो इसके मौलिक मूल्यों के विरुद्ध जाता है।

- **अधिकारों का विस्तार:** प्रस्तावना का प्रयोग न्यायपालिका द्वारा मौलिक अधिकारों और अन्य संवैधानिक प्रावधानों के दायरे का विस्तार करने के लिये किया गया है। मेनका गांधी मामले (1978) में, सुप्रीम कोर्ट ने माना कि विदेश यात्रा का अधिकार अनुच्छेद 21 द्वारा गारंटीकृत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का एक अभिन्न अंग है, जो स्वतंत्रता और जीवन पर प्रस्तावना के ज़ोर से प्रेरणा लेता है।
- **सामाजिक न्याय और समानता:** सामाजिक न्याय और समानता के प्रति प्रस्तावना की प्रतिबद्धता आरक्षण नीतियों, सकारात्मक कार्रवाई और हाशिये पर रहने वाले समुदायों की सुरक्षा से संबंधित विभिन्न प्रावधानों की व्याख्या करने में सहायक रही है। मंडल आयोग मामले (इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ, 1992) जैसे ऐतिहासिक फैसले सकारात्मक कार्रवाई को कायम रखने के लिये प्रस्तावना के सिद्धांतों पर आधारित हैं।
- **विकासशील सामाजिक मूल्य:** जैसे-जैसे समाज विकसित होता है, वैसे-वैसे संविधान की व्याख्या भी बदलती है। प्रस्तावना एक लचीला ढाँचा प्रदान करती है जो बदलते सामाजिक मूल्यों के लिये संवैधानिक सिद्धांतों को अपनाने की अनुमति देती है। उदाहरण के लिये, नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ (2018) में एलजीबीटीक्यू+ अधिकारों का विस्तार एकता और समानता के प्रति प्रस्तावना की प्रतिबद्धता से प्रभावित था।

निष्कर्ष:

प्रस्तावना संविधान की व्याख्या और विकास के मार्गदर्शन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह न्यायाधीशों के लिये एक आदर्श के रूप में कार्य करता है, जिससे उन्हें यह सुनिश्चित करने में मदद मिलती है कि संविधान बदलते समय और चुनौतियों के बावजूद भी सभी नागरिकों के लिये न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा सुनिश्चित करने के अपने इच्छित उद्देश्य को पूरा करना जारी रखता है।

Q28. उन प्रणालियों पर चर्चा कीजिये जिनके माध्यम से भारतीय संविधान द्वारा कार्यकारी, विधायी एवं न्यायिक शाखाओं के बीच शक्तियों के पृथक्करण की व्यवस्था की गई है। मूल्यांकन कीजिये कि यह पृथक्करण भारतीय संदर्भ में संसदीय संप्रभुता पर नियंत्रण के रूप में किस प्रकार कार्य करता है। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- शक्तियों के पृथक्करण की अवधारणा और लोकतांत्रिक प्रणाली में इसके महत्त्व का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- उन विशिष्ट तंत्रों का विस्तार से वर्णन कीजिये जिनके माध्यम से शक्तियों के पृथक्करण की प्रणाली स्थापित की जाती है।
- आप लोकतंत्र के सिद्धांतों और विधि के शासन को बनाए रखने में इस प्रणाली के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए निष्कर्ष दे सकते हैं।

परिचय:

वर्ष 1950 में अपनाया गया भारतीय संविधान कार्यकारी, विधायी और न्यायिक शाखाओं के बीच शक्तियों के पृथक्करण की नींव रखता है। शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत संसदीय संप्रभुता को संतुलित करने के रूप में कार्य करता है, शक्ति संतुलन सुनिश्चित करता है और किसी एक शाखा को अत्यधिक प्रभावशाली बनने से रोकता है।

मुख्य भाग:

वह तंत्र जिसके माध्यम से भारतीय संविधान शक्तियों के पृथक्करण की प्रणाली स्थापित करता है:

- **विधायी नियंत्रण:**
  - **न्यायपालिका पर:** महाभियोग और न्यायाधीशों को हटाना। न्यायालय द्वारा अधिकारातीत घोषित किये गये कानूनों में संशोधन करने और उसे पुन: वैध करने की शक्ति।
  - **कार्यपालिका पर:** अविश्वास मत के माध्यम से इसके द्वारा सरकार को भंग किया जा सकता है। प्रश्नकाल एवं शून्यकाल के माध्यम से कार्यपालिका के कार्यों का मूल्यांकन करने की शक्ति।
- **कार्यकारी नियंत्रण:**
  - **न्यायपालिका पर:** मुख्य न्यायाधीश और अन्य न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ।
  - **विधायिका पर:** प्रत्यायोजित विधान के तहत शक्तियाँ। संविधान के प्रावधानों के अधीन अपनी संबंधित प्रक्रिया और व्यवसाय के संचालन को विनियमित करने के लिये नियम बनाने का अधिकार।
- **न्यायिक नियंत्रण:**
  - **कार्यपालिका पर:** न्यायिक समीक्षा यानी, कार्यकारी कार्रवाई

की समीक्षा करने की शक्ति, यह निर्धारित करने के लिये कि क्या यह संविधान का उल्लंघन करती है।

- **विधायिका पर:** केशवानंद भारती मामला, 1973 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुनाए गए मूल ढाँचा सिद्धांत के तहत संविधान की अपरिवर्तनीयता।
- **शक्तियों का यह पृथक्करण संसदीय संप्रभुता पर नियंत्रण के रूप में कैसे कार्य करता है:**

- **संसदीय संप्रभुता बनाम न्यायिक समीक्षा:**
  - भारत में, संसदीय संप्रभुता सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक समीक्षा शक्ति के अधीन है। यदि न्यायपालिका को संसद द्वारा पारित कोई कानून असंवैधानिक लगता है, तो उसे रद्द किया जा सकता है। यह संसद की पूर्ण संप्रभुता को सीमित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि यह संविधान द्वारा निर्धारित सीमाओं के तहत संचालित हो।
- **कार्यकारी जवाबदेहिता:**
  - कार्यकारी शाखा, विधायिका के प्रति जवाबदेह है और विधायिका बदले में लोगों के प्रति जवाबदेह है। यह जवाबदेही कार्यपालिका को अनियंत्रित शक्ति का प्रयोग करने से रोकती है और यह सुनिश्चित करती है कि वह कानून के दायरे में कार्य करे।
- **द्विसदनीय विधानमंडल:**
  - भारतीय संसद में राज्यसभा और लोकसभा की अलग-अलग संरचना और भूमिकाओं से किसी भी सदन के जल्दबाजी वाले या एकतरफा निर्णयों को रोका जा सकता है।

निष्कर्ष:

संविधान, शक्तियों के पृथक्करण की प्रणाली स्थापित करता है जो संसदीय संप्रभुता पर नियंत्रण के रूप में कार्य करती है। यह सुनिश्चित करता है कि सरकार की कोई भी एक शाखा अधिक प्रभावी नहीं हो सकती है और प्रत्येक शाखा विधि के शासन को बनाए रखने तथा नागरिकों के अधिकारों एवं स्वतंत्रता की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस प्रणाली से एक संतुलित एवं जवाबदेह सरकारी तंत्र को बढ़ावा मिलता है जिससे लोकतंत्र के सिद्धांतों और विधि के शासन को स्थापित किया जा सकता है।

Q29. हाल ही में कई राज्यों के राज्यपालों के आचरण पर सवाल उठाए गए हैं, जिससे उनके कार्यों के संवैधानिक औचित्य के संदर्भ में संदेह पैदा हो गया है। इस संबंध में भारत में राज्यपाल के पद की आवश्यकता का मूल्यांकन कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- राज्यपाल के पद का संक्षिप्त परिचय देने के साथ उसकी भूमिका एवं महत्त्व का उल्लेख करते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- राज्यपाल के पद की आवश्यकता पर चर्चा कीजिये।
- आप राज्यपाल के पद के वैध कार्यों एवं शक्ति के दुरुपयोग की संभावना के बीच संतुलन की आवश्यकता पर बल देते हुए निष्कर्ष दे सकते हैं।

परिचय:

भारत में राज्यपाल का पद भारतीय संविधान के अनुच्छेद 153 के तहत एक संवैधानिक पद है। राज्यपालों को भारत के राष्ट्रपति द्वारा राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों के औपचारिक प्रमुख के रूप में नियुक्त किया जाता है। हाल के दिनों में राज्यपाल के पद ने कई विवादों को जन्म दिया है, जैसे- केरल और तमिलनाडु में राज्यपाल और CoM के बीच विवाद।

मुख्य भाग:

राज्यपाल के पद की आवश्यकता का मूल्यांकन विभिन्न दृष्टिकोणों से किया जा सकता है:

- **संवैधानिक सत्यनिष्ठा का संरक्षण:** राज्यपाल का पद भारतीय संघीय ढाँचे की संवैधानिक सत्यनिष्ठा को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। राज्यपाल संघ और राज्यों के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य करते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि राज्य सरकारें संवैधानिक ढाँचे के तहत कार्य करें। उनकी यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी है कि राज्य विधानसभाएँ और सरकारें अपनी संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन न करें।
- **नियंत्रण और संतुलन:** राज्यपाल की उपस्थिति से राज्यों में नियंत्रण और संतुलन की प्रणाली स्थापित होती है। यदि उन्हें लगता है कि कानून असंवैधानिक है या संघवाद के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है तो उनके पास राज्य विधानमंडल द्वारा पारित विधेयकों पर अपनी सहमति रोकने का अधिकार है। इससे सुनिश्चित होता है कि राज्य इस तरह से कार्य न करें जिससे राष्ट्र की एकता एवं अखंडता को खतरा हो।
- **राष्ट्रपति का प्रतिनिधित्व:** राज्यपाल, राज्य स्तर पर राष्ट्रपति का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह भारतीय गणराज्य की संघीय प्रकृति को मज़बूत करता है और भारत के विविध राज्यों के बीच एकता एवं साझा पहचान की भावना बनाए रखने में मदद करता है।
- **मुख्यमंत्री की नियुक्ति:** किसी राज्य के मुख्यमंत्री की नियुक्ति में राज्यपाल महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे राज्य विधानसभा में

बहुमत दल या गठबंधन के नेता को सरकार बनाने के लिये आमंत्रित करने के लिये ज़िम्मेदार हैं। यह प्रक्रिया सत्ता के सुचारु परिवर्तन में मदद करती है और यह सुनिश्चित करती है कि मुख्यमंत्री को विधायिका का विश्वास प्राप्त हो।

- **आपातकालीन शक्तियाँ:** संविधान के अनुच्छेद 356 के तहत राज्यपालों को आपातकालीन शक्तियाँ सौंपी जाती हैं, जो उन्हें संवैधानिक तंत्र के असंतुलित होने पर राज्य में राष्ट्रपति शासन की सिफारिश करने की अनुमति देती हैं। यह राज्य सरकारों द्वारा सत्ता के संभावित दुरुपयोग के खिलाफ एक सुरक्षा उपाय है।
- **सहकारी संघवाद को बढ़ावा:** राज्यपालों की उपस्थिति संघ और राज्यों के बीच संचार एवं समन्वय को सुविधाजनक बनाकर सहकारी संघवाद को बढ़ावा देती है। यह सहयोगात्मक तरीके से संसाधनों, विशेषज्ञता एवं ज़िम्मेदारियों को साझा करने को प्रोत्साहित करता है।
- **सलाहकार की भूमिका:** राज्यपाल अक्सर अपने अनुभव और अंतर्दृष्टि के आधार पर विभिन्न मामलों पर राज्य सरकार को बहुमूल्य सलाह देते हैं। यह सलाहकारी भूमिका सुशासन और लोगों के कल्याण को सुनिश्चित करने में विशेष रूप से उपयोगी हो सकती है।

निष्कर्ष:

हालाँकि कुछ राज्यपालों के आचरण से जुड़े हालिया विवादों ने राजनीतिक उद्देश्यों के लिये उनकी शक्तियों के दुरुपयोग के बारे में चिंताएँ बढ़ा दी हैं। कार्यालय के वैध कार्यों और दुरुपयोग की संभावना के बीच संतुलन बनाना आवश्यक है। राज्यपालों की नियुक्ति और कार्यप्रणाली में अधिक पारदर्शिता और जवाबदेही की आवश्यकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे संघवाद और संवैधानिक औचित्य के सिद्धांतों के अनुसार कार्य करें।

Q30. भारत की अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा एवं विदेश नीति पर चल रहे इज़राइल-हमास संघर्ष के परिणामों का विश्लेषण कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- इज़राइल-हमास संघर्ष का संक्षिप्त परिचय देते हुए अपने उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- भारत पर इस संघर्ष के संभावित प्रभावों को बताते हुए इसके समाधान हेतु कुछ उपायों पर भी चर्चा कीजिये।
- आगे की राह बताते हुए निष्कर्ष दीजिये।

परिचय:

चल रहे इज़राइल-हमास संघर्ष के भारत की अर्थव्यवस्था, ऊर्जा सुरक्षा एवं विदेश नीति के संदर्भ में व्यापक प्रभाव हैं। भारत के इज़राइल एवं फिलिस्तीन के साथ-साथ क्षेत्र के अन्य देशों जैसे सऊदी अरब, ईरान तथा तुर्की के साथ मज़बूत संबंध हैं। भारत अपने कुल उपभोग में से 80% तेल हेतु आयात पर निर्भर रहता है, इस मांग को पूरा करने के लिये भारत तेल आयात के लिये मध्य पूर्व पर बहुत अधिक निर्भर है।

मुख्य भाग:

भारत पर इस संघर्ष के कुछ संभावित प्रभाव:

- **व्यापार संबंध:** इस संघर्ष के बढ़ने से इज़राइल के साथ भारत के व्यापार पर असर पड़ सकता है (खासकर रक्षा उपकरण जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में)। इज़राइल, भारत की रक्षा प्रौद्योगिकी का एक महत्त्वपूर्ण आपूर्तिकर्ता देश है और इस व्यापार संबंध में कोई भी व्यवधान भारत की रक्षा तैयारियों को प्रभावित कर सकता है।
- **कूटनीतिक चुनौतियाँ:** भारत ने परंपरागत रूप से इज़राइल और अरब देशों के प्रति अपनी विदेश नीति में एक संतुलित दृष्टिकोण बनाए रखा है। यदि यह संघर्ष बढ़ता है और अन्य अरब देश इसमें शामिल होते हैं तो इससे भारत के लिये राजनयिक चुनौतियाँ पैदा हो सकती हैं। इससे भारत को इज़राइल के साथ अपने संबंधों को संतुलित करना और अरब देशों के साथ अच्छे संबंध बनाए रखना अधिक जटिल हो सकता है।
- **मध्य पूर्व के साथ आर्थिक और रणनीतिक संबंध:** मध्य पूर्व के साथ भारत के आर्थिक एवं रणनीतिक संबंधों का महत्त्व बढ़ गया है (खासकर भारत-मध्य पूर्व-यूरोप आर्थिक गलियारे जैसी पहल के संदर्भ में)। यदि यह संघर्ष तीव्र होता है और इसमें हिजबुल्लाह एवं ईरान जैसे अन्य क्षेत्रीय हितधारक शामिल होते हैं, तो इससे पश्चिम एशियाई क्षेत्र में अस्थिरता बढ़ सकती है।
- **ऊर्जा आपूर्ति:** पश्चिम एशियाई क्षेत्र भारत के लिये ऊर्जा आयात का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इस क्षेत्र की स्थिरता में कोई भी व्यवधान संभावित रूप से भारत की ऊर्जा आपूर्ति को प्रभावित कर सकता है, जिससे आर्थिक चुनौतियाँ पैदा हो सकती हैं।
- **भारतीय प्रवासियों का कल्याण:** भारत का बड़ा प्रवासी समूह विभिन्न मध्य पूर्वी देशों में कार्यरत है। यदि यह संघर्ष बढ़ता है तो इन भारतीय नागरिकों की सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है।

भारत को अपनी विदेश नीति में विभिन्न कारकों एवं हितों पर विचार करना चाहिये। हालाँकि इस संदर्भ में कुछ संभावित सुझाव निम्नलिखित हैं:

- भारत को पहले की तरह संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों एवं अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुरूप, इज़राइल तथा फिलिस्तीन के संदर्भ में टू स्टेट सॉल्यूशन को बरकरार रखना चाहिये।
- भारत को अमेरिका, सऊदी अरब एवं यूएई जैसे देशों के साथ सुरक्षा, विकास के क्षेत्रों में संबंधों को मज़बूत करने के लिये रणनीतिक साझेदारी को बनाए रखना चाहिये।

- भारत, शांति को बढ़ावा देने, बातचीत को प्रोत्साहित करने और गाजा, इज़राइल तथा उसके प्रवासियों को मानवीय सहायता प्रदान करने हेतु अपने राजनयिक प्रभाव का लाभ उठा सकता है।
- भारत को इस संघर्ष को हल करने के लिये मिस्र, जॉर्डन, तुर्की, रूस, चीन और यूरोपीय संघ के साथ साझेदारी पर विचार करना चाहिये तथा पश्चिम एशियाई शांति को बढ़ावा देने के लिये अपनी संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थिति एवं गुटनिरपेक्ष आंदोलन के नेतृत्व जैसे दृष्टिकोण का उपयोग करना चाहिये।

निष्कर्ष:

अत: इस संघर्ष का शांतिपूर्ण समाधान एवं इस क्षेत्र में स्थिरता, भारत के हित में है। भारत को अपने कूटनीतिक प्रभाव का उपयोग करते हुए दोनों पक्षों से संयम बरतने और बातचीत फिर से शुरू करने का आग्रह करना चाहिये। भारत को मानवीय सहायता को सुविधाजनक बनाने एवं आगे की हिंसा को रोकने के लिये अन्य क्षेत्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय हितधारकों के साथ भी समन्वय करना चाहिये।

Q31. गैरकानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1967 के प्रावधानों को बताते हुए इसके उद्देश्यों एवं निहितार्थों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- गैरकानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1967 का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
- गैरकानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम (UAPA) के प्राथमिक उद्देश्यों पर चर्चा कीजिये तथा कानून प्रवर्तन एजेंसियों को दी गई शक्तियों एवं प्राधिकारों पर ध्यान केंद्रित करते हुए UAPA के प्रमुख प्रावधानों का वर्णन कीजिये।
- UAPA के निहितार्थों का विश्लेषण कीजिये।
- राष्ट्रीय सुरक्षा और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच संतुलन की आवश्यकता पर बल देते हुए निष्कर्ष दिया जा सकता है।

परिचय:

गैरकानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1967 (UAPA) एक आतंकवाद विरोधी कानून है जिसका उद्देश्य भारत में आतंकवाद तथा अन्य गैरकानूनी गतिविधियों पर अंकुश लगाना है। इसे चीन के साथ वर्ष 1962 के युद्ध एवं पाकिस्तान के साथ वर्ष 1965 के युद्ध के बाद अधिनियमित किया गया था (जब सरकार को अपनी आंतरिक सुरक्षा को मज़बूत करने की आवश्यकता महसूस हुई)। इसके दायरे और शक्तियों का विस्तार करने के लिये UAPA में कई बार संशोधन (सबसे हाल ही में वर्ष 2019 में) किया गया है।

मुख्य भाग:

UAPA के मुख्य उद्देश्य:

- व्यक्तियों और संघों की अलगाववाद, सांप्रदायिकता और उग्रवाद जैसी कुछ गैरकानूनी गतिविधियों की अधिक प्रभावी रोकथाम करना।
- आतंकवादी गतिविधियों से निपटने के लिये, आतंकवाद से संबंधित विभिन्न अपराधों को परिभाषित करना और दंडित करना जैसे कि धन जुटाना, लोगों को अपने समूह में शामिल करना या आतंकवादी संगठन में शामिल होना।
- आतंकवाद से प्राप्त आय या आतंकवाद के लिये उपयोग की जाने वाली किसी भी संपत्ति को जब्त करना।
- आतंकवाद में शामिल या समर्थन करने वाले किसी भी संघ या संगठन को गैरकानूनी या आतंकवादी घोषित करके उस पर प्रतिबंध लगाना।

UAPA के मुख्य प्रावधान:

- UAPA, केंद्र सरकार को आधिकारिक गजट में अधिसूचना जारी करके किसी भी संगठन को गैरकानूनी या आतंकवादी घोषित करने का अधिकार देता है।
  - ऐसी अधिसूचना किसी उच्च न्यायालय के वर्तमान या सेवानिवृत्त न्यायाधीश द्वारा गठित न्यायाधिकरण द्वारा न्यायिक समीक्षा के अधीन है।
- UAPA किसी गैरकानूनी या आतंकवादी संगठन का सदस्य होने या उसका समर्थन करने के लिये विभिन्न दंडों का प्रावधान करता है, जिसमें छह महीने की कैद से लेकर आजीवन कारावास और जुर्माना शामिल है।
- UAPA किसी भी आतंकवादी कृत्य को करने या बढ़ावा देने के लिये विभिन्न दंडों का भी प्रावधान करता है, जिसमें पाँच साल की कैद से लेकर मृत्युदंड और जुर्माना शामिल है।
- UAPA केंद्र सरकार को इस अधिनियम के तहत अपराधों की जाँच करने और मुकदमा चलाने के लिये एक जाँच अधिकारी तथा एक नामित प्राधिकारी नियुक्त करने के लिये अधिकृत करता है।
  - UAPA के तहत इन अधिकारियों को विशेष अधिकार भी दिया गया है जैसे बिना वारंट के गिरफ्तारी, बिना वारंट के तलाशी और जब्ती तथा समूहों के बीच संचार को रोकना।
- UAPA ऐसी किसी भी संपत्ति को जब्त करने का प्रावधान करता है जो आतंकवाद से प्राप्त या उसके लिये उपयोग की जाती है, ऐसी संपत्ति के मालिक को कारण बताओ नोटिस जारी किया जा सकता है।
  - संपत्ति का मालिक एक महीने के भीतर जब्ती के आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है।

UAPA के निहितार्थ:

- UAPA के कठोर होने और इसके द्वारा मानवाधिकारों का उल्लंघन होने के कारण इसकी आलोचना की जाती है क्योंकि इससे कार्यपालिका को व्यापक शक्तियाँ मिलने के साथ नागरिक स्वतंत्रता सीमित होती है। कई बार आरोप लगाया जाता है कि UAPA का इस्तेमाल असहमति को दबाने तथा अल्पसंख्यकों, कार्यकर्ताओं, पत्रकारों एवं विपक्षी दलों को निशाना बनाने के लिये किया जाता है।
- UAPA को असंवैधानिक और मनमाना होने के कारण भी चुनौती दी गई है क्योंकि इसके दुरुपयोग के खिलाफ पर्याप्त सुरक्षा उपाय प्रदान नहीं किये गए हैं। यह तर्क दिया जाता है कि UAPA से प्राकृतिक न्याय, निर्दोषता की धारणा, निष्पक्ष सुनवाई एवं आनुपातिकता के सिद्धांतों का उल्लंघन होता है।
- UAPA पर अप्रभावी और प्रतिकूल होने के लिये भी सवाल उठाए गए हैं, क्योंकि इससे आतंकवाद एवं गैरकानूनी गतिविधियों के मूल कारणों का समाधान नहीं होता है। इस संदर्भ में ऐसा सुझाव दिया गया है कि UAPA को एक व्यापक एवं समग्र कानून द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिये जिससे मानव अधिकारों के साथ राष्ट्रीय सुरक्षा को भी संतुलित किया जा सके।

निष्कर्ष:

UAPA एक विवादास्पद कानून है जिसके सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पहलू हैं। इसका उद्देश्य भारत की संप्रभुता एवं अखंडता को आंतरिक खतरों से बचाना है, लेकिन यह भारत के लोकतंत्र और विविधता के लिये भी खतरा है। यह आवश्यक है कि UAPA को सावधानीपूर्वक और जवाबदेहिता के साथ लागू किया जाए तथा इसकी प्रासंगिकता और वैधता सुनिश्चित करने के लिये समय-समय पर इसकी समीक्षा की जाए।

Q32. दुनिया भर में भू-राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक आयामों में परिवर्तन हो रहे हैं, जिसके चलते संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (यूएनएससी) में सुधारों की आवश्यकता है जो कि के इसके अस्तित्व में आने के बाद से ही लंबित रहे हैं। स्पष्ट कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

दृष्टिकोण

- संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का एक संक्षिप्त विवरण प्रदान करते हुये प्रारंभ कीजिये।
- पिछले कुछ दशकों में भू-राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक बदलावों के लिये संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधारों की आवश्यकता कैसे है? वर्णन कीजिये।
- आप संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधारों के प्रमुख कारकों और वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता को संक्षेप में प्रस्तुत कीजिये।

परिचय

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UNSC) वैश्विक भू-राजनीतिक परिदृश्य में एक प्रमुख संगठन है, जिसे अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी गई है। हालाँकि,संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का ढाँचा और संरचना इसकी स्थापना के पश्चात काफी हद तक अपरिवर्तित रही है,और यह आज के विश्व की जटिल चुनौतियों का समाधान करने में असक्षम प्रतीत होती है। जबकि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का निर्माण करते समय द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के विश्व को ध्यान में रखा गया था, लेकिन आज का भू-राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य बहुत अलग है।

विषयवस्तु

भूराजनीतिक गतिशीलता बदलना:

- **द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की संरचना:** UNSC की स्थापना द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुई थी, और इसकी संरचना उस युग की शक्ति गतिशीलता को दर्शाती है, जिसमें P5 (स्थायी सदस्य) संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, चीन, फ्रांस और यूनाइटेड किंगडम हैं। वीटो शक्तियाँ धारण करना। आज की दुनिया उस समय की द्विध्रुवीय शक्ति संरचना से काफी अलग है।
- **नई शक्तियों का उद्भव:** भारत, ब्राज़ील, दक्षिण अफ्रीका और जर्मनी जैसी उभरती हुई शक्तियाँ, जिन्हें अक्सर सयुंक्त रूप से G4 कहा जाता है, इन देशो ने वैश्विक मामलों में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाई हैं और इन देशों का आर्थिक, राजनीतिक और सैन्य प्रभाव भी है, फिर भी ये देश संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता से बाहर हैं।
- **आर्थिक केंद्रों में बदलाव:** विश्व अर्थव्यवस्था परिदृश्य बदल गया है, उभरती अर्थव्यवस्थाएँ केंद्र में आ गई हैं। विशेष रूप से चीन और भारत ने तेजी से आर्थिक विकास किया है और वर्तमान में वे विश्व की शीर्ष अर्थव्यवस्थाओं में से एक हैं। यह बदलाव वैश्विक शासन में अधिक समावेशी प्रतिनिधित्व की गारंटी देता है
- **बदलते गठबंधन और संघर्ष:** नए सुरक्षा खतरों, गैर-राज्य अभिकर्ता का उद्भव, और गठबंधनों और संघर्षों में बदलाव इन चुनौतियों को प्रभावी ढंग से संबोधित करने के लिये एक अधिक लचीले और प्रतिनिधि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं।

बदलते सामाजिक-आर्थिक आयाम:

- **वैश्वीकरण:** वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने विश्व को पहले से कई अधिक आपस में जोड़ दिया है। आर्थिक और सामाजिक मुद्दे सीमाओं से परे हैं, जिनके लिये व्यापक और समन्वित वैश्विक प्रतिक्रियाओं की आवश्यकता है।

- **जलवायु परिवर्तन:** जलवायु परिवर्तन सबसे गंभीर वैश्विक मुद्दों में से एक बनकर उभरा है। इसके निहितार्थ पर्यावरणीय चिंताओं से अलग है,और शांति और सुरक्षा को प्रभावित करते हैं, जिससे यह एक ऐसा विषय बन जाता है जिस पर यूएनएससी का ध्यान चाहिये।
- **महामारी और स्वास्थ्य सुरक्षा:** COVID-19 महामारी ने स्वास्थ्य संकटों से निपटने में वैश्विक सहयोग की आवश्यकता पर प्रकाश डाला है। स्वास्थ्य सुरक्षा वैश्विक सुरक्षा का एक महत्त्वपूर्ण पहलू बन गई है और इसके लिये यूएनएससी की भागीदारी की आवश्यकता है।
- **मानवाधिकार और मानवीय संकट:** मानवाधिकारों के हनन और मानवीय संकटों की बढ़ती घटनाएँ संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के हस्तक्षेप की मांग करती हैं। एक संशोधित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद को इन मुद्दों पर विविध दृष्टिकोणों का बेहतर प्रतिनिधित्व करना चाहिये। हाल के उदाहरण म्यांमार की जुंटा सरकार और अफ्रीका में सूडान आदि में मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोकने में असमर्थ रहना संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की विफलता हैं।

UNSC सुधारों की आवश्यकता:

- **समावेशिता और वैधता के लिये:** संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की वर्तमान संरचना को अलोकतांत्रिक और वैधता की कमी के रूप में देखा जाता है। सुधारों का लक्ष्य ऐसे अधिक देशों को शामिल करना होना चाहिये जो समकालीन वैश्विक शक्ति संतुलन को दर्शाते हों। P5 देशों, विशेष रूप से रूस और चीन ने लगातार ऐसे किसी भी सुधार का विरोध किया है जो उनकी वीटो शक्तियों को कमजोर कर सकता है। इसने सुधार वार्ता की प्रगति में एक महत्त्वपूर्ण बाधा उत्पन्न की है।
- **न्यायसंगत प्रतिनिधित्व के लिये:** G4 देशों और कुछ अन्य देशों ने स्थायी सदस्यों के रूप में शामिल किये जाने के लिये तर्क दिया है। वे अधिक लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व का समर्थन करते हैं जो विश्व में बदलते शक्ति संबंधों को प्रतिबिंबित करता है।
- **प्रभावशीलता बढ़ाने के लिये:** एक संशोधित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद को समकालीन सुरक्षा चुनौतियों से निपटने में अधिक प्रभावी होना चाहिये। सदस्यता बढ़ाकर और वीटो शक्ति हटाकर एक अधिक सहयोगी और उत्तरदायी संगठन को बढ़ावा मिल सकता है। 193 सदस्य देशों के बीच सुधारों पर आम सहमति तक पहुंचना एक जटिल और चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया है,क्योंकि प्रत्येक देश की अपनी प्राथमिकताएँ और मांगें होती हैं।
- **वैश्विक शासन के लिये:** जलवायु परिवर्तन, स्वास्थ्य संकट और मानवीय मुद्दों जैसे वैश्विक शासन मुद्दों को संबोधित करने के लिये एक संशोधित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की आवश्यकता है जो वैश्विक शासन मानकों को स्थापित करने में भूमिका निभा सके। द्वितीय विश्व युद्ध के परिणामों पर आधारित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के गठन के ऐतिहासिक संदर्भ ने कुछ क्षेत्रों में बदलावों के प्रति प्रतिरोध पैदा किया है।

भारत का परिप्रेक्ष्य:

- **स्थायी सदस्यता:** भारत ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता के लिये लगातार अपना पक्ष प्रस्तुत किया है। इसका तर्क है कि वह विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र और सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, इसलिये वह स्थायी सदस्यता का हकदार है, जो वैश्विक स्तर पर इसके प्रभाव का प्रतिनिधित्व करेगा।
- **शांति स्थापना में योगदान:** वैश्विक शांति और सुरक्षा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करते हुये भारत संयुक्त राष्ट्र शांति मिशन में सबसे बड़े योगदानकर्ताओं में से एक रहा है। भारत का मानना है कि, यह स्थायी सदस्यता के लिये उसकी उपयुक्तता को दर्शाता है।
- **क्षेत्रीय प्रमुखता:** भारत दक्षिण एशिया का एक महत्त्वपूर्ण देश और एशियाई महाद्वीप की एक प्रमुख शक्ति है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में एक स्थायी सीट इस क्षेत्रीय प्रमुखता को बेहतर ढंग से प्रतिबिंबित करेगी।
- **बहुपक्षीय कूटनीति:** भारत की गुटनिरपेक्षता की परंपरा और बहुपक्षीय कूटनीति के प्रति प्रतिबद्धता UNSC सुधारों के अपने लक्ष्य के साथ संरेखित हैं, जो सहयोग और सामूहिक निर्णय लेने के महत्त्व पर जोर देती है।
- **वीटो शक्ति:** भारत, अन्य देशों के साथ,वीटो शक्ति को सीमित करने या चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने का समर्थन करता है। UNSC की वर्तमान स्वरूप में वीटो के कारण इसकी कार्यक्षमता अक्सर बाधित होती रही है।

निष्कर्ष

विश्व भर में भू-राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक आयाम वास्तव में गहरे बदलावों से गुजर रहे हैं। ये बदलाव संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद जैसी वैश्विक शासन संरचनाओं के पुनर्मूल्यांकन की मांग करते हैं, जिसमें अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका के बावजूद,समकालीन दुनिया को बेहतर ढंग से प्रतिबिंबित करने के लिये सुधार की आवश्यकता है। सुधारों के प्रयास बाधाओं की दृढ़ता के कारण बाधित हुये हैं, जिनमें से प्रमुख P5 देशों की सुधरों में अनिच्छा है। हालाँकि, परिवर्तन की तीव्र आवश्यकता की पहचान और भारत जैसी उभरती शक्तियों की वकालत के साथ, यह आवश्यक है कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय एक अधिक प्रतिनिधि और कार्यात्मक UNSC की गारंटी के लिये अपने प्रयास जारी रखने चाहिये।

Q33. भारतीय निर्वाचन प्रणाली में लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (आरपीए अधिनियम, 1951) के महत्त्व और इसकी समकालीन प्रासंगिकता पर चर्चा कीजिये। इसमें हुए विभिन्न संशोधनों और स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनावों के संचालन पर उनके प्रभाव का विश्लेषण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

दृष्टिकोण

- जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (RPA ACT,1951) का एक संक्षिप्त अवलोकन प्रदान करते हुये प्रारंभ कीजिये।
- आरपीए अधिनियम,1951 के समकालीन महत्त्व और प्रासंगिकता पर चर्चा कीजिये
- स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के संचालन पर आरपीए अधिनियम, 1951 के प्रावधानों, संशोधनों और प्रभाव का वर्णन कीजिये।
- आप भारतीय चुनाव प्रणाली में आरपीए अधिनियम, 1951 की समकालीन प्रासंगिकता को संक्षेप में प्रस्तुत करके निष्कर्ष प्रस्तुत कीजिये।

परिचय

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (RPA ACT,1951) एक महत्त्वपूर्ण कानून है जो भारत के चुनावी परिदृश्य को आकार देता है। आरपीए अधिनियम, 1951 को लोक सभा (लोकसभा) और राज्यों की विधानसभाओं में सीटों के आवंटन, मतदाताओं की योग्यता और मतदाता सूची की तैयारी के लिये अधिनियमित किया गया था। यह अधिनियम यह सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक था कि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष तरीके से आयोजित किये जाएँ और लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांतों का सम्मान किया जाए।

विषयवस्तु

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951, कई कारणों से समकालीन भारत में अत्यधिक प्रासंगिक बना हुआ है

- **सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार:** अधिनियम सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के सिद्धांत को कायम रखता है, यह सुनिश्चित करता है कि 18 वर्ष से अधिक आयु के प्रत्येक नागरिक को वोट देने का अधिकार है। यह लोकतंत्र के लिये महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह प्रत्येक नागरिक को सरकार में भागीदारी देने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।
- **चुनावी अपराध:** अधिनियम विभिन्न चुनावी अपराधों, जैसे रिश्वतखोरी, प्रतिरूपण और अनुचित प्रभाव को निर्दिष्ट करता है, और उनके लिये दंड निर्धारित करता है। चुनाव की शुचिता बनाए रखने के लिये यह महत्त्वपूर्ण है।
- **अयोग्यताएँ:** जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951, चुनाव लड़ने के लिये अयोग्यता को सूचीबद्ध करता है, जिसमें आपराधिक दोषसिद्धि और भ्रष्ट आचरण शामिल हैं। यह सुनिश्चित करता है कि संदिग्ध पृष्ठभूमि वाले व्यक्ति सार्वजनिक पद पर न रहें।
- **संशोधन और सुधार:** उभरती चुनौतियों का समाधान करने और चुनावी प्रक्रिया को मजबूत करने के लिये जन प्रतिनिधित्व अधिनियम में पिछले कुछ वर्षों में कई संशोधन हुये हैं। उदाहरण के लिये, 2013 में NOTA (उपरोक्त में से कोई नहीं) की शुरूआत एक महत्त्वपूर्ण सुधार थी, जिसमें मतदाताओं को उपलब्ध उम्मीदवारों के प्रति अपना असंतोष व्यक्त करने की अनुमति मिली।

बदलती परिस्थितियों और चुनौतियों के अनुरूप आरपीए अधिनियम में कई संशोधन हुए हैं। कुछ प्रमुख संशोधनों में शामिल हैं:

- **NOTA विकल्प:** उपरोक्त में से कोई नहीं (NOTA) को 2013 में राज्य विधानसभाओं के आम चुनाव में मतपत्रों/इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) में पेश किया गया था।
- **VVPAT:** वोटर वेरिफिएबल पेपर ऑडिट ट्रेल (VVPAT) EVM से जुड़ी एक स्वतंत्र प्रणाली है जो मतदाताओं को यह सत्यापित करने में मदद करती है कि उनका वोट उनके इच्छित उद्देश्य के अनुसार सही दर्ज़ हो। इसे 2013 में पेश किया गया था, जब उच्चतम न्यायालय ने पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम यूनियन ऑफ इंडिया मामले (2013) के अपने फैसले में ECI को 'स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव की आवश्यकता' की अनुमति दी थी।
- **FCRA प्रावधान:** राजनीतिक दलों के लिये 2,000 रूपए से अधिक प्राप्त दान की सूची ईसीआई को सौंपना अनिवार्य है। राजनीतिक दल 2000 रूपए से ज्यादा नकद चंदा नहीं ले सकते हैं।
- **सूचना का अधिकार:** उम्मीदवारों को यह जानकारी देनी होगी कि क्या वह किसी लंबित मामले में 2 साल या उससे अधिक कैद की सजा से दंडनीय किसी अपराध का आरोपी है या किसी अपराध के लिये दोषी ठहराया गया है।
- **जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8(4):** जुलाई 2013 में उच्चतम न्यायालय ने जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8(4) को रद्द कर दिया और इसे अधिकारातीत (Ultra vires) घोषित कर दिया और माना कि अयोग्यता दोषसिद्धि की तारीख से होती है। धारा 8(4) दोषी सांसदों, विधायकों और MLC को अपने पद पर बने रहने की अनुमति देती है, बशर्ते कि वे ट्रायल कोर्ट द्वारा फैसले की तारीख के 3 महीने के अंदर अपनी दोषसिद्धि/सजा के खिलाफ उच्च अदालतों में अपील दायर कर दें।

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों पर प्रभाव:

- **स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करता है:** जन प्रतिनिधित्व अधिनियम ने, अपने प्रावधानों और संशोधनों के साथ, भारत में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नोटा की शुरूआत ने मतदाताओं को उम्मीदवारों के प्रति अपनी अस्वीकृति व्यक्त करने का अधिकार दिया है, जिससे राजनीति में अवांछित तत्वों का प्रभाव कम हो गया है।
- **राजनीति के अपराधीकरण पर रोक:** भ्रष्ट आचरण के दोषी व्यक्तियों की अयोग्यता ने संदिग्ध पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों को

चुनाव में भाग लेने से रोक दिया है, जो भारतीय चुनाव आयोग (ECI) को जन प्रतिनिधित्व अधिनियम के सिद्धांतों को लगातार बनाए रखने में मदद करता है।

- **पारदर्शिता बनाए रखता है:** इसके अलावा, यह अधिनियम उभरती चुनौतियों, जैसे एग्जिट पोल के प्रभाव और पारदर्शी राजनीतिक फंडिंग की आवश्यकता, को संबोधित करने के लिये पिछले कुछ वर्षों में विकसित हुआ है। चुनाव के अंतिम चरण तक एग्ज़िट पोल पर प्रतिबंध का उद्देश्य मतदाताओं के निर्णयों को समय से पहले प्रभावित होने से रोकना है।

निष्कर्ष

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951, भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे की आधारशिला बना हुआ है। यह बदलती परिस्थितियों और चुनौतियों के अनुरूप वर्षों में विकसित हुआ है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि चुनावी प्रक्रिया स्वतंत्र और निष्पक्ष बनी रहे। अधिनियम के प्रावधान और संशोधन भारतीय चुनावों में पारदर्शिता, जवाबदेही और नैतिक आचरण को बढ़ावा देने में सहायक रहे हैं, जिससे यह एक जीवंत लोकतंत्र के कामकाज के लिये एक महत्त्वपूर्ण कानून बन गया है।

Q34. भारत में ओबीसी के उप-वर्गीकरण की आवश्यकता और चुनौतियों पर चर्चा कीजिये। इसका मौजूदा आरक्षण नीति और सामाजिक न्याय एजेंडे पर क्या प्रभाव पड़ेगा? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- OBC और उप-वर्गीकरण को परिभाषित कीजिये। OBC के उप-वर्गीकरण के लिये संवैधानिक प्रावधानों तथा आयोग का उल्लेख कीजिये।
- भारत में OBC के उप-वर्गीकरण की आवश्यकता और चुनौतियों पर चर्चा कीजिये। बताइये कि यह मौजूदा आरक्षण नीति तथा सामाजिक न्याय के एजेंडे को कैसे प्रभावित करेगा।
- मुख्य बिंदुओं को संक्षिप्त रूप में लिखिये और अपने सुझाव दीजिये।

परिचय:

वर्ष 1980 में मंडल आयोग की रिपोर्ट में OBC आबादी 52% होने का अनुमान लगाया गया था और इन समुदायों को पिछड़े वर्ग के रूप में पहचाना गया था। हालाँकि असमान सामाजिक-आर्थिक स्थिति के कारण आरक्षण का लाभ भी असमान हो गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 340 के अनुसार, भारत का राष्ट्रपति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की दशाओं की जाँच करने के लिये तथा उनकी दशा में सुधार करने से संबंधित सिफारिश प्रदान के लिये एक आदेश के माध्यम से आयोग की नियुक्ति कर सकता है। वर्ष 2017 में न्यायसंगत प्रतिनिधित्व के लिये OBC के उप-वर्गीकरण की जाँच करने हेतु न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) जी. रोहिणी के नेतृत्व में पाँच सदस्यीय आयोग का गठन किया गया था।

मुख्य भाग:

OBC के उप-वर्गीकरण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न होती है:

- वर्ष 2018 में आयोग ने पिछले वर्षों में 1.3 लाख केंद्रीय सरकारी नौकरियों और केंद्रीय उच्च शिक्षा संस्थानों में OBC प्रवेश के डेटा का विश्लेषण किया था जिससे पता चला कि 97% लाभ केवल 25% OBC जातियों को मिला है। लगभग 983 OBC समुदायों (कुल का 37%) का नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में शून्य प्रतिनिधित्व था, जो उप-वर्गीकरण की आवश्यकता को उजागर करता है।
- यह सुनिश्चित करना कि आरक्षण का लाभ OBC के सबसे पिछड़े और हाशिये पर रहने वाले वर्गों जैसे कि गैर-अधिसूचित जनजातियों, खानाबदोश जनजातियों आदि तक पहुँचे।
- किसी भी दोहराव, अस्पष्टता, विसंगतियों और त्रुटियों को दूर करके OBC की केंद्रीय सूची को तर्कसंगत एवं सुव्यवस्थित करना।

OBC के उप-वर्गीकरण की चुनौतियाँ इस प्रकार हैं:

- विभिन्न OBC समुदायों की जनसंख्या और सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर विश्वसनीय तथा अद्यतन डेटा की कमी। सामाजिक-आर्थिक जाति जनगणना (SECC) डेटा को आयोग द्वारा विश्वसनीय नहीं माना जाता है, जिसने अखिल भारतीय सर्वेक्षण का अनुरोध किया है।
- OBC के उप-वर्गीकरण के राजनीतिक और सामाजिक निहितार्थ। उप-वर्गीकरण आरक्षण के अपने हिस्से को लेकर विभिन्न OBC समुदायों के बीच विभाजन तथा संघर्ष पैदा कर सकता है।
- इसका उपयोग सत्तारूढ़ या विपक्षी दलों द्वारा कुछ वोट-बैंकों को खुश करने या अलग करने के लिये एक उपकरण के रूप में भी किया जा सकता है।

मौजूदा आरक्षण नीति और सामाजिक न्याय के एजेंडे पर OBC के उप-वर्गीकरण का प्रभाव:

- एक ओर, उप-वर्गीकरण यह सुनिश्चित करके सामाजिक न्याय के एजेंडे को बढ़ा सकता है कि OBC के सबसे पिछड़े और वंचित वर्गों को नौकरियों एवं शिक्षा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व तथा अवसर मिले।
  - इससे कुछ उच्च जातियों के बीच नाराज़गी के कारण आंदोलन कमज़ोर हो सकता है, जो महसूस करते हैं कि आरक्षण का लाभ कुछ प्रमुख OBC समुदायों द्वारा हथिया लिया गया है।

- दूसरी ओर, उप-वर्गीकरण OBC के बीच और अधिक विखंडन तथा पदानुक्रम बनाकर मौजूदा आरक्षण नीति को कमज़ोर कर सकता है।
  - यह कुछ बड़े या अधिक आबादी वाले OBC समुदायों की हिस्सेदारी को कम करके आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को भी कमज़ोर कर सकता है।
  - यह समग्र रूप से OBC द्वारा सामना किये जाने वाले संरचनात्मक मुद्दों और प्रणालीगत भेदभाव से भी ध्यान भटका सकता है।

निष्कर्ष:

OBC का उप-वर्गीकरण एक जटिल और विवादास्पद मुद्दा है जिसके लिये संतुलित तथा समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है। हालाँकि यह OBC के बीच अंतर-समूह असमानताओं के कुछ पहलुओं को संबोधित कर सकता है, यह आरक्षण नीति एवं सामाजिक न्याय के एजेंडे हेतु नई चुनौतियाँ व समस्याएँ भी पैदा कर सकता है। इसलिये किसी भी उप-वर्गीकरण योजना को लागू करने से पहले एक व्यापक और विश्वसनीय डेटाबेस, स्पष्ट तथा सुसंगत कानूनी ढाँचा और व्यापक एवं समावेशी परामर्श प्रक्रिया सुनिश्चित करना महत्त्वपूर्ण है।

Q35. भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के पक्ष और विपक्ष में तर्कों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये। ऐसे कदम के संवैधानिक और सामाजिक निहितार्थ क्या हैं? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- विषय के संक्षिप्त परिचय और संदर्भ के साथ उत्तर दीजिये।
- समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के पक्ष और विपक्ष में तर्कों पर चर्चा कीजिये। साथ ही संवैधानिक एवं सामाजिक निहितार्थों पर भी चर्चा कीजिये।
- आगे की राह के संबंध में उपयुक्त निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाना LGBTQ+ समुदाय की लंबे समय से चली आ रही मांग है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने समलैंगिक विवाह को वैध बनाने वाले फैसले पारित करने से इनकार कर दिया, इसके लिये उसने संसद और राज्य विधानसभाओं को कानून बनाने का आदेश दिया।

मुख्य भाग:

भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के पक्ष में तर्क:

- **समानता और मानवाधिकार:** भारत का संविधान सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समान सुरक्षा की गारंटी देता है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना कि संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और गरिमा के अधिकार में यौन अभिविन्यास तथा पहचान का अधिकार भी शामिल है।
- **व्यक्तिगत स्वायत्तता और विकल्प:** हादिया केस तथा लता सिंह केस में सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया है कि जीवनसाथी चुनने का अधिकार मौलिक अधिकार है। इसलिये समान-लिंग वाले जोड़ों को कानूनी या सामाजिक प्रतिबंधों के अधीन हुए बिना अपना साथी चुनने एवं परिवार बनाने की स्वतंत्रता होनी चाहिये।
- **सामाजिक न्याय और समावेशन:** समलैंगिक विवाह को वैध बनाने से समान-लिंग वाले जोड़ों को विषमलैंगिक जोड़ों के समान कानूनी अधिकार एवं लाभ मिलेंगे। इससे कलंक और भेदभाव कम होगा, जिससे अंततः LGBTQIA+ समुदाय की भलाई और खुशहाली में वृद्धि होगी।

भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के विपक्ष तर्क:

- **नैतिकता और धर्म:** भारत में कई धार्मिक और सांस्कृतिक समूहों का मानना है कि समलैंगिकता अप्राकृतिक या पाप है। उन्हें डर है कि समलैंगिक विवाह को अगर कानूनी मान्यता प्राप्त हो गई तो समलैंगिकता वैध हो जाएगी, जिससे संभावित रूप से पारंपरिक नैतिक मूल्यों तथा धार्मिक शिक्षाओं का क्षरण हो सकता है।
- **कानूनी जटिलताएँ:** विरोधियों का यह भी तर्क है कि समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के लिये मौजूदा कानूनों, नीतियों और सामाजिक संरचनाओं में महत्त्वपूर्ण बदलाव की आवश्यकता होगी जो वर्तमान में विषमलैंगिक विवाह पर आधारित हैं। इससे कार्यान्वयन में कानूनी जटिलताएँ तथा चुनौतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।
- **व्यावहारिकता एवं व्यवहार्यता:** यह भी तर्क दिया जाता है कि यदि कोई पुरुष स्वयं को महिला के रूप में पहचानने लगे तो कानून के समक्ष उसके साथ कैसा व्यवहार किया जाएगा।

भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के संवैधानिक और सामाजिक निहितार्थ:

- **संवैधानिक निहितार्थ:** समलैंगिक विवाह को वैध बनाना एक संवैधानिक अधिकार और LGBTQ+ समुदाय की गरिमा और समानता को बनाए रखने का एक तरीका माना जा सकता है।
  - हालाँकि संविधान अनुच्छेद 25 के तहत धर्म की स्वतंत्रता भी देता है, जो विभिन्न धार्मिक समुदायों को विवाह, तलाक, विरासत आदि जैसे मामलों को नियंत्रित करने वाले अपने व्यक्तिगत कानून बनाने की अनुमति देता है।
  - इसलिये भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाने में कुछ धार्मिक समूहों के विरोध का सामना करना पड़ सकता है जो समलैंगिकता को पाप या अप्राकृतिक मानते हैं।

- **सामाजिक निहितार्थ:** भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाने के महत्त्वपूर्ण एवं विविध सामाजिक निहितार्थ हैं। यह LGBTQ+ के प्रति हो रहे भेदभाव को कम कर सकता है और मानसिक स्वास्थ्य में सुधार, समावेशन में वृद्धि तथा कानूनी अधिकार प्रदान कर सकता है।
  - हालाँकि यह प्रतिक्रिया को भी भड़का सकता है, संघर्ष पैदा कर सकता है और सांस्कृतिक मूल्यों को चुनौती दे सकता है, संभावित रूप से सामाजिक सद्भाव तथा विकास को प्रभावित कर सकता है।

निष्कर्ष:

भारत में समलैंगिक विवाह को वैध बनाना संवैधानिक और सामाजिक प्रभावों वाला एक जटिल मामला है। यह विचारशील विचार, सम्मानजनक संवाद तथा भारतीय संविधान में उल्लिखित लोकतांत्रिक, न्यायपूर्ण एवं गरिमापूर्ण सिद्धांतों पर आधारित निर्णय की मांग करता है।

Q36. संयुक्त राष्ट्र (UN) की उसके सराहनीय कार्यों के बावजूद विश्व में शांति और सुरक्षा बनाए रखने में विफलता के लिये अक्सर आलोचना की जाती है। इसके सामने आने वाली चुनौतियों का विश्लेषण कीजिये तथा 21वीं सदी में संयुक्त राष्ट्र की भूमिका एवं प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिये कुछ सुधारों का सुझाव दीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- अपने उत्तर की शुरुआत संयुक्त राष्ट्र के संक्षिप्त परिचय से कीजिये और कुछ उदाहरणों का उल्लेख कीजिये, जहाँ इसकी विफलता के लिये इसकी आलोचना की गई है।
- संयुक्त राष्ट्र के समक्ष आने वाली चुनौतियों और सीमाओं पर चर्चा कीजिये।
- संयुक्त राष्ट्र के प्रदर्शन और विश्वसनीयता में सुधार के लिये कुछ सुधारों का सुझाव दीजिये।
- संतुलित दृष्टिकोण के साथ निष्कर्ष लिखिये।

परिचय

संयुक्त राष्ट्र (UN) दुनिया का सबसे प्रमुख और प्रभावशाली बहुपक्षीय संगठन है, जिसका प्राथमिक उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाए रखना है। हालाँकि संयुक्त राष्ट्र को सीरिया, यमन, म्याँमार, लीबिया और दक्षिण सूडान जैसे हाल ही के कुछ सबसे हिंसक तथा जटिल संघर्षों को रोकने या हल करने में विफलता के कारण कई चुनौतियों और आलोचनाओं का भी सामना करना पड़ा है।

मुख्य भाग

- **संयुक्त राष्ट्र के समक्ष कुछ चुनौतियाँ:**
  - **राजनीतिक इच्छाशक्ति और आम सहमति का अभाव:** स्थायी सदस्य (P5) जिनके पास वीटो शक्ति है, वे अक्सर मानवीय परिणामों या संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धांतों की परवाह किये बिना अपने स्वयं के हितों या सहयोगियों की रक्षा के लिये अपने वीटो का गलत उपयोग करते हैं।
    - उदाहरण के लिये रूस एवं चीन ने सीरिया को लेकर उन प्रस्तावों को बार-बार अवरुद्ध किया है जो प्रतिबंध लगाते हैं या सैन्य हस्तक्षेप को अधिकृत करते हैं।
  - **पुराना और प्रतिनिधित्व विहीन:** UNSC ने 1965 के बाद से अपनी सदस्यता में कोई परिवर्तन नहीं किया है। अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और दक्षिण एशिया जैसे कई क्षेत्रों का UNSC में प्रतिनिधित्व कम है या बिल्कुल भी नहीं है।
    - इसके अलावा भारत जैसी कुछ उभरती शक्तियाँ दशकों से UNSC में स्थायी सीट की मांग कर रही हैं।
  - **शांति स्थापना से संबंधित मुद्दे:** संयुक्त राष्ट्र शांति स्थापना अभियान अपर्याप्त संसाधनों, शत्रुतापूर्ण वातावरण, मानवाधिकारों के उल्लंघन तथा सदस्य राज्य के स्वैच्छिक योगदान पर वित्तपोषण निर्भरता सहित कई चुनौतियों से ग्रस्त हैं।
  - **कमज़ोर समन्वय और सुसंगतता:** संयुक्त राष्ट्र एक जटिल संरचना है जिसमें कभी-कभी विभिन्न संस्थाओं के बीच दोहराव, ओवरलैप या प्रतिस्पर्द्धा देखी जाती है।
  - उदाहरण के लिये एक ही संघर्ष के लिये कई मध्यस्थ या दूत होते हैं, जैसे लीबिया या यमन में।

21वीं सदी में संयुक्त राष्ट्र की भूमिका और प्रभावशीलता को बढ़ाने हेतु कुछ संभावित सुधार:

- **सुरक्षा परिषद में सुधार:** सुरक्षा परिषद को अधिक प्रतिनिधिक बनाने और P5 वीटो शक्ति के प्रभाव को कम करने के लिये इसके पुनर्गठन पर विचार करना। इसमें अधिक क्षेत्रों तथा भारत जैसी उभरती शक्तियों को शामिल करने के लिये अपनी सदस्यता का विस्तार करना, वीटो शक्ति को सीमित करना या समाप्त करना, इसके कामकाज़ के तरीकों एवं निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सुधार करना तथा इसके निरीक्षण व मूल्यांकन तंत्र को मज़बूत करना शामिल हो सकता है।
- **संयुक्त राष्ट्र शांति स्थापना अभियानों को मज़बूत करना:** इसमें उनके वित्तपोषण और संसाधनों, प्रशिक्षण और उपकरणों में वृद्धि,, स्पष्ट तथा यथार्थवादी अधिदेश विकसित करना, अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं मानवाधिकार मानकों का अनुपालन सुनिश्चित करना और क्षेत्रीय संगठनों के साथ साझेदारी को बढ़ावा देना शामिल हो सकता है।

- **समन्वय और सुसंगतता में सुधार:** इसमें उनके अधिदेशों और संरचनाओं को सुव्यवस्थित करना, उनके संचार एवं सूचना-साझाकरण को बढ़ाना, सहयोग तथा नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा देना और संयुक्त राष्ट्र के दृष्टिकोण के साथ उनकी रणनीतियों एवं कार्यों को संरेखित करना शामिल हो सकता है।
- **नागरिक समाज की भागीदारी:** शांति निर्माण एवं संघर्ष समाधान प्रयासों में नागरिक समाज संगठनों और गैर-सरकारी अभिनेताओं को शामिल करना। वे बहुमूल्य स्थानीय ज्ञान एवं ज़मीनी स्तर पर सहायता प्रदान कर सकते हैं।
- **आधुनिक तकनीक को अपनाना:** इन चुनौतियों से प्रभावी ढंग से निपटने के लिये रणनीतियाँ और क्षमताएँ विकसित करके साइबर युद्ध, आतंकवाद एवं पर्यावरणीय संकटों सहित संघर्षों की बदलती प्रकृति को पहचानना और उनके अनुकूल बनाना।

निष्कर्ष:

संयुक्त राष्ट्र ने पिछले 75 वर्षों में वैश्विक शांति और सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। हालाँकि इसे 21वीं सदी की नई चुनौतियों और वास्तविकताओं के अनुरूप ढलने की भी ज़रूरत है। इन सुधारों को लागू करके संयुक्त राष्ट्र अपने सदस्य देशों और दुनिया भर के लोगों के लिये अधिक प्रभावी, कुशल, विश्वसनीय और प्रासंगिक बन सकता है।

Q37. संसदीय समितियाँ भारतीय लोकतंत्र का एक अनिवार्य हिस्सा हैं, जबकि उन्हें अपने कामकाज में कई चुनौतियों और सीमाओं का सामना करना पड़ता है। भारतीय संसदीय समितियों की भूमिका और चुनौतियों पर चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- अपने उत्तर की शुरुआत संसदीय समितियों के संक्षिप्त परिचय से कीजिये और उनके अधिकार के लिये संवैधानिक प्रावधानों का उल्लेख कीजिये।
- शासन के विभिन्न पहलुओं में संसदीय समितियों की भूमिका एवं महत्त्व का वर्णन कीजिये।
- संसदीय समितियों के सामने आने वाली चुनौतियों एवं सीमाओं पर प्रकाश डालिये।
- संसदीय समितियों की कार्यप्रणाली और प्रभावशीलता में सुधार के लिये कुछ उपाय सुझाइये।

परिचय:

संसदीय समिति सांसदों का एक पैनल है जिसे सदन द्वारा नियुक्त या निर्वाचित किया जाता है या अध्यक्ष/सभापति द्वारा नामित किया जाता है। वे अनुच्छेद 105 और अनुच्छेद 118 से अपना अधिकार प्राप्त करते हैं। वे भारतीय लोकतंत्र का एक अनिवार्य हिस्सा हैं क्योंकि वे विभिन्न भूमिकाएँ और कार्य करते हैं जो विधायी प्रक्रिया की गुणवत्ता एवं प्रभावशीलता को बढ़ाते हैं।

मुख्य भाग

- **संसदीय समितियों की कुछ भूमिकाएँ और कार्य:**
  - वे सरकार द्वारा प्रस्तावित बिलों और नीतियों को विधायी विशेषज्ञता व सुझाव प्रदान करती हैं।
  - वे विधेयकों की विस्तार से जाँच करती हैं और अपने निष्कर्षों एवं सिफारिशों के आधार पर संशोधन का सुझाव देती हैं।
  - वे एक लघु संसद के रूप में कार्य करती हैं, जो विभिन्न दलों, क्षेत्रों और समाज के वर्गों के विचारों तथा हितों का प्रतिनिधित्व करती हैं।
  - वे सांसदों के बीच विचार-विमर्श, परामर्श और आम सहमति बनाने के लिये एक मंच प्रदान करती हैं।
  - वे कार्यकारी शाखा की देख-रेख करती हैं और उसे उसके कार्यों के लिये जवाबदेह ठहराती हैं।
  - वे मंत्रालयों और विभागों द्वारा कानूनों, नीतियों, योजनाओं और बजट के कार्यान्वयन की निगरानी करती हैं।
  - वे सार्वजनिक हित और महत्त्व के मामलों की भी जाँच करती हैं।
  - वे विधायी प्रक्रिया में सार्वजनिक भागीदारी और पारदर्शिता की सुविधा प्रदान करती हैं।
  - वे विभिन्न मुद्दों पर अपनी राय और सुझाव देने के लिये विशेषज्ञों, हितधारकों, समाजिक समूहों और नागरिकों को आमंत्रित करती हैं।
- **संसदीय समितियों के समक्ष चुनौतियाँ एवं सीमाएँ:**
  - **'पुअर रेफरल' दर:** केवल कुछ बिल ही आगे की जाँच के लिये समितियों को भेजे जाते हैं। कई विधेयक सदन में पर्याप्त जाँच या चर्चा के बिना पारित कर दिये जाते हैं।
  - **अनुशंसात्मक प्रकृति:** समितियों के पास अपनी सिफारिशों को लागू करने के लिये पर्याप्त शक्तियाँ नहीं हैं। सरकार इन सिफारिशों व सुझावों को मानने या लागू करने के लिये बाध्य नहीं है, समितियों के पास अपनी सिफारिशों की स्थिति पर नज़र रखने के लिये कोई अनुवर्ती तंत्र भी नहीं है।
  - **समय और संसाधनों की कमी:** समितियों को सीमित समय के अंदर बड़ी संख्या में बिलों एवं संबंधित मुद्दों की जाँच करनी होती है। व्यापक जाँच के लिये उनके पास अक्सर पर्याप्त कर्मचारियों, अनुसंधान सहायता, आँकड़ों और जानकारी का अभाव होता है।

- **सांसदों की कम उपस्थिति:** समिति की बैठकों में सांसदों की उपस्थिति अक्सर विभिन्न कारणों से कम होती है, जैसे- परस्पर विरोधी कार्यक्रम, राजनीतिक दबाव, रुचि या प्रोत्साहन की कमी।
- **एक समिति के अंतर्गत कई मंत्रालय:** विभागीय स्थायी समितियों को कई मंत्रालयों और विषयों की देख-रेख करनी होती है जो संबंधित या सुसंगत नहीं हैं। इससे समिति के कार्य प्रति फोकस, गहन अध्ययन और विशेषज्ञता में कमी आती है।

संसदीय समितियों की कार्यप्रणाली में सुधार के कुछ संभावित उपाय:

- **रेफरल दर में वृद्धि:** विस्तृत जाँच और अध्ययन के लिये अधिक बिलों को समितियों को भेजा जाना चाहिये। सभी विधेयकों को समितियों के पास भेजना अनिवार्य या वांछनीय बनाने हेतु नियमों एवं प्रक्रियाओं में संशोधन किया जाना चाहिये।
- **शक्तियों में वृद्धि:** समितियों को अपनी सिफारिशों को लागू करने या सरकार से प्रतिक्रियाएँ मांगने के लिये अधिक शक्तियाँ प्रदान की जानी चाहिये। समिति की सिफारिशों को स्वीकार या अस्वीकार करने के लिये सरकार को भी जवाबदेह बनाया जाना चाहिये।
- **अधिक समय और संसाधन उपलब्ध कराना:** समितियों को अपना कार्य प्रभावी ढंग से संचालित करने के लिये अधिक समय और संसाधन दिये जाने चाहिये। उन्हें पर्याप्त कर्मचारी, अनुसंधान सहायता, डेटा और जानकारी प्रदान की जानी चाहिये। उन्हें कार्य करने के लिये आधुनिक तकनीक और उपकरणों का उपयोग करने की भी अनुमति दी जानी चाहिये।
- **सांसदों की उपस्थिति में सुधार:** प्रोत्साहन, दंड या मान्यता प्रदान करके समिति की बैठकों में सांसदों की उपस्थिति में सुधार किया जाना चाहिये। सांसदों को समिति के कार्य के महत्त्व और लाभों से भी अवगत कराया जाना चाहिये।
- **समिति के तहत मंत्रालयों की संख्या को तर्कसंगत बनाना:** समिति के कार्य के प्रति फोकस, गहन अध्ययन और विशेषज्ञता सुनिश्चित करने हेतु एक समिति के तहत मंत्रालयों और विषयों की संख्या को कम किया जाना चाहिये या उन्हें तर्कसंगत बनाया जाना चाहिये। विषयों को उनकी प्रासंगिकता या सुसंगतता के अनुसार समूहीकृत किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष:

संसदीय समितियाँ भारतीय लोकतंत्र के लिये महत्त्वपूर्ण हैं। इन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, लेकिन संसदीय समितियों में संशोधन कर भारतीय लोकतंत्र में संसद की भूमिका एवं प्रासंगिकता को पुनर्जीवित और बेहतर बनाया जा सकता है।

Q38. भारत के राष्ट्रपति की संवैधानिक शक्तियों और कार्यों पर चर्चा करते हुए देश के औपचारिक प्रमुख एवं संविधान संरक्षक दोनों के रूप में उनकी भूमिका पर प्रकाश डालिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- भारत के राष्ट्रपति का परिचय लिखिये।
- भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त राष्ट्रपति की शक्तियाँ एवं कार्य लिखिये।
- राष्ट्र के औपचारिक प्रमुख और संविधान के संरक्षक के रूप में राष्ट्रपति के महत्त्व का उल्लेख कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत का राष्ट्रपति देश का प्रमुख और भारतीय सशस्त्र बलों का **सर्वोच्च कमांडर** होता है। राष्ट्रपति की शक्तियाँ और कार्य **संविधान** में उल्लिखित हैं। **राष्ट्रपति की भूमिका** काफी हद तक औपचारिक है, इसकी भारत सरकार के कामकाज में कुछ शक्तियाँ और कार्य महत्त्वपूर्ण हैं।

मुख्य भाग:

राष्ट्रपति की कुछ प्रमुख संवैधानिक शक्तियाँ एवं कार्य:

कार्यकारी शक्तियाँ:

- **प्रधानमंत्री की नियुक्ति:** राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता है। प्रधानमंत्री आमतौर पर लोकसभा (संसद का निम्न सदन) में बहुमत दल का नेता होता है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर मंत्रिपरिषद् के अन्य सदस्यों की नियुक्ति करता है।

विधायी शक्तियाँ:

- **संसद का आह्वान और सत्रावसान:** राष्ट्रपति के पास संसद के दोनों सदनों (लोकसभा और राज्यसभा) को बुलाने और स्थगित करने का अधिकार है। राष्ट्रपति के पास लोकसभा को भंग करने की भी शक्ति है।
- **संसद को संबोधित करना:** राष्ट्रपति प्रत्येक आम चुनाव के पश्चात् पहले सत्र की शुरुआत में संसद के दोनों सदनों को संबोधित करता हैं।

वित्तीय शक्तियाँ:

- **बजट अनुमोदन:** राष्ट्रपति बजट को संसद के समक्ष रखवाता है और सामान्य परिचर्चा के बाद उस पर मतदान की अनुमति देता है।

सैन्य शक्तियाँ:

- **कमांडर-इन-चीफ:** राष्ट्रपति भारतीय सशस्त्र बलों का सर्वोच्च कमांडर है और सभी सशस्त्र बलों के आदेशों का प्रयोग उसके द्वारा किया जाता है (अनुच्छेद 53)।

न्यायिक शक्तियाँ:

- **क्षमा और प्रत्यावर्तन:** राष्ट्रपति के पास किसी भी अपराध के लिये दोषी ठहराए गए किसी भी व्यक्ति की सज़ा को क्षमा करने, राहत देने या सज़ा में छूट प्रदान करने या सज़ा को निलंबित करने, कम करने या कम करने की शक्ति है (अनुच्छेद 72)।

आपातकालीन शक्तियाँ:

- **आपातकाल की उद्घोषणा:** राष्ट्रपति आपातकाल की घोषणा कर सकता है, यदि वह संतुष्ट है, कि एक गंभीर आपातकाल की स्थिति बन रही है, जिससे भारत या उसके क्षेत्र के किसी भी हिस्से की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो सकता है, चाहे वह युद्ध या बाह्य आक्रमण हो या सशस्त्र विद्रोह हो **(अनुच्छेद 352 - 360)**।

भारत का राष्ट्रपति दोहरी भूमिका निभाता है, **राज्य के औपचारिक प्रमुख** और **संविधान के संरक्षक** दोनों के रूप में कार्य करता है। ये भूमिकाएँ राष्ट्रपति की स्थिति के प्रतीकात्मक और संवैधानिक पहलुओं को रेखांकित करती हैं:

राज्य का औपचारिक प्रमुख:

- **प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व:** राष्ट्रपति राष्ट्र की एकता और अखंडता का प्रतिनिधित्व करता है। कार्यालय के औपचारिक पहलुओं में राज्य समारोह और कार्यक्रम शामिल हैं, जहाँ राष्ट्रपति भारतीय राज्य के प्रतीक के रूप में कार्य करता है।
- **राजनयिक प्रोटोकॉल:** राष्ट्रपति विदेशी गणमान्य व्यक्तियों की मेज़बानी करता है, राजदूतों के प्रमाणपत्र प्राप्त करता है साथ ही राजकीय दौरों में भाग लेता है। ये गतिविधियाँ वैश्विक मंच पर भारत की छवि प्रस्तुत करने में योगदान देती हैं।

संविधान का संरक्षक:

- **विधान पर सहमति:** राष्ट्रपति के पास संसद द्वारा पारित विधेयकों पर सहमति देने की शक्ति है। कुछ परिस्थितियों में, राष्ट्रपति भी विधेयक को पुनर्विचार के लिये लौटा सकता है या सहमति देने से इनकार कर सकता है, जिससे संभावित रूप से संविधान का उल्लंघन करने वाले कानून को स्थगित किया जा सकता है।

निष्कर्ष:

राष्ट्रपति एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है, जो राष्ट्रीय एकता के औपचारिक सार और लोकतांत्रिक सिद्धांतों की रक्षा के संवैधानिक कर्त्तव्य दोनों का प्रतीक है। कार्यकारी, विधायी, राजनयिक, सैन्य और आपातकालीन शक्तियों के सावधानीपूर्वक संतुलन के माध्यम से, राष्ट्रपति देश के लोकतांत्रिक ढाँचे को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

Q39. स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित कराने में भारत निर्वाचन आयोग के महत्त्व पर चर्चा करते हुए इसके समक्ष आने वाली समकालीन चुनौतियों का परीक्षण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- भारत निर्वाचन आयोग (ECI) का परिचय लिखिये।
- भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में इसका महत्व लिखिये।
- चुनौतियों और उनके समाधानों का उल्लेख कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत निर्वाचन आयोग (ECI) एक स्वतंत्र संवैधानिक निकाय है, जो भारत में लोकसभा (संसद के निम्न सदन) से लेकर राष्ट्रपति तक सभी चुनाव कराने के लिये उत्तरदायी है। भारत निर्वाचन आयोग (ECI) को अपनी शक्तियाँ और कार्य भारत के संविधान के **अनुच्छेद-324** के तहत प्राप्त हैं। उसके पास संपूर्ण चुनावी प्रक्रिया की देखरेख, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार है।

मुख्य भाग:

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने में ECI का महत्त्व:

- **चुनावों का निष्पक्ष संचालन:** ECI, **राजनीतिक प्रभाव** से पृथक एक **स्वतंत्र संवैधानिक निकाय** है, जो चुनावों का निष्पक्ष संचालन सुनिश्चित करता है। यह स्वतंत्रता निर्वाचन प्रक्रिया में जनता का विश्वास प्राप्त करने के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- **मतदाता पंजीकरण और पहचान:** निर्वाचन आयोग सटीक मतदाता सूचियों के रखरखाव और मतदाता पहचान पत्र जारी करने की देखरेख करता है। इससे फर्जी मतदान जैसे चुनावी कदाचार को रोकने में मदद मिलती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि केवल योग्य मतदाता ही चुनावी प्रक्रिया में भाग लें।
- **आदर्श आचार संहिता का कार्यान्वयन: भारत निर्वाचन आयोग (ECI)** चुनावों के दौरान राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों के लिये एक **आदर्श आचार संहिता** का निर्माण करता है और उसे लागू करता है। यह संहिता **समान अवसर, नैतिक प्रचार** सुनिश्चित करती है और मतदाताओं को प्रभावित करने के लिये धन और बाहुबल के इस्तेमाल को रोकती है।
- **राजनीतिक व्यय की निगरानी:** भारत निर्वाचन आयोग (ECI) चुनावों के दौरान राजनीतिक व्यय की निगरानी और विनियमन करता है, यह राजनीति में धन के प्रभाव पर अंकुश लगाता है और राजनीतिक दलों के बीच निष्पक्ष प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा देता है।

कुछ उल्लेखनीय चुनौतियों में शामिल हैं:

- **धन-बल और चुनाव व्यय:** नियमों के बावजूद, चुनावों में धन का प्रभाव एक चुनौती बना हुआ है। अवैध फंडिंग, बेहिसाब व्यय और प्रचार में काले धन का इस्तेमाल चुनावी प्रक्रिया की निष्पक्षता को कमज़ोर कर सकता है।
- **आदर्श आचार संहिता का क्षरण:** राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों द्वारा आदर्श आचार संहिता का उल्लंघन करने के मामले बढ़ रहे हैं। निर्वाचन आयोग को नैतिक मानकों को प्रभावी ढंग से लागू करने, समान अवसर सुनिश्चित करने और उल्लंघनों को तेजी से संबोधित करने की चुनौती का सामना करना पड़ता है।
- **चुनाव प्रौद्योगिकी और साइबर सुरक्षा:** निर्वाचन प्रक्रिया में प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग से साइबर सुरक्षा संबंधित नई चुनौतियाँ सामने आती हैं। चुनाव परिणामों की विश्वसनीयता बनाए रखने के लिये इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों (EVM) और मतदाता डेटाबेस को हैकिंग से सुरक्षित रखना महत्त्वपूर्ण है।
- **राजनीतिक प्रभाव और स्वतंत्रता:** निर्वाचन आयोग की अपनी स्वतंत्रता बनाए रखने और अनुचित राजनीतिक प्रभाव का विरोध करने की क्षमता महत्त्वपूर्ण है। आयोग की निष्पक्षता के संबंध में आरोपों के उदाहरण निर्वाचन प्रक्रिया में जनता के विश्वास को कमज़ोर कर सकते हैं।

भारत निर्वाचन आयोग (ECI) के समक्ष आने वाली चुनौतियों को नियंत्रित करने के उपाय:

- **आदर्श आचार संहिता को मज़बूत बनाना:** राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों द्वारा उल्लंघन के विरुद्ध त्वरित कार्रवाई सुनिश्चित करते हुए आदर्श आचार संहिता को सख्ती से लागू करना। आचार संहिता के उल्लंघन के लिये मज़बूत दंडात्मक उपायों के साथ भारत निर्वाचन आयोग (ECI) को सशक्त बनाने हेतु कानूनी सुधारों के विकल्पों का पता लगाना।
- **वैधानिक प्रवर्तन के साथ सहयोग:** मतदाताओं, उम्मीदवारों और निर्वाचन अधिकारियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ समन्वय को मज़बूत करना। चुनाव में होने वाली हिंसा की आशंका वाले क्षेत्रों के लिये व्यापक सुरक्षा योजनाओं को विकसित और कार्यान्वित करना।
- **चुनाव फंडिंग में सुधार:** चुनावों में धन के प्रभाव को कम करने के लिये राजनीतिक फंडिंग में सुधार का समर्थन। राजनीतिक दान और व्यय में, संभवत: सख्त वित्तीय प्रकटीकरण आवश्यकताओं के माध्यम से, पारदर्शिता को प्रोत्साहित करना।
- **स्वतंत्रता और जवाबदेहिता:** राजनीतिक हस्तक्षेप से भारत निर्वाचन आयोग (ECI) की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिये तंत्र को मज़बूत करना। यहाँ तक कि, विधि आयोग ने चुनाव सुधारों पर अपनी 255वीं रिपोर्ट (2015) में ECI को अधिक स्वायत्तता सुनिश्चित करने के लिये एक चयन समिति के गठन की सिफारिश की थी।

निष्कर्ष:

भारत निर्वाचन आयोग को तकनीकी नवाचार, वैधानिक सुधार, जन जागरुकता और वैश्विक सहयोग को शामिल करते हुए एक रणनीति के माध्यम से चुनौतियों का समाधान करने की आवश्यकता है। लोकतांत्रिक मूल्यों को बनाए रखने और चुनावी प्रक्रिया की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिये चुनावी अखंडता, समावेशिता और जवाबदेहिता को बढ़ाना महत्त्वपूर्ण है।

Q40. भारत में संघीय ढाँचे की उभरती गतिशीलता पर चर्चा करते हुए इसके संदर्भ में राज्यों के समक्ष आने वाले प्रमुख मुद्दों एवं चुनौतियों पर प्रकाश डालिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- भारत में संघीय ढाँचे के बारे में एक संक्षिप्त परिचय लिखिये।
- भारतीय कानून और संविधान में संघीय ढाँचे से संबंधित प्रावधान किस प्रकार आए और बढ़े इसका उल्लेख कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत का संघीय ढाँचा एक प्रशासनिक तंत्र है, जो केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच अधिकारों और उत्तरदायित्वों को विभाजित करता है। भारत का संविधान संघ और राज्यों के बीच विधायी, प्रशासनिक और कार्यकारी शक्तियों के वितरण को तीन सूचियों में निर्दिष्ट करता है: संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची।

निकाय:

- भारत का संघीय ढाँचा ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जैसे विभिन्न कारकों के कारण विकसित हुई है। भारत के संघीय ढाँचा को आकार प्रदान करने वाली कुछ प्रमुख घटनाएँ हैं:
  - **भाषाई और सांस्कृतिक आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया गया,** जिससे राज्यों की संख्या और विविधता में वृद्धि हुई और उन्हें पहचान प्राप्त हुई।
  - **क्षेत्रीय दलों का उदय हुआ,** जिसने राष्ट्रीय दलों के प्रभुत्व को चुनौती दी, जिससे संघीय ढाँचे में राज्यों के अधिकारों में वृद्धि हुई।
  - वित्त आयोग की सिफ़ारिशों को अपनाने से राज्यों की वित्तीय स्वायत्तता और संसाधनों में वृद्धि हुई और केंद्र तथा राज्यों के बीच ऊर्ध्वाधर असंतुलन कम हुआ।

- **पंचायती राज और नगरपालिका अधिनियमों का कार्यान्वयन,** जिसने स्थानीय सरकारों को शक्तियाँ तथा कार्य सौंपे और उन्हें दृढ़ किया।
  - 73वाँ और 74वाँ संशोधन अधिनियम, 1992, जिसने स्थानीय स्वशासन के तृतीय स्तर को मान्यता दी एवं कुछ शक्तियाँ और कार्य पंचायतों तथा नगर पालिकाओं को सौंप दिये।
- **101वाँ संशोधन अधिनियम, 2016,** जिसने वस्तु एवं सेवा कर (GST) प्रस्तुत किया और केंद्र तथा राज्यों की कराधान नीतियों के समन्वय के लिये एक GST परिषद् का निर्माण किया।
  - उदाहरण के लिये GST मुआवज़ा उपकर, 1 जुलाई, 2017 को GST के कार्यान्वयन के कारण होने वाले राजस्व की क्षति पूर्ति के लिये राज्यों को पाँच वर्ष की अवधि या GST परिषद् द्वारा अनुशंसित अवधि के लिये लगाया गया है।

- **राज्यों के समक्ष आने वाले प्रमुख मुद्दे और चुनौतियाँ।**
  - **क्षेत्रवाद:** राज्य कभी-कभी केंद्र या अन्य राज्यों के विपरीत जाकर अपनी क्षेत्रीय पहचान और हितों पर ज़ोर देते हैं। इससे स्वायत्तता, राज्य का दर्जा या अलगाव की मांग उठ सकती है।
    - **उदाहरण:** तेलंगाना, गोरखालैंड, बोडोलैंड, आदि।
  - **राजकोषीय संघवाद:** राज्यों की शिकायत है कि केंद्र पर्याप्त संसाधन साझा नहीं करता है या उनके व्यय पर शर्तें लगाता है।
  - **प्रतिनिधित्व:** राज्यों को उनकी जनसंख्या के आधार पर राज्यसभा में प्रतिनिधित्व दिया जाता है। बड़े राज्यों में छोटे राज्यों की तुलना में अधिक सीटें और प्रभाव होता है।
  - **राज्यपाल:** राज्यपाल राज्य का संवैधानिक प्रमुख होता है, जिसे केंद्र की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। राज्यपाल पर प्राय: केंद्रीय अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करने और राज्य सरकार के मामलों में हस्तक्षेप करने का आरोप लगाया जाता है।

आगे की राह

- **अंतर-राज्य परिषद् की भूमिका को दृढ़ करना,** जो एक संवैधानिक निकाय है जो सामान्य हित के विभिन्न मुद्दों पर केंद्र और राज्यों के बीच संवाद और परामर्श की सुविधा प्रदान करती है।
- **राजकोषीय संघवाद प्रणाली में सुधार,** जो केंद्र और राज्यों के बीच वित्तीय संसाधनों का आवंटन निर्धारित करता है।
- **राज्यसभा में राज्यों का प्रतिनिधित्व बढ़ाना,** जो संसद का उच्च सदन है जो राज्यों का प्रतिनिधित्व करता है। राज्यों को राज्यसभा में अधिक सीटें मिलनी चाहिये और राज्यों को प्रभावित करने वाले कानून में राज्यसभा को अधिक अधिकार होना चाहिये।
- **राज्यपाल को अपनी भूमिका का सम्मान** करते हुए केंद्र और राज्य के बीच एक सेतु के रूप में कार्य करना चाहिये, न कि केंद्रीय अभिकर्त्ता के रूप में। राज्यपाल को भी राज्य सरकार के मामलों में हस्तक्षेप करने से बचना चाहिये और राज्य विधानमंडल एवं मुख्यमंत्री के लोकतांत्रिक जनादेश का सम्मान करना चाहिये।

Q41. भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में प्रतिनिधित्व और समावेशिता को बढ़ावा देने के एक उपकरण के रूप में जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 का मूल्यांकन कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 का एक संक्षिप्त परिचय लिखिये।
- RPA अधिनियम, 1951 के प्रावधान लिखिये, जो समावेशिता और सजातीय प्रतिनिधित्व को बढ़ावा दे रहे हैं।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 एक कानून है, जो भारत में चुनावों को नियंत्रित करता है। इसमें निर्वाचन प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं को शामिल किया गया है, जैसे उम्मीदवारों और मतदाताओं की योग्यता और अयोग्यता, चुनाव का संचालन, विवादों का समाधान और भ्रष्ट प्रथाओं और अपराधों की रोकथाम आदि। इस अधिनियम का उद्देश्य स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करना और भारतीय संविधान के लोकतांत्रिक सिद्धांतों को बनाए रखना है।

निकाय:

प्रतिनिधित्व और समावेशिता को बढ़ावा देने के लिये RPA 1951 की कुछ विशेषताएँ:

- **धारा 3:**
  - लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिये सीटों का आरक्षण।
  - विधि निर्माण करने वाली संस्थाओं में हाशिये पर रहने वाले समूहों के लिये पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिये जनसंख्या अनुपात के आधार पर आवंटन।
- **धारा 4:**
  - लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं के लिये सीटों का आरक्षण।
  - कुल सीटों में से कम-से-कम एक तिहाई सीटों के लिये जनादेश, जिसका उद्देश्य राजनीति और शासन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना है।

- **धारा 33:**
  - भारत का कोई भी नागरिक निवास या अधिवास की परवाह किये बिना किसी भी निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लड़ सकता है।
  - उम्मीदवारों और मतदाताओं की गतिशीलता एवं विविधता को बढ़ावा देती है, अधिक समावेशी चुनावी प्रक्रिया को बढ़ावा देती है।
- **धारा 62:**
  - 18 वर्ष या उससे अधिक आयु के प्रत्येक भारतीय नागरिक को मतदान का अधिकार प्रदान करती है, जो किसी भी कानून द्वारा अयोग्य नहीं है।
  - चुनावी प्रक्रिया में सार्वभौमिक रूप से वयस्क मताधिकार और नागरिकों की समानता सुनिश्चित करती है।
- **धारा 100:**
  - यदि यह सिद्ध हो जाता है, कि भ्रष्ट आचरण या अधिनियम के उल्लंघन ने चुनाव परिणाम को भौतिक रूप से प्रभावित किया है, तो उच्च न्यायालयों को इस धारा के तहत चुनाव को शून्य घोषित करने का अधिकार है।
  - चुनावी प्रक्रिया की अखंडता और निष्पक्षता की रक्षा करता है।

निष्कर्ष:

RPA 1951 एक ऐतिहासिक कानून है, जिसका उद्देश्य भारत के लोकतांत्रिक मूल्यों और सिद्धांतों को बनाए रखना है। यह एक निष्पक्ष और समावेशी चुनावी तंत्र प्रदान करता है, जो भारतीयों की विविधता और आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करती है। यह भारत निर्वाचन आयोग को स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने और चुनावी प्रक्रिया की अखंडता बनाए रखने का भी अधिकार प्रदान करता है।

Q42. शक्तियों के पृथक्करण की अवधारणा को बताते हुए भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली में इसके महत्त्व को स्पष्ट कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- शक्ति पृथक्करण की अवधारणा का संक्षिप्त परिचय लिखिये।
- भारतीय लोकतंत्र के लिये इसके महत्त्व का उल्लेख कीजिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

शक्तियों के पृथक्करण की अवधारणा लोकतांत्रिक शासन का मौलिक सिद्धांत है, जिसे विभिन्न प्राधिकरणों के बीच शक्ति संतुलन स्थापित करने हेतु डिज़ाइन किया गया है। विधायी, कार्यकारी और न्यायिक प्राधिकरणों के रूप में सरकार के कार्यों को तीन शाखाओं में विभाजित किया गया है: प्रत्येक की अलग-अलग भूमिकाएँ एवं ज़िम्मेदारियाँ हैं।

मुख्य भाग:

- **भारतीय लोकतंत्र के लिये महत्त्व:**
  - **सत्ता के दुरुपयोग को रोकना:** विभिन्न शाखाओं के बीच शक्तियों के पृथक्करण से सत्ता के दुरुपयोग से सुरक्षा प्राप्त होती है। इससे सुनिश्चित होता है कि कोई भी शाखा अत्यधिक प्रभावशाली न हो जाए या अपनी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सके।
  - **जाँच और संतुलन:** प्रत्येक शाखा के पास अन्य शाखाओं के कार्यों की जाँच करने एवं संतुलित करने का अधिकार होता है। उदाहरण के लिये विधायिका चर्चा, सवालों और मतदान के माध्यम से कार्यपालिका पर नियंत्रण कर सकती है तथा उसे जवाबदेह ठहरा सकती है। न्यायपालिका कानूनों और कार्यकारी कार्यों की संवैधानिकता की समीक्षा कर सकती है।
  - **जवाबदेहिता:** शक्तियों के पृथक्करण से सरकार की जवाबदेहिता में वृद्धि होती है। प्रत्येक शाखा अपने विशिष्ट कार्यों के लिये जवाबदेह होती है तथा न्यायपालिका की स्वतंत्रता यह सुनिश्चित करती है कि कार्यकारी या विधायी शाखाओं के हस्तक्षेप के बिना कानूनी मानकों को बरकरार रखा जा सके।
  - **लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था:** भारत जैसे लोकतंत्र में (जहाँ सत्ता लोगों से प्राप्त होती है) शक्तियों का पृथक्करण लोकतांत्रिक लोकाचार को दर्शाता है। इससे सत्ता के केंद्रीकरण पर नियंत्रण के साथ यह सुनिश्चित होता है कि निर्णय प्रतिनिधित्व एवं जवाबदेहिता को ध्यान में रखकर लिये जाएँ।
  - **संवैधानिक ढाँचा:** भारतीय संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में विधायी, कार्यकारी एवं न्यायिक शाखाओं के बीच शक्तियों और कार्यों को स्पष्ट रूप से विभाजित किया गया है। यह संवैधानिक ढाँचा भारतीय लोकतंत्र की एक अनिवार्य विशेषता के रूप में शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत को बनाए रखता है।

निष्कर्ष:

शक्तियों का पृथक्करण भारतीय लोकतंत्र की आधारशिला है, जो नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए जवाबदेह एवं कुशल प्रशासन हेतु रूपरेखा प्रदान करता है। यह लोकतांत्रिक मूल्यों, विधि के शासन एवं अनियंत्रित सरकारी प्राधिकरण पर नियंत्रण के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

Q43. संसद की प्रभावी कार्यप्रणाली में योगदान देने वाले तंत्रों एवं कार्यों का परीक्षण कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- एक विधायी निकाय के रूप में संसद का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
- उन तंत्रों एवं कार्यों का उल्लेख कीजिये जो संसद के प्रभावी कामकाज में योगदान करते हैं।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत की संसद भारतीय गणराज्य की सर्वोच्च विधायी निकाय है और इसमें दो सदन होते हैं: लोकसभा (लोगों का सदन) और राज्यसभा (राज्यों की परिषद)। संसद के पास विभिन्न कार्य तथा शक्तियाँ होती हैं जैसे विधायी, कार्यकारी, वित्तीय, चुनावी एवं संवैधानिक।

मुख्य भाग:

- **विधायी कार्य:**
  - संसद संघ सूची और संविधान की समवर्ती सूची में सूचीबद्ध विषयों पर कानून बनाती तथा पारित करती है। यह कुछ परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बना सकती है जैसे राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान या दो या दो से अधिक राज्यों की सहमति से।
- **कार्यकारी प्रकार्य:**
  - संसद विभिन्न उपकरणों जैसे- अविश्वास प्रस्ताव, बजट अनुमोदन, प्रश्नकाल, बहस और चर्चा के माध्यम से कार्यपालिका को लोगों के प्रति जवाबदेह ठहरा सकती है। कार्यपालिका संसद के प्रति उत्तरदायी होती है और उसे संसद सदस्यों द्वारा विघटित किया जा सकता है।
- **संवैधानिक कार्य:**
  - संसद के पास संविधान एवं अन्य महत्त्वपूर्ण कानूनों जैसे- जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में संशोधन करने की शक्ति है।
  - संसद नए राज्यों का सृजन कर सकती है और राज्यों की सीमाओं एवं नाम को बदल सकती है।
- **प्रतिनिधिक कार्य:**
  - संसद भारत के लोगों और राज्यों के हितों एवं आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करती है। संसद के सदस्य लोगों द्वारा या राज्य विधानमंडलों द्वारा चुने जाते हैं।
  - संसद भारतीय समाज की विविधता और बहुलवाद को भी प्रतिबिंबित करती है।

निष्कर्ष:

संसद के ये कार्य उसे लोकतंत्र के संरक्षक एवं नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता के संरक्षक के रूप में अपनी भूमिका निभाने में सक्षम बनाते हैं। संसद विभिन्न राष्ट्रीय मुद्दों पर विचार-विमर्श, बहस तथा आम सहमति बनाने के मंच के रूप में भी कार्य करती है। इस प्रकार संसद भारतीय राजनीति के प्रभावी कामकाज हेतु एक महत्त्वपूर्ण संस्था है।

Q44. राज्यपाल का पद अक्सर राजनीतिक विवादों में घिरा रहता है। भारतीय संघीय व्यवस्था में इसकी तटस्थता एवं प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के उपाय बताइये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- राज्यपाल के बारे में संक्षिप्त परिचय लिखिये।
- ऐसी घटनाओं के हालिया उदाहरणों का उल्लेख कीजिये, जहाँ राज्यपाल राजनीतिक विवादों में पड़ गए।
- राज्यपाल के पद की तटस्थता एवं प्रभावशीलता बनाए रखने के लिये शमनकारी उपायों का उल्लेख कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

राज्यपाल भारत में किसी राज्य का संवैधानिक प्रमुख होता है, जिसे भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। एक राज्यपाल राज्य मंत्रिपरिषद की सलाह पर कार्य करता है, कुछ मामलों को छोड़कर जहाँ वह विवेक का प्रयोग कर सकता है। औपनिवेशिक काल से ही राज्यपाल की भूमिका विवादास्पद रही है, क्योंकि इसे प्राय: केंद्र सरकार के लिये राज्य सरकारों के मामलों में हस्तक्षेप करने के एक साधन के रूप में देखा जाता है।

मुख्य भाग:

राज्यपाल की भूमिका से जुड़े कुछ विवाद इस प्रकार हैं:

- **तमिलनाडु:** सितंबर, 2022 में राज्य विधानमंडल द्वारा पारित NEET छूट विधेयक को मंज़ूरी न देने के कारण तमिलनाडु के राज्यपाल का राज्य सरकार के साथ विवाद हो गया, जिसमें तमिलनाडु के छात्रों को राष्ट्रीय मेडिकल प्रवेश परीक्षा से छूट देने की मांग की गई थी।
  - राज्य सरकार ने उन पर केंद्र सरकार के अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करने और संवैधानिक मानदंडों का उल्लंघन करने का आरोप लगाया।
- **केरल:** इसी तरह, केरल के राज्यपाल को राज्य विधानमंडल द्वारा पारित कुछ विधेयकों, जैसे कि केरल प्रोफेशनल कॉलेज (मेडिकल कॉलेजों में प्रवेश का नियमितीकरण) विधेयक, 2023, के अनुमोदन में देरी के लिये राज्य सरकार की आलोचना का सामना करना पड़ा।

- राज्य सरकार ने उनके कार्यों को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी और आरोप लगाया कि वह राज्य की विधायी और कार्यकारी शक्तियों का अतिक्रमण कर रहे हैं।

- **पश्चिम बंगाल:** पश्चिम बंगाल के राज्यपाल भी राज्य सरकार से भिड़ गए, जहाँ कानून-व्यवस्था, शिक्षा, स्वास्थ्य और भ्रष्टाचार जैसे विभिन्न मुद्दों पर उनका प्राय: राज्य सरकार के साथ टकराव होता रहता था।
  - उन्होंने राज्य सरकार पर सूचना और परामर्श के उनके अनुरोधों की अनदेखी करने तथा संवैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करने का भी आरोप लगाया। दूसरी ओर, राज्य सरकार ने उन पर पक्षपातपूर्ण होने, हस्तक्षेप करने और केंद्र सरकार के मुखपत्र के रूप में कार्य करने का आरोप भी लगाया।

राज्यपाल के पद की तटस्थता और प्रभावशीलता बनाए रखने के लिये कुछ संभावित उपाय इस प्रकार हैं:

- राज्यपाल की नियुक्ति और निष्कासन की प्रक्रिया में सुधार: राज्यपाल की निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिये, राज्यपाल की नियुक्ति और निष्कासन की प्रक्रिया पारदर्शी, योग्यता-आधारित और परामर्शात्मक होनी चाहिये।
- वेंकटचेलैया आयोग (2002) के अनुसार, राज्यपालों की नियुक्ति एक समिति को सौंपी जानी चाहिये, जिसमें प्रधानमंत्री, गृह मंत्री, लोकसभा अध्यक्ष और संबंधित राज्य के मुख्यमंत्री शामिल हों।
- **वर्तमान नियुक्ति और निष्कासन प्रक्रिया में सुधार:** राज्यपाल की नियुक्ति और निष्कासन प्रक्रिया को बदलने के लिये संविधान में संशोधन किया जा सकता है।
  - इसमें अधिक पारदर्शी और परामर्शी तंत्र शामिल हो सकता है, जैसे कि कॉलेजियम या संसदीय समिति, जो योग्यता और उपयुक्तता के आधार पर उम्मीदवारों का चयन कर सकती है।
  - राज्य विधानमंडल के प्रस्ताव या न्यायिक जाँच की आवश्यकता के द्वारा राज्यपालों का निष्कासन और भी कठिन बनाया जा सकता है। बीपी सिंघल बनाम भारत संघ मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि निष्कासन मनमाने, मनमौजी या अनुचित आधार पर नहीं हो सकता।
- **न्यायिक हस्तक्षेप:** सर्वोच्च न्यायालय राज्यपालों के आचरण की निगरानी करना जारी रख सकता है और यह सुनिश्चित करने के लिये निर्देश या टिप्पणियाँ जारी कर सकता है, कि वे संविधान और कानून के अनुसार कार्य करें। इससे राज्यपालों की मनमानी या पक्षपातपूर्ण कार्रवाइयों को रोकने और भारतीय राजनीति के संघीय सिद्धांत को बनाए रखने में मदद मिल सकती है।
- **उन्हें एक निर्वाचित प्रतिनिधि बनाना:** राज्यपाल को केंद्र सरकार के नामित व्यक्ति के बजाय राज्य का एक निर्वाचित प्रतिनिधि बनाया जा सकता है।
  - इससे कार्यालय की जवाबदेही और वैधता बढ़ सकती है और केंद्र द्वारा हस्तक्षेप या प्रभाव की गुंजाइश कम हो सकती है।
  - राज्यपाल का चुनाव राज्य विधानमंडल या राज्य के लोगों द्वारा किया जा सकता है, जैसा कि राष्ट्रपति के मामले में होता है।

निष्कर्ष:

भारतीय राज्यों में राज्यपालों की भूमिका केंद्र सरकार के हस्तक्षेप की धारणाओं से उत्पन्न विवादों से चिह्नित रही है। पारदर्शी नियुक्ति प्रक्रियाओं और बढ़ी हुई राज्य स्वायत्तता जैसे शमन उपाय, इस संवैधानिक पद की तटस्थता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करने, राज्यों तथा केंद्र के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंधों को बढ़ावा देने के लिये जरूरी हैं।

Q45. भारत में सर्वोच्च न्यायालय के लिये क्षेत्रीय पीठ स्थापित करने की आवश्यकता का मूल्यांकन कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- उत्तर की शुरुआत परिचय के साथ कीजिये, जो प्रश्न के लिये एक संदर्भ निर्धारित करता है।
- सर्वोच्च न्यायालय की क्षेत्रीय पीठों के पक्ष में तर्क बताइये।
- सर्वोच्च न्यायालय की क्षेत्रीय पीठों के विरुद्ध तर्कों का वर्णन कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

हाल ही में कानून मंत्रालय ने संपूर्ण भारत में सर्वोच्च न्यायालय की क्षेत्रीय पीठ स्थापित करने के प्रस्ताव का समर्थन किया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 130 में कहा गया है कि सर्वोच्च न्यायालय दिल्ली में या ऐसे किसी अन्य स्थान पर होगा, जहाँ भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI) को समय-समय पर राष्ट्रपति की स्वीकृति के साथ नियुक्त किया जा सकता हो।

मुख्य भाग:

सर्वोच्च न्यायालय की क्षेत्रीय पीठों के पक्ष में तर्क:

- **पहुँच में वृद्धि:** क्षेत्रीय पीठ दूरदराज के क्षेत्रों या राजधानी से दूर रहने वाले लोगों के लिये न्याय को और अधिक सुलभ बनाएँगी। इससे व्यक्तियों को कानूनी मामलों के लिये दिल्ली जाने की आवश्यकता कम हो जाएगी, विशेष रूप से वित्तीय या तार्किक चुनौतियों का सामना करने वालों के लिये।
- **संवैधानिक मामलों पर बढ़ा हुआ फोकस:** नई दिल्ली में प्राथमिक पीठ विशेष रूप से संवैधानिक मुद्दों को संबोधित करने के साथ, क्षेत्रीय पीठ अपीलीय मामलों को संभालने में विशेषज्ञ हो सकती हैं।

- **बेहतर न्यायिक प्रभावशीलता:** क्षेत्रीय पीठें स्थानीय मुद्दों और चिंताओं को संबोधित करने के लिये बेहतर स्थिति में होंगी, जिन पर राष्ट्रीय स्तर पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा सकता है। क्षेत्रीय संदर्भों से परिचित न्यायाधीश अधिक प्रासंगिक और प्रभावी निर्णय दे सकते हैं।
- **अधिक अवसर:** क्षेत्रीय पीठों की स्थापना से देश के विभिन्न हिस्सों में कानूनी बुनियादी ढाँचे और विशेषज्ञता के विकास को बढ़ावा मिल सकता है, स्थानीय कानूनी पेशेवरों को सशक्त बनाया जा सकता है तथा ज़मीनी स्तर पर कानूनी जागरुकता बढ़ाई जा सकती है।
- **लंबित मामलों में कमी:** वर्ष 2023 में सुप्रीम कोर्ट में वर्ष 2022 की तुलना में मामलों के निपटान में 31% की वृद्धि देखी गई। वर्तमान में 80,000 से अधिक मामले निर्णय के लिये लंबित हैं, जिनमें से 60,000 दीवानी हैं।
  - सर्वोच्च न्यायालय के कार्यभार को विकेंद्रीकृत करके, क्षेत्रीय पीठें दिल्ली में मुख्य पीठ पर बोझ को कम करने में सहायक हो सकती हैं। इससे मामलों का तेज़ी से समाधान हो सकेगा और लंबित मामलों में कमी आएगी।

सर्वोच्च न्यायालय की क्षेत्रीय पीठों के विरुद्ध तर्क:

- **न्यायशास्त्र का विखंडन:** क्षेत्रीय पीठें कानूनों और कानूनी सिद्धांतों की भिन्न-भिन्न व्याख्याओं को जन्म दे सकती हैं, जिसके परिणामस्वरूप देश के विभिन्न क्षेत्रों में न्यायिक निर्णयों में विसंगतियाँ हो सकती हैं।
- **मुकदमेबाज़ी में बढ़ोत्तरी:** क्षेत्रीय पीठें संभावित रूप से निरर्थक या फोरम-शॉपिंग मुकदमेबाज़ी में वृद्धि कर सकती हैं क्योंकि मुकदमेबाज़ अपने मामलों के प्रति अधिक सहानुभूति रखने वाली पीठों से अनुकूल परिणाम चाहते हैं।
- **संभावित पूर्वाग्रह और प्रभाव:** क्षेत्रीय पीठों में न्यायिक निर्णयों को प्रभावित करने के लिये क्षेत्रीय पूर्वाग्रहों या राजनीतिक प्रभाव की संभावना के बारे में चिंताएँ हो सकती हैं, मूलत: उन क्षेत्रों में जहाँ मज़बूत स्थानीय हित या राजनीतिक दबाव हैं।
- **संसाधनों और बुनियादी ढाँचे पर बढ़ा हुआ व्यय:** क्षेत्रीय पीठों की स्थापना और रखरखाव के लिये न्यायालयी सुविधाओं एवं सहायक कर्मचारियों सहित बुनियादी ढाँचे में महत्त्वपूर्ण वित्तीय संसाधनों तथा निवेश की आवश्यकता होगी। इससे पहले से ही सीमित न्यायिक संसाधनों तथा बजट पर दबाव पड़ सकता है।

अग्रिम मार्ग के रूप में कई उपायों पर विचार किया जा सकता है:

- **अपीलीय क्षेत्राधिकार पीठों से संवैधानिक क्षेत्राधिकार पीठों का पृथक्करण:** भारत के दसवें विधि आयोग ने प्रस्तावित किया कि सर्वोच्च न्यायालय को दो भागों में विभाजित किया जाए, संवैधानिक भाग और कानूनी भाग। हालाँकि प्रस्ताव में कहा गया है कि केवल संवैधानिक कानून से संबंधित मुद्दों को प्रस्तावित संवैधानिक भाग में लाया जाएगा।
- **विशेष अनुमति याचिकाओं (SLP) के लिये एक राष्ट्रीय अपील न्यायालय की स्थापना करना:** बिहार लीगल सपोर्ट सोसाइटी बनाम भारत के मुख्य न्यायाधीश, 1986 में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि एक राष्ट्रीय अपीलीय न्यायालय की स्थापना करना "वांछनीय" था जो विशेष अनुमति याचिकाओं पर विचार करने में सक्षम होगा।
- **कार्य दिवसों की संख्या बढ़ाना:** मलिमथ समिति ने सुझाव दिया कि सुप्रीम कोर्ट को 206 दिनों तक काम करना चाहिये, साथ ही यह भी सिफारिश की कि लंबित मामलों को ध्यान में रखते हुए अवकाशों की अवधि को 21 दिनों तक कम किया जाना चाहिये।
- **मौजूदा बुनियादी ढाँचे को मज़बूत करना:** न्याय तक पहुँच में सुधार और मामलों के बैकलॉग को कम करने के लिये उच्च न्यायालयों तथा ज़िला न्यायालयों सहित मौजूदा न्यायिक बुनियादी ढाँचे को मज़बूत करने और आधुनिकीकरण को प्राथमिकता देना।
  - पूर्व भारतीय मुख्य न्यायाधीश एनवी रमन्ना ने भारतीय राष्ट्रीय न्यायिक अवसंरचना प्राधिकरण (NJIAI) स्थापित करने का प्रस्ताव रखा, जो न्यायिक बुनियादी ढाँचे को बेहतर बनाने में मदद करेगा, जिस पर वर्तमान में तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है।
- **व्यवहार्यता अध्ययन संचालित करना:** क्षेत्रीय पीठों की स्थापना के संभावित लाभों, चुनौतियों और निहितार्थों का आकलन करने के लिये संपूर्ण व्यवहार्यता अध्ययन आयोजित करना। इन अध्ययनों में कानूनी, तार्किक, वित्तीय और संवैधानिक पहलुओं जैसे कारकों पर विचार किया जाना चाहिये।
  - न्याय तक पहुँच, न्यायिक दक्षता और निर्णयों की स्थिरता पर उनकी प्रभावशीलता एवं प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिये चुनिंदा स्थानों पर पायलट परियोजनाओं या प्रायोगिक क्षेत्रीय पीठों को लागू करने पर विचार करना।
- **व्यापक न्यायिक सुधार:** न्यायिक बैकलॉग, न्याय वितरण में देरी और न्यायिक रिक्तियों जैसे प्रणालीगत मुद्दों को संबोधित करने के उद्देश्य से व्यापक न्यायिक सुधार करना, जो कानूनी प्रणाली के समग्र कामकाज में सुधार के लिये महत्त्वपूर्ण हैं।
- **प्रौद्योगिकी का उपयोग:** न्याय तक पहुँच बढ़ाने और विशेष रूप से दूरदराज या वंचित क्षेत्रों में मामलों के दूरस्थ न्यायनिर्णयन की सुविधा के लिये वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग एवं वर्चुअल कोर्टरूम जैसी प्रौद्योगिकी के उपयोग का पता लगाना।

निष्कर्ष:

भारत की न्यायपालिका के भविष्य की कल्पना करते समय, हमें एक साहसिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिये जो परंपरा को नवाचार के साथ, क्षेत्रीय विविधता को राष्ट्रीय एकता के साथ और पहुँच को उत्कृष्टता के

साथ संतुलित करता है। सर्वोच्च न्यायालय के लिये क्षेत्रीय पीठों की स्थापना इस दृष्टिकोण को साकार करने में महत्त्वपूर्ण प्रगति का संकेत प्रदान कर सकती है।

Q46. आरक्षण नीति की प्रभावशीलता समाज के सबसे वंचित वर्गों को उच्च स्तर तक ले जाने की इसकी क्षमता पर निर्भर करती है। सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिये महाराष्ट्र राज्य आरक्षण विधेयक, 2024 के आलोक में इस कथन का मूल्यांकन कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- उत्तर की शुरुआत परिचय के साथ कीजिये, जो प्रश्न के लिये संदर्भ निर्धारित करता है।
- सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिये महाराष्ट्र राज्य आरक्षण विधेयक, 2024 के आलोक में आरक्षण नीति की प्रभावशीलता को बताइये।
- ऐसी आरक्षण नीति विकसित करने के लिये रणनीतियों को बताइये, जो वास्तव में समाज के हाशिये पर रहने वाले वर्गों का वर्णन कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

हाल ही में महाराष्ट्र राज्य विधानसभा ने सर्वसम्मति से एक विधेयक पारित किया, जो मराठा समुदाय को शिक्षा और सरकारी नौकरियों में 10% आरक्षण आवंटित करता है। यह विधेयक भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342A (3) के तहत मराठा समुदाय को सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के रूप में निर्दिष्ट करता है।

मुख्य भाग:

मराठा आरक्षण के पक्ष में कुछ प्रमुख तर्क:

- **महाराष्ट्र राज्य पिछड़ा वर्ग आयोग द्वारा अनुशंसित:** सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिये महाराष्ट्र राज्य आरक्षण विधेयक 2024, महाराष्ट्र राज्य पिछड़ा वर्ग आयोग (शुक्रे आयोग) की रिपोर्ट के आधार पर तैयार किया गया था।
  - इस रिपोर्ट ने आरक्षण की आवश्यकता को उचित ठहराते हुए मराठों की पहचान सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े के रूप में की।
  - आयोग की रिपोर्ट में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित 50% सीमा से ऊपर मराठा समुदाय को आरक्षण को उचित ठहराते हुए "असाधारण परिस्थितियों और असाधारण परिस्थितियों" पर प्रकाश डाला गया।
- **ऐतिहासिक रूप से हाशिये पर रहने वाले:** महाराष्ट्र में ऐतिहासिक रूप से प्रभावशाली समुदाय होने के बावजूद, मराठों का तर्क है कि उन्हें शिक्षा, रोज़गार और अन्य क्षेत्रों में हाशिये का सामना करना पड़ा है। उनका मानना है कि आरक्षण की स्थिति ऐतिहासिक रूप से होने वाले अन्याय को दूर करने तथा समुदाय के उत्थान में सहायक होगी।
  - गायकवाड़ आयोग ने पाया कि 76.86% मराठा परिवार कृषि और कृषि मज़दूरी में लगे हुए थे, लगभग 50% लोग मिट्टी से बने घरों में रहते थे, केवल 35.39% के पास निजी नल जल कनेक्शन थे, 13.42% मराठा असाक्षर थे तथा केवल 35.31% के पास प्राथमिक शिक्षा थी। जबकि 43.79% ने HSC एवं SSC उत्तीर्ण की है।
- **आर्थिक असमानताएँ:** कई मराठा, विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक चुनौतियों का सामना करते हैं और सामाजिक-आर्थिक उन्नति के अवसरों तक पहुँच की कमी है। आरक्षण को उन्हें शिक्षा और रोज़गार के अवसरों तक बेहतर पहुँच प्रदान करने के साधन के रूप में देखा जाता है।
  - शुक्रे आयोग ने अत्यधिक गरीबी, कृषि आय में गिरावट और भूमि जोत में विभाजन को मराठों की खराब स्थिति का कारण बताया है। इसमें यह भी कहा गया है कि राज्य में आत्महत्या से मरने वाले 94% किसान मराठा समुदाय के थे।
- **लोक सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व:** मराठा आरक्षण की मांग शिक्षा और रोज़गार तक पहुँच को लेकर चिंताओं के कारण बढ़ी है, विशेषत: प्रतिस्पर्द्धी परीक्षाओं में जहाँ सीमित सीटें उपलब्ध हैं।
  - शुक्रे आयोग लोक सेवाओं के सभी क्षेत्रों में समुदाय के अपर्याप्त प्रतिनिधित्व को पाता है और कहता है कि मराठा अपने पिछड़ेपन के कारण "मुख्यधारा से पूरी तरह से बाहर" रहे हैं।
- **सामाजिक गतिशीलता:** मराठों के लिये आरक्षण को समुदाय के भीतर ऊर्ध्वगामी सामाजिक गतिशीलता को सुविधाजनक बनाने के साधन के रूप में देखा जाता है, जो हाशिये की पृष्ठभूमि के व्यक्तियों को समग्र सामाजिक उन्नति तक पहुँचने में सक्षम बनाता है।
  - शुक्रे आयोग का कहना है कि राज्य में मराठों की आबादी 28% है, जबकि उनमें से 84% उन्नत नहीं हैं, उन्होंने कहा कि इतने बड़े पिछड़े समुदाय को OBC ब्रैकेट में नहीं जोड़ा जा सकता है।

मराठा आरक्षण के विरुद्ध कुछ प्रमुख तर्क:

- **सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन का अभाव:** मराठों के पास ऐतिहासिक रूप से महत्त्वपूर्ण भूमि स्वामित्व और राजनीतिक शक्ति थी। आलोचकों का तर्क है कि वे सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े होने के कारण आरक्षण के मानदंडों को पूरा नहीं कर सकते हैं।

- मराठों के पास राज्य में 75% से अधिक भूमि के साथ-साथ 105 चीनी कारखानों में से 86 का स्वामित्व है, इसके अलावा वे लगभग 55% शैक्षणिक संस्थानों और 70% से अधिक सहकारी निकायों को नियंत्रित करते हैं।

- **राजनीतिक परिदृश्य में प्रभुत्व:** मराठा समुदाय से आने वाले 20 मुख्यमंत्रियों में से 11 के साथ राजनीतिक परिदृश्य पर प्रभुत्व रहा है और वर्ष 1962 से महाराष्ट्र की विधानसभाओं के सभी सदस्यों में से 60% से अधिक मराठा रहे हैं।
- **विस्तृत जाँच की आवश्यकता:** आयोग ने 9 दिनों की अवधि (23 जनवरी से 31 जनवरी, 2024 तक) के अंदर अपना सर्वेक्षण पूरा किया। हालाँकि रिपोर्ट को सार्वजनिक नहीं किया गया है, इसलिये प्रतिदर्श डिज़ाइन, प्रयुक्त प्रश्नावली या डेटा विश्लेषण के लिये नियोजित पद्धति के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है।
  - विधेयक मराठों को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा घोषित करता है, लेकिन शुक्रे आयोग की रिपोर्ट से उपलब्ध विवरण मुख्य रूप से समुदाय के आर्थिक पिछड़ेपन पर ज़ोर देते हैं। उनके सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के बारे में लगभग कुछ भी ठोस उपलब्ध नहीं है।
- **वैधानिक चिंताएँ:** महाराष्ट्र में वर्तमान में 52% आरक्षण है, जिसमें SC, ST, OBC, विमुक्त जाति, खानाबदोश जनजाति और अन्य जैसी विभिन्न श्रेणियाँ शामिल हैं। मराठों के लिये 10% आरक्षण के साथ, राज्य में कुल आरक्षण अब 62% तक पहुँच जाएगा।
  - सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित 50% की सीमा से आगे आरक्षण बढ़ाने से वैधानिक चिंताएँ भी बढ़ सकती हैं।
- **राजनीतिक प्रेरणाएँ:** कुछ आलोचक मराठा आरक्षण के पीछे के समय और राजनीतिक प्रेरणाओं पर सवाल उठाते हैं।
  - उनका तर्क है कि निर्णय सामाजिक न्याय के लिये वास्तविक चिंताओं के बजाय चुनावी विचारों से प्रेरित हो सकता है।

प्रभावी आरक्षण नीति तैयार करने के लिये कुछ रणनीतियाँ:

- **एक व्यापक सामाजिक-आर्थिक जनगणना की आवश्यकता:** मराठा जैसे राजनीतिक रूप से प्रभावशाली समूहों की मांगों को संबोधित करना, जिनमें आय और शैक्षिक परिणामों के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण अंतर-सामुदायिक भिन्नताओं के कारण स्तरीकरण है, एक व्यापक सामाजिक-आर्थिक जनगणना के मामले का सुझाव देता है।
  - इस तरह की जनगणना राज्यों में पिछड़ेपन और भेदभाव की वास्तविक प्रकृति को स्थापित करेगी तथा सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के प्रति सचेत रहते हुए डेटा के आधार पर सकारात्मक कार्रवाई प्रदान करने के एक नवीन साधन को भी स्पष्ट कर सकती है।
- **साक्ष्य-आधारित कानून:** सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित 50% कोटा सीमा से परे आरक्षण को उचित ठहराने के लिये मज़बूत अनुभवजन्य डेटा प्रदान करके सुनिश्चित करें, कि मराठा आरक्षण विधेयक कानूनी रूप से मज़बूत है और न्यायिक जाँच का सामना करता है।
- **व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता:** अधिक रोज़गार के अवसर बढ़ाना प्राय: आरक्षण नीतियों के विस्तार से अधिक आवश्यक माना जाता है।
  - सरकार को एकीकृत नीतियाँ अपनानी चाहिये, जो मराठों के लिये समग्र विकास सुनिश्चित करने के लिये लक्षित कल्याण कार्यक्रमों, कौशल विकास पहल और बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं के साथ आरक्षण को जोड़ती हैं।
- **भेदभाव के बिना निष्पक्ष प्रतिस्पर्द्धा सुनिश्चित करना:** यह सुनिश्चित करना कि सभी व्यक्तियों के साथ निष्पक्ष और गैर-भेदभाव के व्यवहार किया जाए, समानता को बढ़ावा देने का एक बुनियादी पहलू है। इसका अर्थ यह है कि लोगों को उनकी पृष्ठभूमि, जैसे कि उनके माता-पिता की स्थिति, के आधार पर नुकसान या विशेषाधिकारों का सामना नहीं करना चाहिये।
  - समान स्तर पर प्रतिस्पर्द्धा को प्रोत्साहित करना, जहाँ व्यक्तियों को अपने कौशल, क्षमताओं और प्रयासों के आधार पर सफल होने के समान अवसर मिलते हैं, महत्त्वपूर्ण है। यह व्यक्तियों को अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास करने के लिये प्रेरित करके उत्कृष्टता को बढ़ावा देता है।
- **आरक्षण और योग्यता को संतुलित करना:** समुदायों को आरक्षण देते समय प्रशासन की दक्षता को भी देखना होगा। सीमा से अधिक आरक्षण से योग्यता की अनदेखी होगी जिससे संपूर्ण प्रशासन में चिंताएँ बढेंगी।
  - आरक्षण का मुख्य उद्देश्य कम सुविधा प्राप्त समुदायों के साथ हुई ऐतिहासिक गलतियों के मुद्दे को संबोधित करना है, लेकिन एक निश्चित बिंदु से परे योग्यता को भी नज़रअंदाज़ नहीं किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष:

आरक्षण नीति भारत में एक मज़बूत और समावेशी समाज को बढ़ावा देने के लिये एक महत्त्वपूर्ण उपकरण के रूप में कार्य करती है, लेकिन इसकी प्रभावशीलता समाज के हाशिये वाले वर्गों के उत्थान की क्षमता पर निर्भर करती है। हालाँकि जब व्यक्तिगत लाभ के लिये आरक्षण लाभों का दुरुपयोग या हेर-फेर किया जाता है, तो यह नीति की अखंडता को कमज़ोर कर सकता है और असमानताओं को कायम रख सकता है।

Q47. भारत में पंचायती राज संस्थाओं (PRIs) की वर्तमान वित्तीय स्थिति क्या है? अपने स्तर पर राजस्व के सृजन में PRIs के समक्ष आने वाली बाधाओं का विश्लेषण करते हुए इनकी वित्तीय स्वायत्तता को मज़बूत करने के उपाय बताइये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- देश में स्थानीय निकायों को सशक्त बनाने वाले भारतीय संविधान के प्रावधानों का उल्लेख करते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- भारत में पंचायती राज संस्थानों (PRIs) की वर्तमान वित्तीय स्थिति पर चर्चा कीजिये।
- आंतरिक राजस्व उत्पन्न करने में PRIs के समक्ष आने वाली बाधाओं का विश्लेषण कीजिये।
- इनकी वित्तीय स्वायत्तता को मज़बूत करने के उपाय बताइये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा भारत में स्थानीय निकायों को राजकोषीय हस्तांतरण तथा राजस्व सृजन सहित स्वशासन हेतु सशक्त बनाया गया है। केंद्रीय अधिनियम की रूपरेखा पर विभिन्न राज्यों के पंचायती राज अधिनियमों द्वारा कराधान एवं संग्रह के प्रावधान किये गए। इन अधिनियमों के प्रावधानों के आधार पर पंचायतों ने अपने स्वयं के संसाधन सृजित करने के अधिकतम प्रयास किये।

मुख्य भाग:

पंचायती राज संस्थाओं के वित्त की वर्तमान स्थिति:

- **राजस्व संबंधी आँकड़े:**
  - RBI के अनुसार, वित्त वर्ष 2022-23 में पंचायतों ने कुल 35,354 करोड़ रुपए का राजस्व दर्ज किया ।
  - हालाँकि, उनके स्वयं के कर राजस्व से केवल 737 करोड़ रुपए उत्पन्न हुए, जो पेशे और व्यापार पर कर, भूमि राजस्व, स्टांप एवं पंजीकरण शुल्क, संपत्ति कर तथा सेवा कर के माध्यम से अर्जित हुए।
  - गैर-कर राजस्व 1,494 करोड़ रुपए रहा, जो मुख्य रूप से ब्याज भुगतान और पंचायती राज कार्यक्रमों से प्राप्त हुआ।
  - उल्लेखनीय है कि पंचायतों को केंद्र सरकार से 24,699 करोड़ रुपए और राज्य सरकारों से 8,148 करोड़ रुपए का अनुदान प्राप्त हुआ।
- **राजस्व प्रति पंचायत:**
  - औसतन प्रत्येक पंचायत ने अपने स्वयं के कर राजस्व से केवल 21,000 रुपए और गैर-कर राजस्व से 73,000 रुपए अर्जित किये।
  - इसके विपरीत, केंद्र सरकार से प्राप्त अनुदान प्रति पंचायत लगभग 17 लाख रुपए रहा, जबकि राज्य सरकार का अनुदान प्रति पंचायत 3.25 लाख रुपए से अधिक रहा।
- **राज्य राजस्व हिस्सेदारी और अंतर-राज्य असमानताएँ:**
  - संबद्ध राज्य के राजस्व में पंचायतों की हिस्सेदारी न्यूनतम बनी हुई है।
    - उदाहरण के लिये, आंध्र प्रदेश में पंचायतों की राजस्व प्राप्तियाँ राज्य के स्वयं के राजस्व का केवल 0.1% है, जबकि उत्तर प्रदेश में यह 2.5% है जो भारत के सभी राज्यों में सर्वाधिक है।
  - प्रति पंचायत अर्जित औसत राजस्व के संबंध में राज्यों में व्यापक भिन्नताएँ मौजूद हैं।
    - केरल एवं पश्चिम बंगाल क्रमश: 60 लाख रुपए और 57 लाख रुपए प्रति पंचायत के औसत राजस्व के साथ सबसे आगे हैं।
    - असम, बिहार, कर्नाटक, ओडिशा, सिक्किम और तमिलनाडु में प्रति पंचायत राजस्व 30 लाख रुपए से अधिक था।
    - आंध्र प्रदेश, हरियाणा, मिज़ोरम, पंजाब और उत्तराखंड जैसे राज्यों का औसत राजस्व प्रति पंचायत 6 लाख रुपए से भी कम है।

आंतरिक राजस्व उत्पन्न करने में PRIs के समक्ष चुनौतियाँ:

- **अनुदान पर अत्यधिक निर्भरता:**
  - पंचायतें करों के माध्यम से राजस्व का केवल 1% अर्जित करती हैं, शेष भाग राज्य और केंद्र से अनुदान के रूप में जुटाया जाता है। यह विशेष रूप से बताता है कि इन्हें 80% राजस्व केंद्र से और 15% राज्यों से प्राप्त होता है।
- **राज्यों के बीच भिन्नताएँ:**
  - कई राज्यों में ग्राम पंचायतों के पास कर संग्रहण का अधिकार नहीं है, जबकि कई अन्य राज्यों में मध्यवर्ती और ज़िला पंचायतों को कर संग्रहण की ज़िम्मेदारी नहीं सौंपी गई है।
  - समान हिस्सेदारी सुनिश्चित करने के लिये संपूर्ण त्रि-स्तरीय पंचायतों हेतु राजस्व के अपने स्रोत (Own Source of Revenue- OSR) का सीमांकन करने की आवश्यकता है।
- **स्वयं की आय सृजित करने के प्रति सामान्य अरुचि:**
  - केंद्रीय वित्त आयोग (CFC) के अनुदान के आवंटन में वृद्धि के साथ, पंचायतें OSR के संग्रहण में कम रुचि दिखा रही हैं।
  - 10वें एवं 11वें CFC से ग्रामीण स्थानीय निकायों के लिये आवंटन क्रमश: 4,380 करोड़ रुपए और 8,000 करोड़ रुपए रहा था।
    - लेकिन 14वें एवं 15वें CFC द्वारा प्रदत्त अनुदान में भारी वृद्धि हुई जहाँ यह क्रमश: 2,00,202 करोड़ रुपए और 2,80,733 करोड़ रुपए रहा।

- वर्ष 2018-19 में 3,12,075 लाख रुपए का कर संग्रहण हुआ जो वर्ष 2021-2022 में घटकर 2,71,386 लाख रुपए हो गया। इसी अवधि में संग्रहित गैर -कर राजस्व 2,33,863 लाख रुपए और 2,09,864 लाख रुपए रहा।

- **राज्य सरकारों द्वारा प्रोत्साहन :**
  - कुछ राज्यों ने संगत अनुदान प्रदान करने के माध्यम से प्रोत्साहन (incentivisation) की नीति अपनाई है, लेकिन इसे बहुत कम लागू किया गया। पंचायतों को डिफॉल्टरों को दंडित करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि उनका मानना है कि OSR को एक आय के रूप में नहीं माना गया है जो पंचायत वित्त से जुड़ा हुआ है।
- **'फ्रीबीज़ कल्चर' के कारण बाधाएँ:**
  - राजस्व बढ़ाने के हर सक्षम कारक के बावजूद, पंचायतें संसाधन जुटाने में कई बाधाओं का सामना करती हैं; समाज में व्याप्त मुफ्तखोरी की संस्कृति (Freebies Culture) करों के भुगतान में व्याप्त उदासीनता का कारण है। निर्वाचित प्रतिनिधियों को लगता है कि कर अधिरोपण से उनकी लोकप्रियता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

PRIs के वित्तीय संसाधनों को बढ़ावा देने के लिये आवश्यक सुझाव क्या हैं?

- **विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट:**
  - पंचायती राज मंत्रालय द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट राज्य अधिनियमों के विवरण पर विस्तार से चर्चा करती है जिसमें कर और गैर-कर राजस्व शामिल किया गया है जिसे पंचायतों द्वारा संग्रहित एवं उपयोग किया जा सकता है।
  - संपत्ति कर, भूमि राजस्व पर उपकर, अतिरिक्त स्टांप शुल्क पर अधिभार, टोल, पेशे पर कर, विज्ञापन, जल एवं स्वच्छता और प्रकाश व्यवस्था के लिये उपयोगकर्त्ता शुल्क ऐसे प्रमुख OSRs हैं जहाँ पंचायतें अधिकतम आय अर्जित कर सकती हैं।
- **अनुकूल वातावरण की स्थापना करना:**
  - पंचायतों से अपेक्षा की जाती है कि वे उचित वित्तीय विनियमनों को लागू कर कराधान के लिये अनुकूल वातावरण स्थापित करें। इसमें कर एवं गैर-कर आधारों के संबंध में निर्णय लेना, उनकी दरें निर्धारित करना, आवधिक संशोधन के लिये प्रावधान स्थापित करना, छूट क्षेत्रों को परिभाषित करना और संग्रह के लिये प्रभावी कर प्रबंधन एवं प्रवर्तन कानून बनाना शामिल है।
- **गैर-कर राजस्व के लिये स्रोतों का विविधीकरण:**
  - गैर-कर राजस्व की विशाल संभावनाओं में शुल्क, किराया और निवेश बिक्री से प्राप्त आय तथा किराया प्रभार (hires charges) एवं प्राप्तियाँ शामिल हैं। ऐसी नवोन्मेषी परियोजनाएँ भी हैं जो OSR सृजित कर सकती हैं।
  - इसमें ग्रामीण व्यापार केंद्रों,नवोन्मेषी वाणिज्यिक उद्यमों, नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं, कार्बन क्रेडिट, कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) निधि और दान शामिल हैं।
- **स्थानीय संसाधनों का लाभ उठाना:**
  - राजस्व सृजन के लिये स्थानीय संसाधनों का लाभ उठाकर ज़मीनी स्तर पर आत्मनिर्भरता प्राप्त करने और सतत् विकास को बढ़ावा देने में ग्राम सभाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।
    - वे कृषि और पर्यटन से लेकर लघु-स्तरीय उद्योगों तक की राजस्व-सृजन पहलों के योजना निर्माण, निर्णयन एवं कार्यान्वयन में संलग्न हो सकते हैं।
    - उनके पास कर, शुल्क एवं लेवी अधिरोपित करने और प्राप्त धन को स्थानीय विकास परियोजनाओं, सार्वजनिक सेवाओं तथा सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों की ओर निर्देशित करने का प्राधिकार है।
- **भागीदारी को बढ़ावा देना:**
  - पारदर्शी वित्तीय प्रबंधन और समावेशी भागीदारी के माध्यम से, ग्राम सभाएँ जवाबदेही सुनिश्चित करती हैं तथा सामुदायिक भरोसे को बढ़ावा देती हैं; इस प्रकार, अंततः ग्रामों को आर्थिक रूप से स्वतंत्र एवं प्रत्यास्थी बनने के लिये सशक्त करती हैं।
  - इस प्रकार, ग्राम सभाओं को उद्यमशीलता को बढ़ावा देने और राजस्व सृजन प्रयासों की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिये बाहरी हितधारकों के साथ भागीदारी को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।
- **RBI की सिफारिशें:**
  - RBI वृहत विकेंद्रीकरण को बढ़ावा देने और स्थानीय नेताओं एवं अधिकारियों को सशक्त करने का सुझाव देता है। यह पंचायती राज की वित्तीय स्वायत्तता एवं संवहनीयता को बढ़ाने के उपायों की वकालत करता है।
  - रिपोर्ट में इस बात पर बल दिया गया है कि PRIs पारदर्शी बजटिंग, राजकोषीय अनुशासन, विकास प्राथमिकता में सामुदायिक भागीदारी, कर्मचारी प्रशिक्षण और कठोर निगरानी एवं मूल्यांकन को अपनाकर संसाधन उपयोग को बेहतर बना सकते हैं।
- **निर्वाचित प्रतिनिधियों और आम लोगों को शिक्षित करना:**
  - पंचायतों को स्वशासी संस्थाओं के रूप में विकसित करने के लिये राजस्व जुटाने के महत्त्व पर निर्वाचित प्रतिनिधियों और आम लोगों को शिक्षित करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष:

अंततः अनुदान निर्भरता सिंड्रोम का उचित समय पर समाधान करना होगा ताकि पंचायतें अपने संसाधनों पर संचालित हो सकें। पंचायतें ऐसी स्थिति तभी प्राप्त कर सकती हैं जब शासन के सभी स्तरों (जिसमें राज्य एवं केंद्रीय स्तर भी शामिल हैं) पर समर्पित प्रयास हों।

Q48. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "संविधान के मूल ढाँचा" की अवधारणा को स्पष्ट कीजिये। इससे संसद की संविधान संशोधन शक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- संविधान के मूल ढाँचे का परिचय देते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित "संविधान के मूल ढाँचे" की अवधारणा पर चर्चा कीजिये।
- संसद की संविधान संशोधन की शक्ति पर इसके प्रभाव के बारे में प्रकाश डालिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) के ऐतिहासिक मामले में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित मूल ढाँचे के सिद्धांत में यह माना गया कि संविधान की कुछ विशेषताएँ अपरिवर्तनीय हैं और इन्हें संवैधानिक संशोधनों के माध्यम से भी नहीं बदला जा सकता। यह सिद्धांत संविधान में निहित मूल सिद्धांतों और मूल्यों की रक्षा करने के साथ इसकी स्थिरता एवं अखंडता सुनिश्चित करने के लिये सामने आया।

मुख्य भाग:

बुनियादी ढाँचे के घटक:

- **लोकतांत्रिक ढाँचा:**
  - यह सिद्धांत संविधान में अंतर्निहित लोकतांत्रिक सिद्धांतों को बरकरार रखता है, जिसमें स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव, शक्तियों का पृथक्करण तथा विधि का शासन शामिल है।
  - ये सिद्धांत भारत की शासन संरचना की नींव हैं तथा यह नागरिकों के अधिकारों एवं स्वतंत्रता को बनाए रखने के लिये आवश्यक हैं।
- **संघवाद:**
  - मूल ढाँचे का सिद्धांत, संविधान के संघीय ढाँचे को मान्यता देता है, जो केंद्र एवं राज्य सरकारों के बीच शक्ति संतुलन पर आधारित है। संघीय सिद्धांतों को कमज़ोर करने का कोई भी प्रयास बुनियादी ढाँचे के उल्लंघन की श्रेणी में आता है।
- **धर्मनिरपेक्षता:**
  - धर्मनिरपेक्षता, भारतीय संविधान की एक मूलभूत विशेषता है, जो राज्य को किसी विशेष धर्म का पक्ष लेने से रोकती है।
  - यह सिद्धांत धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने के साथ नागरिकों के बीच समानता सुनिश्चित करता है।
- **न्यायिक समीक्षा:**
  - यह सिद्धांत न्यायपालिका को मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने वाले या संवैधानिक ढाँचे के विपरीत, कानूनों को रद्द करने का अधिकार देता है।
  - यह सिद्धांत संविधान की सर्वोच्चता सुनिश्चित करने के साथ व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है।
- **मूल अधिकार:**
  - मूल अधिकारों को मूल ढाँचे का अभिन्न अंग माना जाता है, क्योंकि ये नागरिकों की गरिमा एवं स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं।
  - कोई भी संशोधन जो इन अधिकारों को कमज़ोर या निरस्त करता है वह असंवैधानिक होगा।

संसद की संविधान संशोधन शक्ति पर प्रभाव:

संसद के पास अनुच्छेद 368 के तहत संविधान में संशोधन करने का अधिकार है लेकिन मूल ढाँचे का सिद्धांत इस संशोधन पर सीमाएँ अध्यारोपित करता है:

- **संवैधानिक सीमा:** संसद संविधान में इस तरह से संशोधन नहीं कर सकती जो इसकी मूल संरचना का उल्लंघन करती हो। मूल संरचना के विपरीत कोई भी संशोधन अमान्य होगा।
  - **इंदिरा नेहरू गांधी बनाम राज नारायण (1975):** इस मामले में न्यायालय ने मूल ढाँचा सिद्धांत को बरकरार रखते हुए 39वें संशोधन को रद्द कर दिया, जिसने राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और लोकसभा अध्यक्ष के चुनावों के संबंध में याचिकाओं पर फैसला करने के सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार को अप्रभावी बनाया।
  - **मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ (1980):** इसमें न्यायालय ने मूल ढाँचा सिद्धांत को दोहराते हुए माना कि संविधान में संशोधन करने की शक्ति इसकी मूल संरचना या ढाँचे को नष्ट करने की शक्ति नहीं है।
- **न्यायिक समीक्षा:** न्यायपालिका संविधान के संरक्षक के रूप में कार्य करती है और उसे संवैधानिक संशोधनों की समीक्षा करने का अधिकार है। यदि किसी संवैधानिक संशोधन को बुनियादी ढाँचे का उल्लंघन करने के लिये न्यायालय में चुनौती दी जाती है, तो न्यायपालिका संविधान के मूल सिद्धांतों के साथ इसकी अनुकूलता का मूल्यांकन करेगी।
  - सर्वोच्च न्यायालय ने IR कोएल्हो मामले जैसे फैसलों में बार-बार दोहराया है कि न्यायिक समीक्षा बुनियादी ढाँचे का हिस्सा है।
- **विकास एवं समय के अनुसार व्याख्या:** समय के साथ सर्वोच्च न्यायालय ने बदलती सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकताओं के अनुकूल बुनियादी ढाँचे के दायरे का विस्तार किया है। इससे सुनिश्चित होता है कि संविधान नई चुनौतियों के आलोक में प्रासंगिक और लचीला बना रहे।

- **केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973):** यह ऐतिहासिक मामला बुनियादी ढाँचे के सिद्धांत की नींव है। न्यायालय ने कहा हालाँकि संसद के पास अनुच्छेद 368 के तहत संविधान में संशोधन करने की शक्ति है, लेकिन वह इसके मूल ढाँचे को नहीं बदल सकती है।

निष्कर्ष:

मूल ढाँचे का सिद्धांत मनमाने संवैधानिक संशोधनों के खिलाफ एक सुरक्षा कवच के रूप में स्थापित है जो भारतीय संविधान के मूलभूत सिद्धांतों के संरक्षण को सुनिश्चित करता है। यह संसद की शक्ति पर प्रतिबंध लगाता है लेकिन यह संविधान की सर्वोच्चता को मज़बूत करने के साथ लोगों के अधिकारों एवं स्वतंत्रता की रक्षा करता है।

Q49. चुनावी बॉण्ड योजना को रद्द करने के सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के पीछे के कारकों का विश्लेषण कीजिये। भारत में राजनीतिक फंडिंग में पारदर्शिता बढ़ाने हेतु उपाय बताइये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- उत्तर की शुरुआत परिचय के साथ कीजिये, जो प्रश्न के लिये संदर्भ निर्धारित करता है।
- चुनावी बॉण्ड योजना को रद्द करने के सुप्रीम कोर्ट के फैसले के पीछे के कारकों का विश्लेषण कीजिये।
- भारत में राजनीतिक फंडिंग में पारदर्शिता में सुधार के लिये सिफारिशें बताइये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

चुनावी बॉण्ड वचन-पत्र की तरह धन उपकरण हैं, जिसे भारत में कंपनियों और व्यक्तियों द्वारा भारतीय स्टेट बैंक (SBI) से खरीदा जा सकता है तथा एक राजनीतिक दल को दान दिया जा सकता है, जो बाद में इन बॉण्डों को भुना सकता है। सर्वसम्मत फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने चुनावी बॉण्ड योजनाओं को असंवैधानिक घोषित कर दिया और भारतीय स्टेट बैंक (SBI) को तत्काल प्रभाव से चुनावी बॉण्ड जारी करना बंद करने का आदेश दिया।

मुख्य भाग:

चुनावी बॉण्ड योजना को रद्द करने के सुप्रीम कोर्ट के फैसले के पीछे कुछ प्रमुख कारक:

- **सूचना के अधिकार का उल्लंघन:** न्यायालय ने माना कि गुमनाम राजनीतिक दान की अनुमति देकर इस योजना ने संविधान के अनुच्छेद 19(1)(A) के तहत सूचना के मौलिक अधिकार का उल्लंघन किया है।
  - इसने बताया कि ऐसा अधिकार न केवल भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को पूरा करने तक ही सीमित है, बल्कि सरकार को जवाबदेह बनाकर सहभागी लोकतंत्र को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार यह केवल साध्य का साधन नहीं है, बल्कि अपने आप में एक साध्य है।
- **'क्विड प्रो क्वो' व्यवस्था की संभावना:** फैसले ने इस बात पर प्रकाश डाला कि आर्थिक असमानता पैसे और राजनीति के बीच गहरे संबंध के कारण राजनीतिक जुड़ाव के विभिन्न स्तरों को जन्म देती है। परिणामस्वरूप, इस बात की वैध संभावना है कि किसी राजनीतिक दल को वित्तीय योगदान देने के परिणामस्वरूप भावना के साथ काम करने की व्यवस्था हो जाएगी।
- **काले धन पर अंकुश लगाने के लिये आनुपातिक रूप से उचित नहीं:** केएस पुट्टास्वामी मामले में अपने 2017 के फैसले में निर्धारित आनुपातिकता परीक्षण पर भरोसा किया, जिसने निजता के अधिकार को बरकरार रखा, यह रेखांकित किया कि सरकार ने अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये कम-से-कम प्रतिबंधात्मक तरीका नहीं अपनाया।
  - ऐसे न्यून प्रतिबंधात्मक तरीकों के उदाहरण के रूप में, मुख्य न्यायाधीश ने गुमनाम दान पर ₹20,000 की सीमा और चुनावी ट्रस्ट की अवधारणा का हवाला दिया, जो दानदाताओं से राजनीतिक योगदान एकत्र करने की सुविधा प्रदान करता है।
- **असीमित कॉर्पोरेट दान स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों का उल्लंघन है:** न्यायालय ने पाया कि कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 182 में किया गया संशोधन, जो कंपनियों द्वारा असीमित राजनीतिक योगदान की अनुमति देता है, स्पष्ट रूप से मनमाना है।
  - यह प्रावधान भारतीय कंपनियों को विशिष्ट परिस्थितियों में राजनीतिक दलों को वित्तीय योगदान देने की अनुमति देता है। हालाँकि वर्ष 2017 के वित्त अधिनियम के माध्यम से, महत्त्वपूर्ण बदलाव पेश किये गए, जिसमें उस राशि पर पूर्व सीमा को पृथक करना भी शामिल है जो कंपनियाँ राजनीतिक दलों को दान दे सकती हैं - विगत तीन वित्तीय वर्षों के औसत मुनाफे का 7.5%।
- **RPA, 1951 की धारा 29C में संशोधन रद्द किया गया:** प्रारंभ में जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 29C में पार्टियों को ₹20,000 से अधिक के सभी योगदानों की घोषणा करने और यह निर्दिष्ट करने की आवश्यकता थी कि क्या वे व्यक्तिगत व्यक्तियों या कंपनियों से प्राप्त हुए थे।
  - हालाँकि वर्ष 2017 के वित्त अधिनियम ने एक अपवाद बनाने के लिये इस प्रावधान में संशोधन किया, जिसमें ऐसी आवश्यकता चुनावी बॉण्ड के माध्यम से प्राप्त दान पर लागू नहीं होगी।

- संशोधन को रद्द करते हुए, न्यायालय ने कहा कि 20,000 रुपए से अधिक के योगदान का खुलासा करने की मूल आवश्यकता मतदाताओं के सूचना के अधिकार और दानदाताओं की गोपनीयता के अधिकार को प्रभावी ढंग से संतुलित करती है।

भारत में राजनीतिक फंडिंग में पारदर्शिता में सुधार के लिये आवश्यक कुछ उपाय:

- **व्यापक कानूनी सुधार:** राजनीतिक दलों के वित्त, चुनाव व्यय और धन के स्रोतों को विनियमित करने के लिये व्यापक कानूनी सुधार लागू करना।
  - इसमें मौजूदा कानूनों पर दोबारा गौर करना और उन्हें मज़बूत करना या खामियों को दूर करने के लिये नया कानून लाना शामिल हो सकता है।
  - चुनावी फंडिंग सुधारों की आवश्यकता पर क्रॉस-पार्टी सर्वसम्मति को प्रोत्साहित करना।
- **स्वतंत्र चुनावी निरीक्षण:**
  - अभियान वित्त कानूनों के अनुपालन की निगरानी और कार्यान्वयन के लिये भारत के चुनाव आयोग जैसे स्वतंत्र चुनावी निरीक्षण निकायों की भूमिका को मज़बूत करना। इन निकायों को पर्याप्त संसाधन और स्वायत्तता प्रदान करना।
- **व्यय सीमाएँ:** व्यय सीमाएँ राजनीति को वित्तीय शस्त्रों की होड़ से बचाती हैं। वे वोटों के लिये प्रतिस्पर्द्धा शुरू करने से पहले ही पार्टियों को पैसे के लिये प्रतिस्पर्द्धा के दबाव से मुक्त कर देते हैं। हालाँकि RoPA, 1951 एक उम्मीदवार द्वारा किये जाने वाले खर्च की सीमा निर्धारित करता है, लेकिन यह राजनीतिक दलों के लिये ऐसी कोई सीमा निर्धारित नहीं करता है।
  - कुछ देश राजनीतिक दलों पर व्यय सीमा लगाते हैं। उदाहरण के लिये, ब्रिटेन में राजनीतिक दलों को प्रति सीट 30,000 यूरो (लगभग 30 लाख रुपए) से अधिक खर्च करने की अनुमति नहीं है।
- **राजनीतिक दलों के वित्तपोषण में पारदर्शिता:** राजनीतिक दलों को दानदाताओं के विवरण और प्राप्त राशि सहित धन के सभी स्रोतों का खुलासा करने का आदेश दिया गया है।
  - सुनिश्चित करें, कि यह जानकारी जनता के लिये आसानी से उपलब्ध हो और नियमित रूप से अपडेट किया जाए।
  - बड़े कॉर्पोरेट योगदान के प्रभाव को रोकने के लिये राजनीतिक दलों को दान की जाने वाली राशि पर एक ऊपरी सीमा लागू करना।
  - यूनाइटेड किंगडम में, एक पार्टी को एक कैलेंडर वर्ष में एक ही स्रोत से प्राप्त कुल 7,500 पाउंड से अधिक के दान की रिपोर्ट करने की आवश्यकता होती है। जर्मनी में समान सीमा 10,000 यूरो है।
- **पार्टियों को सार्वजनिक फंडिंग प्रदान करना:** दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग (2008) ने चुनाव खर्चों के "नाजायज़ और अनावश्यक फंडिंग" को रोकने के लिये आंशिक राज्य फंडिंग का समर्थन किया।
  - उदाहरण के लिये, जर्मनी में पार्टियों को राजनीतिक व्यवस्था में उनके महत्त्व के आधार पर सार्वजनिक धन मिलता है।
- **चिली प्रयोग:** "आरक्षित योगदान" की चिली प्रणाली के तहत, दानकर्त्ता पार्टियों को दान करने के लिये इच्छित धनराशि चिली चुनाव सेवा को हस्तांतरित कर सकते हैं और चुनावी सेवा दाता की पहचान बताए बिना पार्टी को राशि भेजेगी।
  - यदि पूरी गुमनामी प्रणाली पूर्ण रूप से कार्य करती है, तो राजनीतिक दल किसी विशिष्ट दाता द्वारा दान की गई राशि का पता लगाने में सक्षम नहीं होंगे - और परिणामस्वरूप बदले की व्यवस्था करना बेहद मुश्किल होगा।
- **राष्ट्रीय चुनाव कोष की स्थापना:** एक अन्य विकल्प एक राष्ट्रीय चुनाव कोष की स्थापना करना होगा जिसमें सभी दानकर्त्ता योगदान कर सकें। पार्टियों को उनके चुनावी प्रदर्शन के आधार पर धन आवंटित किया जा सकता है। इससे दानदाताओं के प्रतिशोध के बारे में तथाकथित चिंता समाप्त हो जाएगी।
  - "आरक्षित योगदान" की चिली प्रणाली के तहत, दानकर्त्ता पार्टियों को दान करने के लिये इच्छित धनराशि चिली निर्वाचन सेवा को हस्तांतरित कर सकते हैं और निर्वाचन सेवा दाता की पहचान का खुलासा किये बिना पार्टी को राशि अग्रेषित कर देगी।

निष्कर्ष:

भारत में चुनावी फंडिंग में पारदर्शिता अपनाकर, राष्ट्र अपने लोकतांत्रिक संस्थानों की नींव को मज़बूत कर सकता है और नागरिकों को इस ज्ञान एवं विश्वास के साथ सशक्त बना सकता है कि उनकी चुनावी पसंद वित्तीय हितों के अनुचित प्रभाव के बजाय विचारों तथा मूल्यों से प्रभावित होती है।

Q50. भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के क्रम में राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों के महत्त्व पर चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- उत्तर की शुरुआत राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों के परिचय के साथ कीजिये।
- सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों के महत्त्व का वर्णन कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत (DPSP) भारतीय संविधान के भाग IV में निर्धारित दिशा-निर्देशों का एक समूह है। हालाँकि गैर-न्यायसंगत रूप में वे भारतीय सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिये एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में कार्य करते हैं।

मुख्य भाग:

- **सामाजिक कल्याण नीतियों के लिये रूपरेखा:**
  - DPSP सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कानून और नीतियाँ तैयार करने के लिये एक रूपरेखा प्रदान करता है।
  - उदाहरण के लिये अनुच्छेद 39 राज्य को समान कार्य हेतु समान वेतन सुनिश्चित करने का निर्देश देता है, जिसके कारण न्यूनतम वेतन कानून और श्रम कल्याण योजनाएँ लागू हुईं, जिससे आर्थिक असमानताएँ कम हुईं।
- **सामाजिक असमानताओं का उन्मूलन:**
  - अनुच्छेद 38 और 39 का उद्देश्य आय, स्थिति एवं अवसरों में असमानताओं को कम करना है।
  - अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों जैसे सामाजिक रूप से वंचित समूहों के लिये शिक्षा एवं रोज़गार में आरक्षण जैसी नीतियाँ ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने तथा सामाजिक समानता को बढ़ावा देने के प्रयासों का उदाहरण हैं।
- **शैक्षिक अवसरों को बढ़ावा देना:**
  - अनुच्छेद 45 राज्य को 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिये मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का आदेश देता है।
  - इस प्रावधान से सर्व शिक्षा अभियान (SSA) और शिक्षा का अधिकार अधिनियम जैसी योजनाओं की स्थापना हुई है, जिससे समाज के हाशिये पर रहने वाले वर्गों के लिये शिक्षा तक पहुँच सुनिश्चित हुई है, जिससे सामाजिक समावेशन को बढ़ावा मिला है।
- **कमज़ोर वर्गों का सशक्तिकरण:**
  - DPSP समाज के कमज़ोर वर्गों की सुरक्षा और सशक्तिकरण पर ज़ोर देता है।
  - अनुच्छेद 46 एवं 47 अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य हाशिये पर रहने वाले समुदायों के सामाजिक-आर्थिक विकास के प्रति विशेष देखभाल तथा ध्यान देने की आवश्यकता पर बल देते हैं।
  - सकारात्मक कार्रवाई नीतियों और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों जैसी पहलों का उद्देश्य इन वर्गों का उत्थान करना तथा सामाजिक अंतर को पाटना है।
- **पर्यावरणीय स्थिरता और सामाजिक न्याय:**
  - अनुच्छेद 48A पर्यावरण संरक्षण और सतत् विकास के महत्त्व पर प्रकाश डालते हैं।
  - पर्यावरणीय क्षरण प्राय: असुरक्षित समुदायों को प्रभावित करता है।
  - सतत् विकास को बढ़ावा देने वाली नीतियाँ न केवल पर्यावरणीय न्याय सुनिश्चित करती हैं बल्कि अपनी आजीविका के लिये प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर हाशिये पर रहने वाली आबादी के हितों को भी संरक्षित करती हैं।
- **श्रमिकों के लिये कल्याणकारी उपाय:**
  - DPSP मज़दूरों के कल्याण और उनके अधिकारों की सुरक्षा का समर्थन करता है।
  - अनुच्छेद 42 एवं 43 काम की उचित और मानवीय परिस्थितियों तथा मातृत्व अनुतोष के प्रावधान पर ज़ोर देते हैं।
  - श्रम कानूनों का कार्यान्वयन, न्यूनतम वेतन मानकों की स्थापना और महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) जैसी पहल का उद्देश्य मज़दूरों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार करना है, जिससे सामाजिक न्याय में योगदान मिलता है।
- **सामाजिक एकता को मज़बूत बनाना:**
  - DPSP सामाजिक एकता और सद्भाव को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
  - अनुच्छेद 44 जैसे- अनुच्छेद धर्म, लिंग या जाति के आधार पर भेदभावपूर्ण प्रथाओं को खत्म करने के लिये समान नागरिक संहिता को बढ़ावा देने पर ज़ोर देते हैं।
  - इस तरह के उपाय एक बहुलवादी समाज के विचार को बढ़ावा देते हैं, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को उनकी पृष्ठभूमि की परवाह किये बिना समान अधिकार और अवसर प्राप्त होते हैं।
- **न्यायिक सक्रियता और DPSP:**
  - हालाँकि गैर-न्यायसंगत, DPSP ने न्यायिक निर्णयों को प्रभावित किया है, जिससे सामाजिक-आर्थिक अधिकार न्यायशास्त्र का विकास हुआ है।
  - न्यायपालिका ने मौलिक अधिकारों की व्याख्या करते समय प्राय: DPSP का इस्तेमाल किया है, जिससे सामाजिक न्याय का दायरा बढ़ गया है।
  - केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य और मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ जैसे ऐतिहासिक फैसले DPSP तथा मौलिक अधिकारों के बीच सहजीवी संबंध को दर्शाते हैं।

निष्कर्ष:

राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिये आधारशिला के रूप में कार्य करते हैं। आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय एवं राजनीतिक आयामों को शामिल करते हुए अपने बहुआयामी दृष्टिकोण के माध्यम से DPSP ने एक अधिक न्यायसंगत और समावेशी समाज के लिये आधार तैयार किया।

Q51. सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने तथा असमानता को कम करने में भारत की प्रमुख कल्याणकारी योजनाओं की प्रभावशीलता पर उदाहरण सहित चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- सामाजिक न्याय का परिचय देते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में भारत की प्रमुख कल्याणकारी योजनाओं की प्रभावशीलता का वर्णन कीजिये।
- असमानता को कम करने में कल्याणकारी योजनाओं की प्रासंगिकता का विश्लेषण कीजिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत की प्रमुख कल्याणकारी योजनाएँ सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने तथा असमानता को कम करने में सहायक रही हैं। हाशिये पर मौजूद समुदायों के उत्थान तथा समावेशी विकास को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से इन योजनाओं ने विभिन्न सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों से निपटने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

मुख्य भाग:

सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने तथा असमानता को कम करने में प्रभावशीलता:

1. गरीबी उन्मूलन पर प्रभाव:

- महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम (MGNREGA) ने ग्रामीण भारत में 100 दिनों की गारंटी वाले अकुशल कार्य के अधिकार-आधारित ढाँचे के साथ लाखों ग्रामीण परिवारों को रोज़गार के अवसर प्रदान किये हैं, जिससे गरीबी कम होने के साथ आजीविका में सुधार हुआ है।
- विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार, मनरेगा से गरीबी दर में कमी आने के साथ ग्रामीण स्तर पर उपभोग में वृद्धि हुई है।
- उदाहरण: मनरेगा ने कोविड-19 महामारी के दौरान प्रवासी श्रमिकों को आजीविका सहायता प्रदान की, जिससे गहन आर्थिक संकट को रोका जा सका।

2. खाद्य सुरक्षा बढ़ाना:

- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (NFSA) का लक्ष्य दो-तिहाई आबादी को सब्सिडी वाला खाद्यान्न उपलब्ध कराना है।
- NFSA ने विशेष रूप से कमज़ोर समूहों के लिये खाद्य सुरक्षा एवं पोषण परिणामों में सुधार किया है।
- उदाहरण: आँगनवाड़ी केंद्रों के माध्यम से पौष्टिक भोजन के प्रावधान से बच्चों में कुपोषण को कम करने में मदद मिली है।

3. स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच में सुधार:

- आयुष्मान भारत योजना, जिसमें प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना (PMJAY) शामिल है, जिसका उद्देश्य कमज़ोर परिवारों को स्वास्थ्य बीमा कवरेज प्रदान करना है।
- PMJAY ने लाखों लोगों के लिये स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच को आसान बना दिया है, जिससे चिकित्सा खर्चों का वित्तीय बोझ कम हो गया है।
- उदाहरण: PMJAY द्वारा दूरदराज के गाँव में परिवारों के चिकित्सा खर्चों को कवर किया गया, जिससे वे जीवन रक्षक उपचार का खर्च वहन करने में सक्षम हुए।

4. महिलाओं को सशक्त बनाना:

- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ (BBBP) और प्रधानमंत्री मातृ वंदना (PMMVY) जैसी योजनाओं का उद्देश्य समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार करना है।
- BBBP ने बालिकाओं के महत्त्व के बारे में जागरूकता बढ़ाने के साथ कुछ क्षेत्रों में लिंग अनुपात में सुधार में योगदान दिया है।
- उदाहरण: PMMVY गर्भवती तथा स्तनपान कराने वाली माताओं को वित्तीय सहायता प्रदान करती है, जिससे उन्हें स्वास्थ्य सेवाओं तथा पोषण तक पहुँच प्राप्त होती है।

5. शिक्षा को बढ़ावा देना:

- सर्व शिक्षा अभियान (SSA) और मध्याह्न भोजन योजना (MDMS) का उद्देश्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच को बढ़ाना है।
- SSA के कारण स्कूल में नामांकन दर में वृद्धि (खासकर हाशिए पर रहने वाले समुदायों के बीच) हुई है।
- **उदाहरण:** MDMS ने बच्चों की पोषण स्थिति में सुधार किया है तथा इससे स्कूलों में नियमित उपस्थिति को प्रोत्साहन मिला है।

6. आवास और बुनियादी ढाँचे की ज़रूरतों को हल करना:

- प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) का लक्ष्य वर्ष 2022 तक सभी को किफायती आवास उपलब्ध कराना है।
- PMAY ने बेघरों और अपर्याप्त आवास स्थितियों में रहने वाले लोगों के लिये घरों के निर्माण की सुविधा प्रदान की है।

- **उदाहरण:** PMAY-ग्रामीण ने ग्रामीण परिवारों को पक्के घर उपलब्ध कराए हैं, जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

निष्कर्ष:

भारत की प्रमुख कल्याणकारी योजनाएँ विभिन्न सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों का समाधान करके सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने तथा असमानता को कम करने में प्रभावी रही हैं। इन योजनाओं ने न केवल लाखों लोगों के जीवन में सुधार किया है बल्कि देश के समग्र विकास में भी योगदान दिया है। हालाँकि यह सुनिश्चित करने के लिये निरंतर मूल्यांकन और सुधार की आवश्यकता है कि ये योजनाएँ इच्छित लाभार्थियों तक पहुँचें तथा अपने उद्देश्यों को प्रभावी ढंग से प्राप्त कर सकें।

Q52. भारत में स्वतंत्रता के पश्चात केंद्र-राज्य संबंधों के विकास पर चर्चा कीजिये। संवैधानिक प्रावधानों एवं न्यायिक व्याख्याओं ने इन संबंधों को किस प्रकार प्रभावित किया है? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- भारत में केंद्र-राज्य संबंधों का परिचय देते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- स्वतंत्रता के बाद भारत में केंद्र-राज्य संबंधों के विकास पर चर्चा कीजिये।
- इन संबंधों को प्रभावित करने वाले संवैधानिक प्रावधानों एवं न्यायिक व्याख्याओं पर प्रकाश डालिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारत में स्वतंत्रता के बाद केंद्र-राज्य संबंध निर्णायक रूप से विकसित हुए हैं, जो ऐतिहासिक, राजनीतिक एवं संवैधानिक कारकों की जटिल परस्पर क्रिया को दर्शाते हैं। भारत के संविधान द्वारा 7वीं अनुसूची और उसके बाद की न्यायिक व्याख्याओं जैसे प्रावधानों के माध्यम से, इन संबंधों को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई गई है।

मुख्य भाग:

केंद्र-राज्य संबंधों का विकास:

- **स्वतंत्रता-पूर्व काल:**
  - ब्रिटिश शासन के दौरान, भारत एकात्मक राज्य था जिसमें सत्ता का केंद्रीकरण था।
  - भारत सरकार अधिनियम, 1935 द्वारा केंद्र एवं प्रांतों के लिये अलग-अलग शक्तियों के साथ संघीय विशेषताओं को लागू किया गया, जिससे भविष्य के केंद्र-राज्य संबंधों की नींव रखी गई।
- **स्वतंत्रता के बाद की अवधि (1947-1966):**
  - भारत सरकार अधिनियम, 1935 ने भारतीय संविधान का आधार तैयार किया, जिसमें एक मज़बूत केंद्र के साथ संघीय ढाँचे को अपनाया गया।
  - संविधान की सातवीं अनुसूची में केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन का उल्लेख किया गया, जिसमें तीन सूचियाँ- संघ सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची शामिल हैं।
- **नेहरूवादी काल (1947-1964):**
  - जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता को बनाए रखने के लिये एक मज़बूत केंद्र की वकालत की।
  - योजना आयोग की स्थापना, आर्थिक नियोजन को बढ़ावा देने के लिये की गई थी, जिससे आर्थिक निर्णय लेने का केंद्रीकरण हुआ।
- **भाषाई पुनर्गठन का काल (1956-1966):**
  - वर्ष 1953 में सरकार ने भाषाई आधार पर विभिन्न राज्यों की विभाजन की मांगों की जाँच और समाधान करने के लिये फज़ल अली आयोग का गठन किया था।
  - इस आयोग की सिफारिश के आधार पर, राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 प्रस्तुत किया गया, जो भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन में महत्त्वपूर्ण कदम था।
  - इस अवधि में भाषाई राज्यों तथा केंद्र के बीच भाषा, संस्कृति एवं पहचान के मुद्दों पर तनाव देखा गया।
- **राजनीतिक उथल-पुथल की अवधि (1967-1984):**
  - वर्ष 1967 के आम चुनावों के परिणामस्वरूप कई राज्यों में गैर-कॉन्ग्रेसी सरकारों का उदय हुआ, जिससे केंद्र-राज्य की गतिशीलता में बदलाव आया।
  - सरकारिया आयोग (1983) का गठन, सहकारी संघवाद की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए केंद्र-राज्य संबंधों में बदलावों की जाँच और सिफारिश करने के लिये किया गया था।
- **आर्थिक सुधारों का काल (1991-वर्तमान):**
  - वर्ष 1991 के आर्थिक उदारीकरण के कारण केंद्र एवं राज्यों के बीच राजकोषीय संबंधों में बदलाव आया।
  - वर्ष 2015 में योजना आयोग के स्थान पर नीति आयोग के गठन ने सहकारी संघवाद की ओर बदलाव का संकेत दिया।

संवैधानिक प्रावधानों और न्यायिक व्याख्याओं का प्रभाव:

- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - अनुच्छेद 245-255 केंद्र एवं राज्यों के बीच विधायी संबंधों को परिभाषित करते हुए शक्तियों का विभाजन सुनिश्चित करते हैं।

- अनुच्छेद 256-263 में केंद्र और राज्यों के बीच सहयोग तथा समन्वय पर बल देते हुए कार्यकारी संबंधों का विवरण शामिल है।
- अनुच्छेद 356 संवैधानिक विफलता की स्थिति में राज्यों में राष्ट्रपति शासन से संबंधित है।

- **न्यायिक व्याख्याएँ:**
  - सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र-राज्य संबंधों से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या और स्पष्टीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
  - एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) जैसे ऐतिहासिक मामले ने अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग और राज्यों की स्वायत्तता के संबंध में सिद्धांत स्थापित किये हैं।

समसामयिक मुद्दे एवं सुझाव:

- **वस्तु एवं सेवा कर (GST):** GST का कार्यान्वयन राजकोषीय संघवाद में महत्त्वपूर्ण बदलाव का संकेतक है, जिसका लक्ष्य कराधान को सुव्यवस्थित करना है, लेकिन इसके साथ ही राजस्व बँटवारे एवं राज्यों की स्वायत्तता पर बहस भी शुरू हो गई है।
- **अंतर-राज्यीय जल विवाद:** जल, राज्य का विषय है, नदी जल-बँटवारे पर विवाद से केंद्र-राज्य संबंधों में जटिलताएँ बढ़ी हैं, जिनके समाधान के लिये अक्सर केंद्रीय हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है।
- **राष्ट्रीय सुरक्षा और कानून प्रवर्तन:** आतंकवाद एवं आंतरिक सुरक्षा जैसे मुद्दों पर केंद्र तथा राज्यों के बीच समन्वय की आवश्यकता होती है, जिससे कभी-कभी अधिकार क्षेत्र तथा नियंत्रण के संबंध में तनाव पैदा हो जाता है।

निष्कर्ष:

भारत में केंद्र-राज्य संबंधों का विकास ऐतिहासिक, राजनीतिक और संवैधानिक कारकों से प्रभावित एक गतिशील प्रक्रिया को दर्शाता है। संविधान ने इन संबंधों के लिये एक रूपरेखा प्रदान की है लेकिन न्यायिक व्याख्याओं ने केंद्र और राज्यों के बीच शक्ति की सीमाओं को स्पष्ट तथा परिभाषित करने में मदद की है। चूँकि भारत एक संघीय लोकतंत्र के रूप में विकसित हो रहा है, इसलिये यह आवश्यक है।

Q53. क्षेत्रीय पुनर्गठन के संदर्भ में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 3 के महत्त्व को बताते हुए संघवाद पर इसके निहितार्थ की चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 3 का परिचय देते हुए उत्तर शुरू कीजिये।
- क्षेत्रीय पुनर्गठन के संदर्भ में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 3 के महत्त्व पर चर्चा कीजिये।
- भारतीय संघवाद के लिये अनुच्छेद 3 के निहितार्थों का विश्लेषण कीजिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 3 संसद को नए राज्य का निर्माण करने, मौजूदा राज्यों की सीमाओं को बदलने या दो या दो से अधिक राज्यों का विलय करने की शक्ति प्रदान करता है। यह अनुच्छेद भारत की क्षेत्रीय अखंडता एवं संघीय ढाँचे को प्रभावित करने के रूप में महत्त्वपूर्ण है।

मुख्य भाग:

अनुच्छेद 3 का महत्त्व :

- **प्रादेशिक पुनर्गठन:**
  - अनुच्छेद 3 प्रशासनिक, भाषाई, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक विचारों के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन हेतु कानूनी ढाँचा प्रदान करता है।
  - उदाहरण के लिये वर्ष 2014 में आंध्र प्रदेश से तेलंगाना का गठन विशिष्ट सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक कारकों के कारण एक अलग राज्य की मांग पर आधारित था।
- **क्षेत्रीय आकांक्षाओं को बढ़ावा मिलना:**
  - इससे क्षेत्रीय आकांक्षाओं को पहचान एवं महत्त्व मिलता है।
  - झारखंड, छत्तीसगढ़ तथा उत्तराखंड जैसे राज्यों के गठन ने आदिवासी एवं हाशिए पर रहने वाले समुदायों की अलग राज्यों की लंबे समय से चली आ रही मांग को पूरा किया।
- **प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि:**
  - अनुच्छेद 3 के तहत क्षेत्रीय पुनर्गठन से प्रशासनिक दक्षता के साथ शासन में सुधार हो सकता है।
  - छोटे राज्य अक्सर स्थानीय ज़रूरतों के प्रति अधिक प्रबंधनीय और उत्तरदायी होते हैं, जिससे सेवाओं की बेहतर डिलीवरी होती है।
- **अनेकता में एकता को बढ़ावा मिलना:**
  - राज्यों के पुनर्गठन के क्रम में अनुच्छेद 3 से विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट पहचान एवं संस्कृतियों को पहचान मिलने से विविधता में एकता सुनिश्चित होती है।

- पूर्वोत्तर में विभिन्न राज्यों का पुनर्गठन (जैसे कि अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर और मिज़ोरम), जातीय एवं सांस्कृतिक विविधता को समायोजित करने के क्रम में अनुच्छेद 3 के अनुप्रयोग को दर्शाता है।

- **संघीय ढाँचे में लचीलापन:**
  - अनुच्छेद 3 लोगों की उभरती ज़रूरतों तथा आकांक्षाओं के अनुसार राज्य की सीमाओं में बदलाव की अनुमति देकर संघीय ढाँचे में लचीलापन प्रदान करता है। यह लचीलापन नई सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकताओं एवं चुनौतियों को हल करने में सहायक है।

संघवाद के लिये निहितार्थ:

- **केंद्र को एकतरफा शक्तियाँ:**
  - अनुच्छेद 3 राज्य की सीमाओं में किसी भी बदलाव के लिये संसदीय अनुमोदन की आवश्यकता के द्वारा राज्यों पर केंद्र को एकतरफा शक्तियाँ प्रदान करता है।
- **नियंत्रण एवं संतुलन:**
  - राज्य विधानमंडलों के दृष्टिकोण पर विचार करने का प्रावधान यह सुनिश्चित करता है कि पुनर्गठन मनमाना नहीं है तथा इसमें संविधान में निहित संघीय सिद्धांतों का सम्मान किया जाता है। इससे केंद्र सरकार की शक्तियों पर नियंत्रण मिलता है।
- **एकता का संरक्षण:**
  - पुनर्गठन का अधिकार देने के क्रम में अनुच्छेद 3 में देश की एकता तथा अखंडता को बनाए रखने के महत्त्व पर भी बल दिया गया है।
  - इसमें निहित है कि राज्य की सीमाओं में कोई भी बदलाव राष्ट्रीय हित में होना चाहिये तथा इससे लोगों के कल्याण को बढ़ावा मिलना चाहिये।
- **संवैधानिक सुरक्षा उपाय:**
  - अनुच्छेद 3 में राष्ट्रपति की सहमति तथा संबंधित राज्यों के साथ परामर्श की आवश्यकता जैसे सुरक्षा उपाय शामिल हैं।
  - ये सुरक्षा उपाय जल्दबाज़ी या राजनीति से प्रेरित राज्य पुनर्गठन के प्रति सुरक्षा प्रदान करते हैं।
- **न्यायिक समीक्षा:**
  - सर्वोच्च न्यायालय के पास अनुच्छेद 3 के तहत किये गए कार्यों की संवैधानिकता की समीक्षा करने का अधिकार है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि इससे संघवाद के सिद्धांतों के साथ मूल ढाँचे का उल्लंघन न हो।

निष्कर्ष:

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 3 संघीय सिद्धांतों के संरक्षण के साथ प्रशासनिक दक्षता की आवश्यकता को संतुलित करते हुए, राज्यों के क्षेत्रीय पुनर्गठन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका महत्त्व भारत की एकता तथा अखंडता को बनाए रखते हुए क्षेत्रीय आकांक्षाओं को समायोजित करने की क्षमता में निहित है।

Q54. भारत में सेवा वितरण तथा पारदर्शिता में सुधार सुनिश्चित करने के क्रम में ई-गवर्नेंस की भूमिका पर चर्चा कीजिये। इससे शासन में नागरिक भागीदारी को किस प्रकार बढ़ावा दिया जा सकता है? (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- ई-गवर्नेंस के बारे में बताते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- भारत में सेवा वितरण तथा पारदर्शिता में सुधार हेतु ई-गवर्नेंस की भूमिका का वर्णन कीजिये।
- मूल्यांकन कीजिये कि इससे शासन में नागरिक भागीदारी को किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

ई-गवर्नेंस के तहत सरकारी दक्षता एवं प्रभावशीलता में सुधार के क्रम में इलेक्ट्रॉनिक संचार प्रौद्योगिकियों को महत्त्व दिया जा रहा है। इससे सेवा वितरण, पारदर्शिता तथा नागरिक भागीदारी के संबंध में महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

मुख्य भाग:

सेवा वितरण तथा पारदर्शिता में सुधार हेतु ई-गवर्नेंस की भूमिका:

- **सेवा वितरण में सुधार:**
  - ई-गवर्नेंस से प्रशासनिक प्रक्रियाओं के सुव्यवस्थित होने के साथ नौकरशाही बाधाओं में कमी एवं सेवा वितरण तंत्र की दक्षता में सुधार हुआ है।
  - राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना (NeGP) एवं डिजिटल इंडिया जैसी पहल ने सरकारी सेवाओं को डिजिटल बना दिया है, जिससे देश भर के नागरिकों के लिये यह अधिक सुलभ हो गई हैं।
  - उदाहरण के लिये, डिजीलॉकर प्लेटफॉर्म से नागरिकों को अपने दस्तावेज़ों को सुरक्षित रूप से ऑनलाइन संग्रहीत करने तथा साझा करने की सुविधा मिली है, जिससे कागज़ी कार्रवाई की आवश्यकता कम होने के साथ सेवा वितरण में गति आई है।
- **पारदर्शिता में वृद्धि:**
  - ई-गवर्नेंस पहल ने सरकारी प्रक्रियाओं को डिजिटल बनाकर तथा नागरिकों के लिये सूचनाओं को सुलभ बनाकर पारदर्शिता को बढ़ावा दिया है।

- सूचना का अधिकार (RTI) ऑनलाइन पोर्टल जैसे प्लेटफॉर्म नागरिकों को सरकारी रिकॉर्ड तक पहुँचने में सक्षम बनाने एवं जवाबदेहिता को बढ़ावा देने के साथ भ्रष्टाचार को कम करने में भूमिका निभाते हैं।
- इसके अतिरिक्त, ई-खरीद जैसी पहल ने सरकारी खरीद प्रक्रियाओं को अधिक पारदर्शी बनाने के साथ भ्रष्टाचार के अवसरों को कम किया है तथा विक्रेताओं के बीच निष्पक्ष प्रतिस्पर्द्धा सुनिश्चित की है।

शासन में नागरिकों की भागीदारी बढ़ाना:

- **नागरिक भागीदारी:**
  - ई-गवर्नेंस से विभिन्न चैनलों के माध्यम से शासन में नागरिकों की भागीदारी सुलभ हुई है।
  - ऑनलाइन शिकायत निवारण पोर्टल नागरिकों को शिकायतें दर्ज करने और लोगों को सरकारी अधिकारियों से सीधे समाधान मांगने के लिये सशक्त बनाते हैं, जिससे जवाबदेहिता में वृद्धि होती है।
  - इसके अलावा नागरिक समन्वय के लिये सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म एवं मोबाइल एप्लिकेशन का व्यापक उपयोग हो रहा है, जिससे नागरिकों और सरकारी अधिकारियों के बीच वास्तविक समय पर प्रतिक्रिया एवं विमर्श संभव हो रहा है।
- **लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को सुदृढ़ बनाना:**
  - ई-गवर्नेंस की समावेशिता तथा नागरिक सहभागिता को बढ़ावा देने के क्रम में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को मज़बूत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका है।
    - ऑनलाइन वोटिंग प्रणाली (हालाँकि भारत में अभी भी यह प्रायोगिक चरण में है) में मतदान प्रतिशत बढ़ाने तथा चुनावी प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करने की क्षमता है, जिससे यह सभी नागरिकों के लिये अधिक सुलभ हो जाएगी।
  - आधार बायोमेट्रिक पहचान प्रणाली इस बात का एक प्रमुख उदाहरण है कि ई-गवर्नेंस से सेवा वितरण के साथ पारदर्शिता में किस प्रकार क्रांति आ सकती है।
    - आधार ने सरकारी सेवाओं तथा सब्सिडी तक पहुँच की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित किया है, जिससे लोक कल्याण कार्यक्रमों में रिसाव को कम किया जा सकता है।
- **शहरी-ग्रामीण अंतराल को कम करना:**
  - ई-गवर्नेंस पहल ने डिजिटल प्लेटफॉर्मों के माध्यम से दूरदराज़ और ग्रामीण क्षेत्रों में नागरिक भागीदारी को बढ़ावा देकर शहरी-ग्रामीण डिजिटल विभाजन को कम करने में मदद की है।
  - कॉमन सर्विस सेंटर (CSCs) जैसी परियोजनाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग, स्वास्थ्य सेवा तथा सरकारी दस्तावेज़ जारी करने जैसी आवश्यक सेवाएँ प्रदान करती हैं।

निष्कर्ष:

भारत में सेवा वितरण, पारदर्शिता तथा नागरिक भागीदारी में सुधार के लिये ई-गवर्नेंस एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरा है। प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करने, पारदर्शिता बढ़ाने तथा नागरिक समन्वय को बढ़ावा देने के क्रम में प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर, ई-गवर्नेंस द्वारा सुशासन स्थापित करने के साथ लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को मज़बूत किया जा सकता है।

Q55. संवैधानिक सिद्धांतों को बनाए रखने में न्यायिक समीक्षा के महत्त्व पर चर्चा कीजिये। भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे में इसकी भूमिका को प्रदर्शित करने वाले उदाहरण दीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- न्यायिक समीक्षा/पुनर्वलोकन के बारे में बताते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- संविधान के सिद्धांतों को बनाए रखने में न्यायिक समीक्षा के महत्त्व पर चर्चा कीजिये।
- भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे में इसकी भूमिका पर प्रकाश डालने वाले उदाहरण प्रस्तुत कीजिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

न्यायिक समीक्षा भारत के संविधान में निहित सिद्धांतों को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण है। यह संविधान की सर्वोच्चता सुनिश्चित करने, राज्य के अंगों के बीच शक्ति संतुलन बनाए रखने तथा नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने के लिये एक तंत्र के रूप में कार्य करती है।

मुख्य भाग:

संवैधानिक सिद्धांतों को बनाए रखने में न्यायिक समीक्षा की भूमिका:

- **संवैधानिक सर्वोच्चता सुनिश्चित करना:**
  - न्यायिक समीक्षा से न्यायपालिका को विधायी एवं कार्यकारी कार्यों की संवैधानिकता की समीक्षा करने का अधिकार मिलता है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि विधि और नीतियाँ संविधान में निर्धारित सिद्धांतों के अनुरूप हैं।
    - उदाहरण के लिये, केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संसद संविधान की मूल संरचना को नहीं बदल सकती है, इस प्रकार इसकी सर्वोच्चता की पुष्टि होती है।
- **मौलिक अधिकारों की रक्षा:**
  - न्यायिक समीक्षा के प्राथमिक कार्यों में से एक संविधान द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकारों की रक्षा करना है।

- मेनका गांधी बनाम भारत संघ (1978) और के.एस. पुट्टास्वामी बनाम भारत संघ (2017) जैसे ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से न्यायपालिका ने मौलिक अधिकारों के दायरे का विस्तार करने के साथ राज्य एवं गैर-राज्य अभिकर्त्ताओं के खिलाफ उनके प्रवर्तन को सुनिश्चित करने में भूमिका निभाई।

भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे में भूमिका:

- **कार्यकारी और विधायी कार्यों पर नियंत्रण:**
  - न्यायिक समीक्षा से कार्यकारी और विधायी शाखाओं की शक्तियों पर नियंत्रण रहता है, जो उन्हें उनकी संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन करने से रोकती है।
    - उदाहरण के लिये, इंदिरा गांधी बनाम राज नारायण (1975) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने चुनाव की अखंडता को बनाए रखने में न्यायपालिका की भूमिका पर बल देते हुए, चुनावी कदाचार के आधार पर तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के चुनाव को शून्य घोषित कर दिया।
- **संघवाद की रक्षा करना:**
  - भारत के संघीय ढाँचे को न्यायिक समीक्षा के माध्यम से संरक्षित किया जाता है, क्योंकि न्यायपालिका केंद्र एवं राज्य सरकारों के बीच विवादों का फैसला करती है।
    - कर्नाटक राज्य बनाम भारत संघ (1977) जैसे मामलों ने सहकारी संघवाद को बढ़ावा देते हुए केंद्र एवं राज्यों की संबंधित शक्तियों को रेखांकित किया है।

जवाबदेहिता और सुशासन सुनिश्चित करना:

- **मनमाने कार्यों पर अंकुश लगाना:**
  - न्यायिक समीक्षा, सरकार की मनमानी कार्रवाइयों के खिलाफ निवारक के रूप में कार्य करती है, जिससे जवाबदेहिता एवं सुशासन को बढ़ावा मिलता है।
    - विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न को रोकने के लिये दिशा-निर्देश जारी किये, जिससे सरकार को कार्यस्थल पर सुरक्षा सुनिश्चित करने के क्रम में विधि निर्माण हेतु मजबूर होना पड़ा।
- **विधि के शासन को बढ़ावा देना:**
  - कानूनों की व्याख्या करके तथा संविधान के साथ उनकी अनुरूपता सुनिश्चित करके, न्यायिक समीक्षा द्वारा विधि के शासन को मज़बूत बनाने में भूमिका निभाई जाती है।
    - इसके उल्लेखनीय उदाहरणों में एस. आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) मामला शामिल है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत को बनाए रखते हुए राजनीतिक कारणों से राज्यों में राष्ट्रपति शासन लगाने को खारिज कर दिया।

निष्कर्ष:

न्यायिक समीक्षा संविधान के सिद्धांतों को बनाए रखने, सरकार की जवाबदेहिता सुनिश्चित करने, मौलिक अधिकारों की रक्षा करने तथा सुशासन को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जैसे-जैसे भारत का लोकतांत्रिक ढाँचा विकसित हो रहा है, संविधान में निहित न्याय, स्वतंत्रता, समानता एवं भाईचारे के आदर्शों को संरक्षित करने में न्यायिक समीक्षा का महत्त्व अपरिहार्य बना हुआ है।

Q56. भारतीय, अमेरिका और ब्रिटेन के संवैधानिक ढाँचे में शक्तियों के पृथक्करण, संघीय ढाँचे और न्यायिक पुनरावलोकन तंत्र की तुलना कीजिये तथा इनके बीच अंतर बताइये। इनके निहितार्थों का विश्लेषण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- भारत, अमेरिका और ब्रिटेन के संवैधानिक ढाँचे का परिचय देते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- भारत, अमेरिका और ब्रिटेन में शक्तियों के पृथक्करण, संघीय ढांचे और न्यायिक समीक्षा तंत्र की तुलना कीजिये।
- शक्तियों के पृथक्करण, संघीय ढाँचे और न्यायिक समीक्षा तंत्र के निहितार्थों का विश्लेषण कीजिये।
- उचित निष्कर्ष लिखिए।

परिचय:

विभिन्न देशों के संवैधानिक शासन में शक्तियों का पृथक्करण, संघीय संरचना और न्यायिक समीक्षा मूलभूत सिद्धांत हैं। भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका (US) और यूनाइटेड किंगडम (UK) में इन सिद्धांतों की अलग-अलग रूपरेखाएँ हैं, जिससे उनकी राजनीतिक प्रणाली और शासन को आकार मिलता है।

मुख्य भाग:

शक्तियों का पृथक्करण:

- **भारत:**
  - भारत का संविधान शक्तियों के सम्मिश्रण के साथ संसदीय लोकतंत्र की प्रणाली का प्रतीक है।
  - संविधान में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों के पृथक्करण की परिकल्पना की गई है, संसदीय प्रणाली के कारण कार्यपालिका एवं विधायिका के बीच काफी ओवरलैपिंग देखने को मिलती है।
  - राष्ट्रपति (जो राज्य का प्रमुख होता है) के पास कार्यकारी शक्तियाँ होती हैं, लेकिन वास्तविक कार्यकारी अधिकार प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद के पास होता है।

- **संयुक्त राज्य अमेरिका:**
  - अमेरिकी संविधान में विधायी, कार्यकारी और न्यायिक शाखाओं के बीच शक्तियों का स्पष्ट पृथक्करण है। संविधान में उल्लिखित प्रत्येक शाखा की अपनी अलग शक्तियाँ और जिम्मेदारियाँ हैं।
  - इस पृथक्करण को जाँच और संतुलन की प्रणाली द्वारा सुदृढ़ किया जाता है, जहाँ प्रत्येक शाखा को किसी एक शाखा को बहुत शक्तिशाली होने से रोकने के लिये अन्य शाखाओं की शक्तियों के विनियमन का अधिकार होता है।
- **यूके:**
  - अमेरिका के विपरीत, ब्रिटेन में कोई संहिताबद्ध संविधान नहीं है, लेकिन यह संसदीय संप्रभुता की प्रणाली के तहत कार्य करता है।
  - विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों के नाममात्र पृथक्करण के साथ शक्तियों का एकीकरण अधिक स्पष्ट है।
  - प्रधानमंत्री, जो सरकार का मुखिया होता है, विधायिका (हाउस ऑफ कॉमन्स) का सदस्य भी होता है। इससे कार्यपालिका एवं विधायिका के बीच की रेखा अस्पष्ट होती है।

संघीय संरचना:

- **भारत:**
  - भारत एक मज़बूत केंद्र सरकार वाला एक संघीय देश है। संविधान में संघ (केंद्रीय) सरकार और राज्य सरकारों के बीच शक्तियों के विभाजन का वर्णन है।
  - हालाँकि, भारतीय संघीय संरचना में केंद्रीकरण की ओर झुकाव है, जिसमें केंद्र सरकार के पास राज्यों की तुलना में अधिक शक्तियाँ हैं, विशेष रूप से रक्षा, विदेशी मामले और वित्त जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में।
- **संयुक्त राज्य अमेरिका:**
  - संयुक्त राज्य अमेरिका एक संघीय गणराज्य है जिसमें संघ सरकार और राज्य सरकारों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन है।
  - शक्तियों का यह विभाजन एक मज़बूत केंद्र सरकार के साथ राज्य की स्वायत्तता हेतु महत्त्वपूर्ण है।
- **यूके:**
  - यूके में सरकार की एकात्मक प्रणाली है, जिसका अर्थ है कि शक्ति राष्ट्रीय स्तर पर केंद्रित है, तथा स्थानीय संस्थाओं को थोड़ी ही स्वायत्तता प्राप्त है।
  - स्कॉटलैंड, वेल्स और उत्तरी आयरलैंड में अलग-अलग विधायी शक्ति की सरकारें हैं लेकिन अंतिम अधिकार अभी भी वेस्टमिंस्टर, यूके संसद के पास है।

न्यायिक समीक्षा की प्रणाली:

- **भारत:**
  - न्यायिक समीक्षा, भारत के संवैधानिक ढांचे का अभिन्न अंग है जो सर्वोच्च न्यायालय को विधायिका द्वारा पारित कानूनों की संवैधानिकता तथा कार्यपालिका द्वारा किये गए कार्यों की समीक्षा करने की शक्ति प्रदान करती है।
  - सर्वोच्च न्यायालय ने कई ऐतिहासिक फैसले दिये हैं जिन्होंने भारतीय लोकतंत्र तथा शासन की दिशा को आकार दिया है।
- **अमेरिका:**
  - अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट को मुख्य रूप से न्यायिक समीक्षा के अधिकार के कारण विश्व के सबसे शक्तिशाली न्यायिक निकायों में से एक माना जाता है।
  - न्यायालय के पास कॉन्ग्रेस द्वारा बनाए गए कानूनों या राष्ट्रपति द्वारा किये गए कार्यों को असंवैधानिक घोषित करने की शक्ति है।
  - यह शक्ति सरकार की अन्य शाखाओं पर नियंत्रण का कार्य करती है और यह सुनिश्चित करती है कि वे संविधान की सीमा के तहत कार्य करें।
- **यूके:**
  - भारत और अमेरिका के विपरीत, ब्रिटेन में न्यायिक समीक्षा के लिये स्पष्ट प्रावधानों वाला कोई संहिताबद्ध संविधान नहीं है।
  - हालाँकि, संसदीय संप्रभुता का सिद्धांत यूके के न्यायालयों को यूरोपीय संघ के कानून और मानवाधिकार पर यूरोपीय कन्वेंशन के साथ कानूनों की अनुकूलता की समीक्षा करने की अनुमति देता है।
  - इसके बावजूद, संसदीय सर्वोच्चता यूके के संवैधानिक ढाँचे की एक परिभाषित विशेषता बनी हुई है।

प्रभाव:

- **भारत:**
  - भारत के संसदीय लोकतंत्र में लचीलापन देखने को मिलता है लेकिन इससे जवाबदेहिता और कार्यपालिका के हाथों में शक्ति के संकेंद्रण से संबंधित मुद्दे पैदा हो सकते हैं।
  - संघीय ढाँचा में क्षेत्रीय स्वायत्तता के साथ केंद्रीय प्राधिकरण को संतुलित करने का प्रयास किया गया है, लेकिन अंतर-राज्य विवाद तथा केंद्र-राज्य संबंध जैसी चुनौतियाँ बनी रहती हैं।
- **अमेरिका:**
  - अमेरिका में, शक्तियों के स्पष्ट पृथक्करण तथा नियंत्रण एवं संतुलन की मज़बूत प्रणाली से राजनीतिक स्थिरता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा में योगदान मिला है।

- हालाँकि, सरकार की शाखाओं के बीच गतिरोध और ध्रुवीकरण प्रभावी शासन में बाधा बन सकता है।

- **यूके:**
  - यूके में शक्तियों का एकीकरण और संहिताबद्ध संविधान की कमी, मज़बूत कार्यकारी नेतृत्व प्रदान करती है, लेकिन इससे लोकतांत्रिक जवाबदेहिता और अधिकारों की सुरक्षा के बारे में चिंताएँ बढ़ती हैं, खासकर स्पष्ट न्यायिक समीक्षा प्रावधानों के अभाव में।

निष्कर्ष:

शक्तियों का पृथक्करण, संघवाद तथा न्यायिक समीक्षा के सिद्धांत संवैधानिक शासन के लिये मूलभूत हैं, उनका कार्यान्वयन भारत, अमेरिका और यूके में काफी भिन्न है। प्रत्येक देश की राजनीतिक व्यवस्था की मज़बूती और कमज़ोरियों का विश्लेषण करने के लिये इन मतभेदों एवं उनके निहितार्थों को समझना महत्त्वपूर्ण है।

Q57. द्विपक्षीय एवं वैश्विक समूहों में भारत की भागीदारी के इसके राष्ट्रीय हितों से संबंधित महत्त्व एवं प्रभाव पर उपयुक्त उदाहरणों सहित चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

निरंतर रूप से विकसित हो रहे वैश्विक परिदृश्य में भारत अपने राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित करने के लिये रणनीतिक रूप से द्विपक्षीय और वैश्विक समूहों के एक जटिल जाल को नेविगेट करता है। इन संघों के माध्यम से भारत अपने बढ़ते प्रभाव का लाभ उठाने और ऐसी साझेदारियाँ बनाने में सक्षम हुआ है जो इसके मूल मूल्यों एवं उद्देश्यों के अनुरूप हों।

द्विपक्षीय समूहों में भारत की भागीदारी का महत्त्व:

- **रणनीतिक साझेदारी सुरक्षित करना:** अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ चतुर्भुज सुरक्षा संवाद समुद्री सहयोग को बढ़ावा देता है तथा भारत-प्रशांत में संभावित विरोधियों को रोकता है।
  - वर्ष 2024 में **मालाबार नौसैनिक अभ्यास** ने इस बढ़ते सैन्य सहयोग को प्रदर्शित किया।
- **आर्थिक संबंधों को बढ़ावा देना: यूरोपीय मुक्त व्यापार संघ और संयुक्त अरब अमीरात (UAE)** के साथ भारत के हालिया मुक्त व्यापार समझौते तरजीही बाज़ार पहुँच प्रदान करते हैं, जिससे अगले पाँच वर्षों के भीतर द्विपक्षीय व्यापार में उल्लेखनीय वृद्धि होगी (भारत सरकार के अनुमान के अनुसार)।
- **तकनीकी सहयोग बढ़ाना:** वर्ष 2023 में लॉन्च किया गया **US-इंडिया क्रिटिकल एंड इमर्जिंग टेक्नोलॉजीज़ इनिशिएटिव (iCET)**, महत्त्वपूर्ण रूप से सुरक्षित, सुलभ और लचीली प्रौद्योगिकी पारिस्थितिकी तंत्र एवं मूल्य शृंखला का निर्माण करेगा।
- **संयुक्त अवसंरचना विकास: भारत-मध्य पूर्व-यूरोप आर्थिक गलियारा (IMEC)** भारत को खाड़ी के माध्यम से यूरोप से जोड़ेगा। जिसका उद्देश्य आर्थिक कनेक्टिविटी को बढ़ावा देना है।
- **सांस्कृतिक और शैक्षिक आदान-प्रदान: ब्रिक्स (ब्राज़ील, रूस, भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका)** समूह सांस्कृतिक एवं शैक्षिक आदान-प्रदान कार्यक्रमों को बढ़ावा देता है, यह लोगों से लोगों के बीच संबंध तथा आपसी समझ को बढ़ावा देता है।

वैश्विक समूहों का प्रभाव:

- **वैश्विक मानदंडों को आकार देना: अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन और वैश्विक जैव ईंधन गठबंधन** में भारत की नेतृत्वकारी भूमिका वैश्विक स्तर पर स्वच्छ ऊर्जा समाधानों को बढ़ावा देने के अपने प्रयासों का उदाहरण देती है, जो जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय एजेंडे को प्रभावित करती है।
- **बाज़ार पहुँच का विस्तार: विश्व व्यापार संगठन (WTO)** में सदस्यता भारत को निष्पक्ष व्यापार प्रथाओं पर बातचीत करने और अपने निर्यात के लिये व्यापक बाज़ारों तक पहुँच बनाने के लिये एक मंच प्रदान करती है।
- **वैश्विक चुनौतियों को संबोधित करना: विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)** में भागीदारी भारत को वैश्विक स्वास्थ्य सुरक्षा और महामारी संबंधी तैयारियों जैसे मुद्दों पर अन्य देशों के साथ सहयोग करने की अनुमति देती है।
- **सतत् विकास को बढ़ावा देना: जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौते** में भारत की सक्रिय भागीदारी ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और सतत् विकास लक्ष्यों को बढ़ावा देने के प्रति इसकी प्रतिबद्धता को दर्शाती है।
- **अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों को प्रभावित करना: ग्लोबल साउथ** के नेतृत्वकर्त्ता के रूप में भारत का बढ़ता प्रभाव इसे वित्तीय स्थिरता और ऋण प्रबंधन, जलवायु शमन आदि जैसे वैश्विक आर्थिक मुद्दों पर चर्चा को आकार देने की अनुमति देता है।

चुनौतियाँ और विचार:

- **प्रतिस्पर्द्धी हितों को संतुलित करना:** अमेरिका और रूस जैसी प्रमुख शक्तियों, जिनके परस्पर विरोधी हित हो सकते हैं, के साथ अच्छे संबंध बनाए रखना एक चुनौती हो सकती है।
  - यूक्रेन पर रूस के हमले की निंदा करने वाले संयुक्त राष्ट्र में हाल ही में हुए मतदान से भारत का अनुपस्थित रहना इस दिशा में संतुलनकारी कार्य का उदाहरण है।
- **व्यापार सौदों पर बातचीत:** शक्तिशाली आर्थिक गुटों के साथ जटिल व्यापार समझौतों में अनुकूल शर्तों पर बातचीत करना समय लेने वाला हो सकता है और इसके लिये सावधानीपूर्वक रणनीति बनाने की आवश्यकता होती है।

- यूरोपीय संघ के साथ व्यापार समझौते के लिये चल रही बातचीत इस चुनौती को उजागर करती है।

- **आंतरिक दबावों का प्रबंधन:** व्यापार उदारीकरण के लाभों के साथ घरेलू उद्योगों के हितों को संतुलित करना एक कठिन कदम हो सकता है।
  - भारत सरकार को फार्मास्यूटिकल्स जैसे कुछ क्षेत्रों के दबाव का सामना करना पड़ रहा है जो मुक्त व्यापार समझौतों से प्रभावित हो सकते हैं।

इन चुनौतियों से पार पाने के लिये भारत को STRIDE की आवश्यकता है:

- S- रणनीतिक कूटनीति: प्रतिस्पर्द्धी हितों को संतुलित करना
- T- व्यापार वार्ता: जटिल व्यापार सौदों को संभालना
- R- संबंध प्रबंधन: प्रमुख शक्तियों के साथ अच्छे संबंध बनाए रखना
- I - आंतरिक दबाव: घरेलू उद्योग की मांगों का प्रबंधन
- D- कूटनीतिक चपलता: वैश्विक गतिशीलता को नेविगेट करना
- E- आर्थिक रणनीति: व्यापार उदारीकरण के लिये रणनीति बनाना

इन व्यस्तताओं ने न केवल वसुधैव कुटुंबकम् के आदर्शों के माध्यम से दुनिया को एक परिवार मानने वाले **भारत की राजनयिक स्थिति को बढ़ाया है, बल्कि आर्थिक विकास, सुरक्षा और वैश्विक शासन जैसे क्षेत्रों में अपने राष्ट्रीय हितों की उन्नति** को भी सुविधाजनक बनाया है।

Q58. शासन में वैधानिक, नियामक तथा अर्द्ध-न्यायिक निकायों की भूमिकाओं एवं महत्त्व पर उदाहरण सहित चर्चा कीजिये तथा लोक प्रशासन के संबंध में उनके प्रभाव पर प्रकाश डालिये। (250 शब्द)

उत्तर :

प्रभावी लोकतंत्र **सुव्यवस्थित शासन तंत्र** पर निर्भर करता है। भारत में **विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका** से परे, वैधानिक, नियामक एवं अर्द्ध-न्यायिक निकायों का एक नेटवर्क लोक प्रशासन को आकार देने, नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करने तथा प्रणाली के भीतर नियंत्रण व संतुलन बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

वैधानिक निकाय:

- भूमिका: वे संसद या राज्य विधानसभाओं के एक अधिनियम द्वारा स्थापित होते हैं और संबंधित अधिनियमों से अपना अधिकार प्राप्त करते हैं।
  - इन निकायों को विशिष्ट कार्य और उत्तरदायित्व सौंपे गए हैं तथा उनकी शक्तियों को कानूनी ढाँचे के भीतर स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है।
  - **महत्त्व:** वे लोक प्रशासन में विशेष विशेषज्ञता लाते हैं, दक्षता में सुधार करते हैं और विधायी मंशा का पालन सुनिश्चित करते हैं।
  - **उदाहरण:**
    - **भारतीय रिज़र्व बैंक (भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934)**
    - **केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड (CBFC) (सिनेमैटोग्राफ अधिनियम, 1952)**
    - **राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993)**

नियामक निकाय:

- भूमिका: ये निकाय प्राय: वैधानिक निकायों के उपसमूह होते हैं जिन्हें किसी विशेष क्षेत्र के भीतर नियम बनाने और उनके कार्यान्वयन की देख-रेख करने का काम सौंपा जाता है। वे अनुपालन न करने पर जुर्माना लगा सकते हैं।
  - **महत्त्व:** नियामक निकाय समान अवसर सुनिश्चित करते हैं, उपभोक्ता हितों की रक्षा करते हैं और क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा देते हैं।
- **उदाहरण:**
  - **भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (TRAI)** दूरसंचार क्षेत्र को नियंत्रित करता है, टैरिफ निर्धारित करता है और निष्पक्ष प्रतिस्पर्द्धा सुनिश्चित करता है।
  - **भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (FSSAI)** खाद्य सुरक्षा एवं गुणवत्ता मानकों को नियंत्रित करता है।

अर्द्ध-न्यायिक निकाय:

- भूमिका: ये निकाय कार्यकारी और न्यायिक दोनों शाखाओं की विशेषताओं को जोड़ते हैं। वे नियमित न्यायालयों की तुलना में प्राय: सरलीकृत प्रक्रियाओं का पालन करते हुए, कानूनों एवं विनियमों से उत्पन्न होने वाले विवादों का निपटारा करते हैं।
- **महत्त्व:** वे विवादों के समाधान के लिये तीव्र और अधिक सुलभ मार्ग प्रदान करते हैं, नियमित न्यायालयों में भीड़ को कम करते हैं तथा त्वरित न्याय सुनिश्चित करते हैं।
- **उदाहरण:**
  - **राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (NGT)** पर्यावरणीय विवादों पर निर्णय देता है, जबकि **राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग** उपभोक्ता शिकायतों का समाधान करता है।

लोक प्रशासन पर प्रभाव:

- **उन्नत विशेषज्ञता और सूचित निर्णय लेना:** ये निकाय जटिल मुद्दों से निपटने के लिये विशेष ज्ञान का लाभ उठाते हैं, जिससे लोक प्रशासन के भीतर डेटा-संचालित निर्णय लेने में मदद मिलती है।
  - उदाहरण के लिये, **विश्व बैंक** ने **वित्त वर्ष 2024** के लिये भारतीय विकास की अनुमानित दर 6.3% रखी है। मुद्रास्फीति

को नियंत्रित करने और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से RBI ब्याज दरों को विनियमित करने के लिये इन डेटा-संचालित रणनीतियों का उपयोग करता है।

- **सुव्यवस्थित प्रक्रियाएँ और बेहतर सेवा वितरण:** वैधानिक एवं नियामक निकाय **स्पष्ट दिशा-निर्देश और प्रक्रियाएँ** स्थापित करते हैं, जिससे सरकारी एजेंसियों द्वारा सेवा वितरण में मापने योग्य सुधार होता है।
  - **उदाहरण:** हाल ही में FSSAI ने स्पष्ट किया है कि **'हेल्थ ड्रिंक'** शब्द **FSS अधिनियम 2006** के तहत कहीं भी परिभाषित या मानकीकृत नहीं है।
- **जवाबदेही और अनुपालन को बढ़ावा देना:** नियामक निकाय मानक निर्धारित करते हैं, अनुपालन लागू करते हैं और हितधारकों को उनके कार्यों के लिये जवाबदेह बनाते हैं, जिससे **नैतिक प्रथाओं** में स्पष्ट रूप से सुधार होता है।
- **पारदर्शिता और नागरिक केंद्रितता को बढ़ावा देना:** अर्द्ध-न्यायिक निकाय नागरिकों को शिकायतों का समाधान करने के लिये सुलभ मंच प्रदान करते हैं, जिससे एक अधिक पारदर्शी और उत्तरदायी लोक प्रशासन प्रणाली का निर्माण होता है।
  - दिल्ली के गाज़ीपुर लैंडफिल/भराव क्षेत्र में भीषण आग लगने के बाद, नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने स्वत: संज्ञान लिया और शहरों में डंप साइटों को **"टाइम बम"** के रूप में परिभाषित किया।
- **अनुकूलनशीलता और उभरती चुनौतियों का समाधान:** ये निकाय नई चुनौतियों और तकनीकी प्रगति से निपटने के लिये नियमों को अनुकूलित एवं विकसित कर सकते हैं, उभरते मुद्दों से स्पष्ट रूप से निपट सकते हैं।
  - **एल्गोरिथम ट्रेडिंग** के लिये **SEBI** के हालिया नियम एक नई चुनौती हेतु डेटा-संचालित प्रतिक्रिया हैं।

Q59. भारत निर्वाचन आयोग की कार्यप्रणाली पर वर्ष 1990 के बाद के चुनाव सुधारों के प्रभाव तथा लोकतांत्रिक शासन में उनके निहितार्थ का विश्लेषण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- भारत जैसे लोकतंत्र में चुनाव सुधारों के महत्त्व के साथ शुरुआत कीजिये।
- भारत निर्वाचन आयोग (ECI) की कार्यप्रणाली पर चुनाव सुधारों के प्रभावों का उल्लेख कीजिये।
- लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था पर चुनाव सुधारों का प्रभाव बताइये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

चुनाव सुधार देश के लोकतांत्रिक ढाँचे को आकार देने, चुनावी प्रक्रिया की अखंडता, पारदर्शिता और विश्वसनीयता को प्रभावित करने में महत्त्वपूर्ण हैं।

भारत में वर्ष 1990 के बाद के युग में भारत निर्वाचन आयोग (ECI) की कार्यप्रणाली और समग्र लोकतांत्रिक शासन को मज़बूत करने के उद्देश्य से दूरगामी सुधारों की एक शृंखला के साथ एक ऐतिहासिक परिवर्तन देखा गया।

मुख्य भाग:

वर्ष 1990 के बाद के चुनाव सुधारों का प्रभाव:

भारत निर्वाचन आयोग की कार्यप्रणाली पर:

- **इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनें (EVM):** वर्ष 1992 में संसद ने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में धारा 61A शामिल की और EVM के उपयोग को वैध बनाने एवं चुनावों में उनके उपयोग का मार्ग प्रशस्त करने वाले नियम बनाए। ECI ने वर्ष 1998 में व्यापक रूप से EVM का उपयोग शुरू किया।
  - जयललिता और अन्य बनाम भारत निर्वाचन आयोग (2002) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि चुनावों में EVM का इस्तेमाल संवैधानिक रूप से वैध है।
- **वोटर-वेरिफिएबल पेपर ऑडिट ट्रेल सिस्टम (VVPAT):** वर्ष 2013 में केंद्र सरकार ने संशोधित चुनाव संचालन नियम, 1961 को अधिसूचित किया, जिससे ECI को EVM के साथ VVPAT का उपयोग करने में सक्षम बनाया गया।
  - ADR बनाम भारत निर्वाचन आयोग (2024) में सर्वोच्च न्यायालय ने विधानसभा निर्वाचन क्षेत्रों में यादृच्छिक रूप से 5% सत्यापन के साथ VVPAT के उपयोग की वैधता को बरकरार रखा।
- **चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति:** मुख्य चुनाव आयुक्त और अन्य चुनाव आयुक्त (नियुक्ति, सेवा की शर्तें व कार्यालय की अवधि) अधिनियम 2023 ने चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति के लिये एक चयन समिति की स्थापना की, जिसमें प्रधानमंत्री, एक केंद्रीय कैबिनेट मंत्री एवं विपक्ष के नेता शामिल हैं।
  - हालाँकि सर्वोच्च न्यायालय ने अनूप बरणवाल बनाम भारत संघ मामले (2023) में चुनाव सुधार पर दिनेश गोस्वामी समिति (1990) और विधि आयोग की 255वीं रिपोर्ट (2015) की सिफारिशों पर ज़ोर दिया।
  - इन रिपोर्टों में मुख्य चुनाव आयुक्त और अन्य चुनाव आयुक्त की नियुक्ति के लिये प्रधानमंत्री, भारत के मुख्य न्यायाधीश एवं विपक्ष के नेता के साथ एक समिति का प्रस्ताव रखा गया।

- **लोकतांत्रिक शासन के संदर्भ में:**
  - **इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर समय का आवंटन:** चुनावों के दौरान इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर समान समय के आवंटन को लेकर ईसीआई अधिसूचना, 2003 ने राजनीतिक चर्चा को लोकतांत्रिक बना दिया है, जिससे विविध आवाज़ों और दृष्टिकोणों को मतदाताओं तक पहुँचने की अनुमति मिल गई है।
    - इस प्रावधान ने पक्षपातपूर्ण मीडिया के प्रभाव को कम कर दिया है, मतदाताओं के बीच सूचित निर्णय लेने को बढ़ावा दिया है।
  - **नोटा (उपरोक्त में से कोई नहीं):** नोटा को वर्ष 2013 में चुनावों में पेश किया गया था, जो मतदाताओं को मतपत्र की गोपनीयता बनाए रखते हुए किसी भी उम्मीदवार को वोट देने से परहेज़ करने की क्षमता प्रदान करता है।
    - सर्वोच्च न्यायालय ने चुनाव आयोग को मतपत्रों और इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों दोनों में उपरोक्त में से कोई नहीं (नोटा) विकल्प शामिल करने का निर्देश दिया।
  - **एग्जिट पोल पर प्रतिबंध:** वर्ष 2009 का एक प्रावधान लोकसभा और राज्य विधानसभा चुनावों के दौरान अंतिम चरण का मतदान समाप्त होने तक एग्जिट पोल आयोजित करने एवं प्रकाशित करने पर प्रतिबंध लगाता है।
    - एग्जिट पोल मतदाता के व्यवहार को प्रभावित कर सकते हैं, जिससे चुनाव के शुरुआती चरण में एक दल के हावी होने पर रुचि-आधारित मतदान से जन-आधारित मतदान की ओर बदलाव हो सकता है।
  - **मतदाता भागीदारी और आत्मविश्वास में वृद्धि:** राष्ट्रीय मतदाता सेवा पोर्टल और मतदाता हेल्पलाइन जैसे मतदाता सुविधा उपायों ने मतदाता जागरूकता एवं सहभागिता में सुधार किया है, जिससे मतदान प्रतिशत में वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष:

वर्ष 1990 के बाद के चुनाव सुधारों ने ECI की कार्यप्रणाली में उल्लेखनीय वृद्धि की है, जिससे यह स्वतंत्र, निष्पक्ष और विश्वसनीय चुनाव के सिद्धांतों को बनाए रखने के लिये सशक्त हो गया है। हालाँकि इन सुधारों का लोकतांत्रिक शासन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, लेकिन मौजूदा चुनौतियाँ एवं चिंताएँ जैसे कार्यकारी हस्तक्षेप, चुनावों में धन की शक्ति तथा तकनीकी कमज़ोरियाँ बनी हुई हैं, जिन्हें भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे को और अधिक मज़बूत करने के लिये संबोधित करने की आवश्यकता है।

Q60. "न्यायिक अतिरेक लोकतंत्र के विचार के प्रतिकूल हो सकता है"। दिये गए कथन का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:
- न्यायिक अतिरेक की अवधारणा को बताते हुए उत्तर की शुरुआत कीजिये।
- दिए गए कथन के समर्थन में तर्क दीजिये।
- दिए गए कथन के विरोध में तर्क देते हुए उचित निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

न्यायिक अतिरेक एक ऐसा शब्द है जिसका प्रयोग आमतौर पर तब किया जाता है जब ऐसा लगता है कि न्यायपालिका ने अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण कर लिया है। यह तब होता है जब न्यायपालिका सरकार के विधायी या कार्यकारी अंगों की उचित कार्यप्रणाली में हस्तक्षेप करना शुरू कर देती है, यानी न्यायपालिका अपने स्वयं के कार्य से परे कार्यकारी एवं विधायी कार्यों में हस्तक्षेप करती है।

मुख्य भाग:

न्यायिक अतिरेक से लोकतंत्र कमज़ोर होता है, इसके समर्थन में तर्क:

- **विधायी कार्यों में हस्तक्षेप:**
  - भारतीय संसद कानून बनाने वाली प्राथमिक संस्था है। जब न्यायालय लोकतांत्रिक तरीके से पारित कानूनों को रद्द करती हैं तो इससे विधायिका के अधिकार के साथ लोकतंत्र की भावना कमज़ोर होती है।
- **शक्ति का संकेंद्रण:**
  - इससे न्यायाधीशों के हाथों में शक्ति केंद्रित होने से जवाबदेहिता के बारे में चिंताएँ उत्पन्न होती हैं। संसद के निर्वाचित सदस्यों (सांसदों) के विपरीत, न्यायाधीश सीधे जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होते हैं।
    - **उदाहरण:** राजमार्गों पर शराब की बिक्री में प्रतिबंध लगाने या धार्मिक प्रथाओं को विनियमित करने जैसे मुद्दों में न्यायपालिका के हस्तक्षेप को न्यायिक अतिरेक के रूप में देखा जा सकता है, क्योंकि ये ऐसे मामले हैं जिन्हें विधि निर्माण एवं सार्वजनिक विमर्श के माध्यम से हल किया जा सकता है।
- **विशेषज्ञता की कमी:**
  - न्यायाधीशों के पास आवश्यक नहीं है कि आर्थिक या सामाजिक मुद्दों पर जटिल नीतिगत निर्णय लेने के लिये आवश्यक विशेषज्ञता हो। इससे अनपेक्षित परिणामों के साथ अतार्किक नियम बन सकते हैं।
    - उदाहरण: मोहित मिनरल्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (2022) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया कि GST परिषद के फैसले राज्य सरकारों पर बाध्यकारी नहीं हैं।

- इस निर्णय से व्यवसाय बाधित होने एवं कर प्रशासन में जटिलता आने के साथ GST के उचित लाभों को प्राप्त करने में व्यवधान हो सकता है।

न्यायिक अतिरेक से लोकतंत्र कमज़ोर होता है, इसके विपक्ष में तर्क:

- **मूल अधिकारों की रक्षा:** न्यायपालिका, संविधान में निहित मौलिक अधिकारों के संरक्षक के रूप में कार्य करती है। इन अधिकारों का उल्लंघन करने वाले कानूनों को रद्द करने की इसकी शक्ति व्यक्तियों को मनमाने सरकारी कृत्यों से बचाने के लिये महत्त्वपूर्ण है।
  - **उदाहरण:** उन्नीकृष्णन जेपी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (1993) जैसे ऐतिहासिक निर्णयों से अनुच्छेद 21 के दायरे का विस्तार होने के साथ शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार घोषित किया गया।
    - यह निर्णय आगे चलकर शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 के पारित होने का आधार बना।
- **सामाजिक न्याय को बढ़ावा मिलना:** न्यायपालिका समानता को बढ़ावा देने तथा वंचित समूहों की रक्षा करने वाले कानूनों की व्याख्या करके सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।
  - **उदाहरण:** ऐतिहासिक रूप से हाशिये पर स्थित समुदायों के लिये आरक्षण नीतियों को बढ़ावा देने वाले निर्णय सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने में न्यायपालिका की भूमिका को उजागर करते हैं।
- **विधायिका की निष्क्रियता:** कभी-कभी न्यायिक अतिरेक का संबंध महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर कार्रवाई करने में विधायिका की विफलता से उत्पन्न होता है। इससे ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है, जहाँ न्यायपालिका इस कमी को पूरा करने के संदर्भ में भूमिका निभा सकती है, जिससे उचित हस्तक्षेप की सीमाएँ धुँधली हो जाती हैं।
  - **उदाहरण:** अनूप बरनवाल बनाम भारत संघ (2023) मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले से पूर्व, मुख्य चुनाव आयुक्त और अन्य चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा केंद्र सरकार की सिफारिश पर की जाती थी।
    - हालाँकि संविधान के अनुच्छेद 324(2) के अनुसार संसद को इस संबंध में कानून बनाने का अधिकार मिला है।
    - इस फैसले के बाद, संसद ने चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति से संबंधित एक कानून पारित किया।

निष्कर्ष:

न्यायिक अतिरेक वास्तव में भारतीय लोकतंत्र के लिये खतरा बन सकता है। हालाँकि पूरी तरह से नियंत्रित न्यायपालिका की अधिकारों के रक्षक एवं सत्ता पर नियंत्रण के रूप में भूमिका कमजोर होती है। शक्तियों के पृथक्करण का सम्मान करते हुए न्यायिक सक्रियता एवं अतिरेक के बीच संतुलन बनाना एक जीवंत भारतीय लोकतंत्र के लिये आवश्यक है।

Q61. धन शोधन निवारण अधिनियम के तहत प्रवर्तन निदेशालय की शक्तियों के संबंध में हाल ही में आए सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के प्रमुख पहलुओं तथा उसके निहितार्थों का विश्लेषण कीजिये। (250 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- ED और उसके PMLA लागू करने के अधिदेश का परिचय लिखिये।
- उच्चतम न्यायालय के हालिया फैसले के प्रमुख पहलुओं का वर्णन कीजिये।
- विभिन्न निर्णयज विधियों का हवाला देते हुए इसके निहितार्थों का उल्लेख कीजिये।
- पाठ्यक्रम से संबंधित शब्दों का उपयोग करते हुए निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

प्रवर्तन निदेशालय (ED) एक बहु-विषयक एजेंसी है, जो मनी लॉन्ड्रिंग और विदेशी मुद्रा उल्लंघन की जाँच के लिये ज़िम्मेदार है।

- यह अपराध से अर्जित संपत्तियों का पता लगाकर, संपत्तियों को अस्थायी रूप से कुर्क करके और अपराधियों पर मुकदमा चलाकर धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 (PMLA) के प्रावधानों को लागू करता है।

मुख्य भाग:

धन शोधन निवारण अधिनियम के तहत प्रवर्तन निदेशालय की शक्तियों पर उच्चतम न्यायालय के हालिया फैसले के महत्त्वपूर्ण निहितार्थ हैं:

फैसले के प्रमुख पहलू:

- **अभिरक्षा की शक्तियों पर सीमा:** उच्चतम न्यायालय ने फैसला सुनाया कि विशेष न्यायालय द्वारा शिकायत का संज्ञान लेने के बाद ED, PMLA की धारा 19 के तहत किसी आरोपी को गिरफ्तार नहीं कर सकती है।
  - यह किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने की ED की शक्ति को कम कर देता है और आरोपी को PMLA प्रावधानों के संभावित दुरुपयोग से बचाता है।
  - यह विधि सम्यक प्रक्रिया को बढ़ावा देता है और सुनिश्चित करता है कि गिरफ्तारियाँ न्यायिक जाँच के अधीन हैं।
- **हिरासत में पूछताछ:** यदि ED अग्रिम जाँच के लिये आरोपी की हिरासत चाहती है, तो उसे विशेष न्यायालय में आवेदन करना होगा और हिरासत में पूछताछ की आवश्यकता को उचित ठहराना होगा।

- न्यायालय केवल तभी हिरासत प्रदान करेगा, जब वह संतुष्ट हो कि इसकी आवश्यकता है, भले ही आरोपी को प्रारंभ में गिरफ्तार नहीं किया गया हो।
- यह सुरक्षा अनुचित हिरासत में पूछताछ को रोकती है और आरोपी के अधिकारों का सम्मान करती है।

- **ज़मानत संबंधी प्रावधान:** निर्णय यह स्पष्ट करते हैं कि एक आरोपी जो समन के अनुसार न्यायालय के समक्ष पेश होता है, उसे CrPC की धारा 437 के तहत नियमित ज़मानत के लिये आवेदन करने की आवश्यकता नहीं है।
  - यह आरोपी को PMLA के तहत ज़मानत के लिये कड़ी दोहरी शर्तों से राहत प्रदान करता है और अधिक संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करता है।

आशय:

- **व्यक्तिगत स्वतंत्रता और निष्पक्ष प्रक्रिया को कायम रखना:** निकेश ताराचंद शाह मामले (वर्ष 2017) का निर्णय निर्धारित सिद्धांतों को बरकरार रखता है, जहाँ उच्चतम न्यायालय ने माना था कि वैध कानून द्वारा स्थापित निष्पक्ष, न्यायसंगत तथा उचित प्रक्रिया से परे व्यक्तिगत स्वतंत्रता में कटौती नहीं की जा सकती है।
- **न्यायिक निगरानी और सुरक्षा सुनिश्चित करना:** यह विजय मदनलाल चौधरी मामले (2022) के अनुरूप है, जिसमें PMLA के तहत मनमानी अभिरक्षा के खिलाफ न्यायिक निगरानी और सुरक्षा उपायों की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया था।
- **संज्ञान के बाद अभिरक्षा शक्तियों को सीमित करना:** संज्ञान के बाद ED की गिरफ्तारी की शक्तियों को सीमित करके, निर्णय पंकज बंसल मामले (वर्ष 2023) में उजागर किये गए मुद्दे को संबोधित करता है, जहाँ उच्चतम न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़ा और गिरफ्तारी से अंतरिम सुरक्षा प्रदान करनी पड़ी।
- **ज़मानत प्रणाली में विफलताओं को संबोधित करना:** यह फैसला सतेंद्र कुमार अंतिल मामले (वर्ष 2022) में उठाई गई चिंताओं को प्रतिबिंबित करता है, जहाँ उच्चतम न्यायालय ने विचाराधीन कैदियों के मुद्दे को पहचानने और ज़मानत देने में देश की ज़मानत प्रणाली की विफलताओं को स्वीकार किया था।
  - राजस्थान राज्य बनाम बालचंद (वर्ष 1977) मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह सिद्धांत स्थापित किया कि ज़मानत नियम है और जेल अपवाद।
- **जाँच शक्तियों और वैयक्तिक अधिकारों को संतुलित करना:** यह निर्णय जाँच शक्तियों और वैयक्तिक अधिकारों के बीच संतुलन बनाता है जैसा कि वर्तमान भारत के मुख्य न्यायाधीश ने उल्लेख करते हुए रेखांकित किया है कि ''इस संतुलन का मूल' उचित प्रक्रिया को बनाए रखने की आवश्यकता है।
- **शीघ्र जाँच पर संभावित प्रभाव:** यह जटिल मनी लॉन्ड्रिंग मामलों में शीघ्र जाँच करने की ED की क्षमता को प्रभावित कर सकता है।

निष्कर्ष:

उच्चतम न्यायालय का फैसला PMLA के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करते हुए सम्यक प्रक्रिया, निष्पक्षता और वैयक्तिक स्वतंत्रता के सिद्धांतों को बनाए रखने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। यह एक संवैधानिक प्रहरी के रूप में न्यायपालिका की भूमिका को मज़बूत करता है और जाँच शक्तियों एवं मौलिक अधिकारों के बीच उचित संतुलन बनाने के लिये महत्त्वपूर्ण मिसाल कायम करता है।

Q62. भारतीय प्रशासनिक प्रणाली में पारदर्शिता तथा जवाबदेहिता सुनिश्चित करने में केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC) की भूमिका पर चर्चा कीजिये। (150 शब्द)

उत्तर :

हल करने का दृष्टिकोण:

- CVC और संथानम समिति का परिचय लिखिये।
- पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देने में CVC की भूमिका का वर्णन कीजिये।
- तद्नुसार निष्कर्ष लिखिये।

परिचय:

- केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC) की स्थापना वर्ष 1964 में भ्रष्टाचार निवारण पर संथानम समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप की गई थी।
- यह भारत का सर्वोच्च सरकारी निकाय है, जो देश के लोक प्रशासन में ईमानदारी, पारदर्शिता और जवाबदेहिता को बढ़ावा देने के लिये ज़िम्मेदार है।

मुख्य भाग:

केंद्रीय सतर्कता आयोग की भूमिका:

- **जाँच और पूछताछ:** भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत केंद्र सरकार और उसके अधिकारियों के लोक सेवकों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच का कारण बनता है, जैसा कि विनीत नारायण एवं अन्य बनाम भारत संघ (वर्ष 1998) मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया था।
  - अखिल भारतीय सेवाओं, समूह 'A' अधिकारी और केंद्र सरकार के अधिकारी के निर्दिष्ट स्तर के अधिकारियों के खिलाफ शिकायतों की जाँच करता है।
- **निरीक्षण और अधीक्षण:** भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत अपराधों की जाँच के संबंध में दिल्ली विशेष पुलिस प्रतिष्ठान (CBI) के कामकाज का अधीक्षण करता है।

- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत अभियोजन की स्वीकृति के लिये लंबित आवेदनों की प्रगति की निगरानी करता है।

- **सलाहकार और नियामक भूमिका:** केंद्र सरकार और उसके अधिकारियों को संदर्भित मामलों पर सलाह देता है।
  - केंद्रीय सेवाओं और अखिल भारतीय सेवाओं से संबंधित सतर्कता एवं अनुशासनात्मक मामलों को नियंत्रित करने वाले नियम तथा विनियम बनाने में केंद्र सरकार के साथ परामर्श करता है।
- **मुखबिरों की सुरक्षा और शिकायतों का निपटान:** जनहित प्रकटीकरण और मुखबिरों की सुरक्षा संकल्प के तहत प्राप्त शिकायतों पर विचार करता है तथा उचित कार्रवाई की सिफारिश करता है।
- **नियुक्तियाँ एवं चयन समितियाँ:** केंद्रीय सतर्कता आयुक्त प्रवर्तन निदेशक की नियुक्ति और प्रवर्तन उप निदेशक के स्तर से ऊपर की नियुक्तियों के लिये अधिकारियों की सिफारिश करने के लिये ज़िम्मेदार चयन समितियों के अध्यक्ष के रूप में कार्य करता है।

निष्कर्ष:

अपने निर्धारित कार्यों का पालन करते हुए, CVC भारतीय प्रशासनिक प्रणाली के भीतर पारदर्शिता, ईमानदारी और जवाबदेही को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वास्तव में यह एक महत्त्वपूर्ण प्रहरी के रूप में कार्य करता है, जो सुशासन सुनिश्चित करता है तथा जनता के विश्वास में वृद्धि करता है।